प्रेम है द्वार प्रभु का

भय या प्रेम?

मनुष्य जाति भय से, चिंता से, दुख और पीड़ा से आक्रांत है, और पांच हजार वर्षों से–आज ही नहीं। जब आज ऐसी बात कह जाती है। कि मनुष्यता भय से, चिंता से, तनाव से, अशांति से भर गई है तो ऐसा भ्रम पैदा होता है जैसे पहले लोग शांत थे, आनंदित थे।

यह बात शत प्रतिशत असत्य है कि पहले लोग शांत थे और चिंता रहित थे। आदमी जैसा आज है हमेशा था। ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध लोगों को समझा रहे थे, शांत ह ोने के लिए। अगर लोग शांत थे तो शांति की बा समझाने की क्या जरूरत थी? पांच हजार वर्ष पहले उपनिषद के ऋषि भी लोगों को समझा रहे थे, आनंदित होने के ि लए। लोगों को समझा रहे थे दुख से मुक्त होने के लिए। लोगों को समझा रहे थे प्रेम करने के लिए। अगर लोग प्रेमपूर्ण थे और शांत थे तो उपनिषद के ऋषि पागल रहे होंगे। किसको समझा रहे थे।

दुनिया में अब तक ऐसी एक भी पुरानी से पुरानी किताब नहीं है जो यह न कहती ह ो कि आज का के लोग अशांत हो गए हैं। मैं छह हजार वर्ष पुरानी चीन की एक कि ताब की भूमिका पढ़ रहा था। उस भूमिका में लिखा है कि आजकल के लोग अशांत है, नास्तिकता हैं, बहुत बुरे हो गए हैं। पहले के लोग अच्छे थे। छह हजार साल पहले की किताब कहती है पहले के लोग अच्छे थे। ये पहले के लोग कब थे? ये पहले लो गों की बात, एक कल्पना (ऊलजी) और सपने से ज्यादा नहीं है। आदमी हमेशा से अ शांत रहा है और इसलिए अगर हम यह समझ लें कि आज अशांत हैं, आज भय आ क्रांत हैं, आज चिंतित और दुखी हैं तो हम जो भी निदान खोजेंगे, वह गलत होगा। आज तक की पूरी मनुष्यता किन्हीं अर्थों में गलत रही है, भ्रांत रही है। केवल आज का ही आदमी गलत अपनी गलत नहीं है। आज तक की पूरी मनुष्यता ही कुछ गलत रही है। और उसने अपनी गलती को सुधारने के लिए कुछ भी किया है उससे गलती मिटी नहीं, और बढ़ती चली गई।

मनुष्य हमेशा से भयभीत था और है। भय (थमंत) के आधार पर उसका सारा जीवन खड़ा हुआ है। जब वह मंदिरों में प्रार्थना करता है तब भी भय के कारण। उसने जो भगवान गढ़ रखे हैं वह भय से ही उत्पन्न हुए हैं। जब राजधानियों में लोग पदों की आकांक्षा करते हैं, बड़े पदों पर पहुंचना चाहते हैं तब भी भय के ही कारण। क्योंकि जितने बड़े पद पर कोई होता है उतनी सत्ता और शक्ति उसके हाथ में होती है, उत ना भय कम मालूम होता है। इस आशा में आदमी दौड़ता है, दौड़ता है। चंगेज, तैमूर नेपोलियन, सिकंदर, हिटलर और स्टेलिन सभी भयभीत लोग हैं। सभी घबराएं हुए लोग हैं। सभी डरे हुए लोग हैं। उस भय से बचने के लिए बड़ी ताकत हाथ में हो, इ सकी चेष्टा में लगे हुए हैं। धन की जो खोज कर रहा है वह भी भयभीत आदमी है। धन से सुरक्षा (एमबनतपजल) मिल सकेगी इस आशा में वह धन को इकट्ठा करता चला जा रहा है।

मंदिरों में प्रार्थना करने वाला, राजधानियों में यात्रा करने वाला, धन की तिजोरियां को मरने वाला, ये सभी भय के आधार पर ही हो जी रहे हैं। वे,—जिन्हें आप संन्यास ी समझते हैं, जिन्हें आप समझते है कि परमात्मा के मार्ग पर चले गए लोग हैं, शाय द आपको पता न हो कि वे भी किसी आंतरिक भय के कारण ही उस यात्रा में संलग न हो गए हैं।

जीसस क्राइस्ट एक गांव से निकले थे। उन्होंने गांव की एक सड़क पर कोई पंद्रह बीस लोगों को रोते हुए, छाती पीटते हुए, उदास बैठे हुए देखा। उन्होंने पूछा तुम्हें यह क या हो गया है? किसने तुम्हारी यह हालत की है? उन पंद्रह बीस लोगों ने चेहरे ऊप र उठाये। उनके मुर्झाये हुए चेहरे—जैसे मौत उनके सामने खड़ी हो। उन्होंने कहा, नर्क की बात सुनकर हम इतने भयभीत हो गए हैं।

इस दुनिया में जितने धार्मिक लोग दिखाई पड़ते हैं इनमें से कोई भी मुश्किल से धार्मि क होगा। सौ में से निन्यानबे लोग नर्क के भय के कारण परेशान हैं या स्वर्ग के प्रलो भन के कारण, वैसे दोनों एक ही बातें। लोभ और भय एक ही सिक्के के दो पहलू हैं । भयभीत आदमी लोभी होता है क्योंकि सोचता है इतना मिल जा इतना मिल जाए। धन मिल जाए, पद मिल जाए, भगवान मिल जाए, स्वर्ग मिल जाए तो मैं दुख से ब च जाऊं, चिंता से बच जाऊं, पीड़ा से बच जाऊं।

मैं आप से यह कहना चाहता हूं कि हमने आज तक जो भी किया है उसके केंद्र में भ य है। हमारे राष्ट्र, हमारी देश भक्ति, हमारी राजनीति, हमारी फौजें सब हमारे भय पर खड़ी हुई हैं। हमारे देश, हमारी कौमें सब भय पर खड़ी हुई हैं। आकाश में लहरा ते हुए हमारे झंडे सब भय से खड़े हुए हैं। हम सब दूसरे से भयभीत हैं। जिस दिन दु नया में कोई भय नहीं रहेगा उस दिन दुनिया में कोई जाति नहीं रह जाएगी, कोई दे श नहीं रह जाएगा। उस दुनिया में राजनीति का उतना ही मूल्य होगा जितना और सारी संस्थाओं का होता है। राजनीति इतनी मूल्यवान नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ क ी इतनी प्रतिष्ठा नहीं रह जाएगी। राजनीतिज्ञ की प्रतिष्ठा भय के कारण है।

एडाल्फ हिटलर ने कहा है कि अगर किसी को किसी कौम की बागडोर अपने हाथ में लेनी हो तो पहला काम यह है कि उस कौम को भयभीत कर दो। उसे घबड़ा दो। चीन का खतरा है। पाकिस्तान का खतरा है। ऐसा कोई भय पैदा कर दो। वह भयभी त हो जाए तो आनी सब बागडोर आपके हाथ में दे देगी। सारी दुनिया की नेतागिरी सारी दुनिया की लीडरशिप मनुष्य को भयभीत करने के ऊपर आधारित है। सारी गुरु डम—यह हिंदू, मुसलमानों, ईसाइयों के पोप पादरी, शंकराचार्य—यह सारी गुरुडम भय पर आधारित है। आदमी को भयभीत कर दो फिर वह पैर पकड़ लेगा और कहेगा, मुझे मार्ग बताओ, मुझे बचाओ।

आज तक मनुष्य के जीवन को भय के केंद्र पर ही खड़ा रखा गया है। दुनिया का को ई शोषण चाहे वह शोषण राजनीति का हो, चाहे वह शोषण धर्मनीति का हो, चाहे वह शोषण धन का हो, चाहे वह शोषण शरीर का हो और चाहे मन को हो, दुनिया का कोई शोषक नहीं चाहता कि आदमी भय मुक्त हो जाए। क्योंकि जिस दिन नहीं ह

ोगा उस दिन शोषण की संभावना भी समाप्त हो जाती है। आज तक मनुष्य जाति को अभय में प्रतिष्ठित करने का कोई उपाय नहीं किया गया। लेकिन हम कहेंगे कि नहीं, चेष्टाएं तो की गई हैं, निर्भय लोग पैदा किए गए हैं। हम फौजों में सैनिकों को निर्भय बनाते हैं। हम उन्हें हिम्मतवर बनाते हैं, शहीद हुए हैं, सिपाही हुए हैं, बड़े बड़े बहादुर लोग हुए हैं। लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं कि निर्भीकता और अभय में बुनियादी फर्क है। अभय में और भय की स्थिति में भी जान को लगा देने में बुनियादी फर्क है।

एक सैनिक अभय को उपलब्ध नहीं होता सिर्फ उसकी बुद्धि को जड़ किया जाता है। उसे जड़ता (जनचपकपजल) सिखाई जाती है। उसकी संवेदना कम की जाती है ताकि उसे भय का बोध न हो। जड़ बुद्धि के लोग भयभीत नहीं होते। भय का अनुभव न हो, इसके लिए बुद्धि की क्षमता को कम किया जाता है। इसलिए सैनिक को हम वर्षों तक लेफ्ट राइट, आगे घूमो, पीछे घूमो, बाएं घूमो, दाएं घूमो, इस तरह की व्यर्थ अर्थहीन क्रियाओं में संलग्न रखते हैं। इन क्रियाओं का एक ही मूल्य है कि निरंतर पुनरुक्ति से मनुष्य बुद्धि क्षीण होती है। उसकी संवेदना क्षीण होती है। उसकी संवेदनशीलता (मदेपजपअपजल) कम होती है। अगर एक आदमी को तीन वर्ष तक सुबह तीन घंटे, सांझ चार घंटे बाएं घूमो, दाएं घूमो करवाया जाए तो उसकी बुद्धि की, अनुभव की, चिंतन करने की क्षमता क्षीण हो जाती है और तब उसे बदूकों के सामने भी खड़ा कर दिया जाए तो उसे खयाल नहीं आता है कि कोई खतरा है। वह अभय को उपलब्ध नहीं हो गया कि सिर्फ भय को अनुभव करने की तीव्रता और क्षमता उसकी क्षीण हो गई है।

पुनरुक्ति (त्तमचमजपजपवद) के द्वारा मनुष्य की चेतना को शिथिल (क्नसस) करने की कोशिश की जाती है। कोई भी चीज बार-बार पुनरुक्त की जाए तो मनुष्य की चेतना क्षीण होती है। एक मां को बेटे को सुलाना होता है तो रात में कहती है कि राजा बेटा सो जा। राजा बेटा सो जा। वह समझती है गीत गा रही है, लोरी गा रही है। बेटा उसका सो जाता है तो वह सोचती है कि बहुत मधुर आवाज के कारण सो गया है। बेटा सिर्फ ऊब (ईवतमकवउ) की वजह से सो गया है। ऊब पैदा हो जाती है अगर कोई पास बैठ कर कहे चले जाए राजा बेटा सो जा राजा बेटा सो जा। पुनरुक्ति की जा रही है एक ही बात की तो चित्त ऊबता है। ऊब पैदा होती है। ऊब से उदासी पैदा होती है। उदासी से नींद पैदा होती है। चेतना शिथिल हो जाती है और सो जाते हैं। लेफ्ट राइट, लेफ्ट राइट। राजा बेटा सो जा, राजा बेटा सो जा। राम राम हरे हरे इन सारी बातों की पुनरुक्ति से मनुष्य का भय कम नहीं होता केवल बुद्धि कम होती है। एक आदमी भयभीत होता है अंधेरी गली में, तो कहने लगता है जय हनुमान जय हनुमान। एक आदमी ठंडे पानी में स्नान करता है तो कहने लगता है हर हर महादेव। जहां भी भय मालूम होता है वहां आदमी शब्दों की पुनरुक्ति करने लगता है। शब्दों की पुनरुक्ति से अनुभव की क्षमता होती है। सैनिक और संन्यासी, भक्त और लड़ाके अभय को उपलब्ध नहीं होते, केवल बुद्धिहीनता को उपलब्ध होते हैं।

मनुष्यजाति अब तक दो तरह से काम करती रही है। एक तो भय को पैदा करती र
ही है, ताकि शोषण किया जा सके और फिर जब भय पैदा हो जाता है तो उस भय
से बचाने के लिए जड़ता पैदा करती रही है ताकि आदमी भय से कहीं मर ही न जा
ए। यह पांच हजार वर्ष की मनुष्य की आंतरिक शिक्षा की कथा है। और आज हम इ
तने भयभीत हो रहे हैं, हर आदमी कंप रहा है अपने भीतर। जितना सभ्य देश है वह
ां उतना ही ज्यादा भयभीत मनुष्य है। प्राण कंप रहे हैं, सोते जागते कोई चैन नहीं है।
एकदम भय पकड़े हुए है। यह पांच हजार वर्षों की शिक्षा का शिखर (बसपउंग)है।
यह कोई इस युग की भूमिका नहीं है। यह तो जो चल रहा है हजारों वर्षों से, उसका
अंतिम परिणाम है। पति पत्नी से भयभीत है। पत्नी पति से भयभीत है। बाट बेटे से
भयभीत है। बेटे बाप से भयभीत है। पड़ोसी हैं। पड़ोसी पड़ोसी से भयभीत है। एक र
ाष्ट्र दूसरे राष्ट्र से भयभीत है। हिंदू मुसलमान से भयभीत है। सब के दूसरे से भयभीत
हैं। ये इतने भय से कांपता हुआ जगत अगर रोज रोज युद्ध में गुजर जाता हो तो
कोई आश्चर्य नहीं है। जो भयभीत है वह अंततः युद्ध में जाएगा। भय युद्ध में ले जाने
का मार्ग है। चूंकि भय फिर बढ़ता जाएगा तो हम क्या करेंगे? हम तैयारी करेंगे अ
पनी रक्षा की। पड़ोसी भी तैयारी करेगा अपनी रक्षा की। एक दूसरे की तैयारी देखक
र फिर एक दुष्ट चक्र (अपबपवने बपतबसू) पैदा होगा और हम तैयारी करते चले जा
एंगे।

मुल्ला नसरुद्दीन, एक रात एक रास्ते से गुजर रहा था। अंधेरा रास्ता था और उस त
रफ से एक बारात आ रही थी। घोड़े पर सवार लोग थे, बंदूकें दागते हुए लोग थे।
फकीर नसरुद्दीन ने समझा कि कोई डाकू आ रहे हैं। अंधेरे में डाकू किसी को भी दि
खायी देना शुरू हो जाते हैं। उजाले में भी दिखायी पड़ते हैं, लेकिन आदमी जरा बल
पकड़े रहता है। उजाले में ठीक ठीक दिखायी पड़ता है, और लोग भी देख रहे हैं। अं
धेरे में डाकू आ रहे हैं। नसरुद्दीन ने सोचा कैसे बचूं, क्या करूं, अकेला हूं? बंदूकें लि
ए मालूम होते हैं, घोड़े पर सवार है। पास में ही कब्रिस्तान था। दीवाल से छलांग ल
गाकर वह एक नयी खोदी गयी कब्र में लेट कर सो गया ताकि वे निकल जाए। लेकि
न वही नहीं डरा था बारात के लोगों को देखकर। बारात के लोग भी रात अंधेरे रास्
ते में एक आदमी को दीवाल पर चढ़ते देखकर डर गए। पता नहीं कौन है? कोई हत्
यारा है? बारात रुक गयी दीवाल के पास। उन्होंने अपनी लालटेनें और बत्तियां ऊपर
उठायी। दीवाल पर सारी बारात चढ़ गयी उस आदमी की खोज में। नसरुद्दीन के तो
प्राण सूख गए। उसने सोचा निश्चित ही डाकू हैं उसके पीछे चले आ रहे हैं। दीवाल प
र चढ़ गए हैं। उसने आंखें बंद कर लीं। और जब उन्होंने उस आदमी को कब्र में जिं
दा आंख बंद किए लेटे देखा तो वे और हैरान होगे। उन्होंने अपनी बंदूकें भर ली। वे
नीचे आए और उन्होंने कहा—बोलो तुम यहां किसलिए आए हो? क्या कर रहे हो? न
सरुद्दीन ने कहा—मेरे दोस्तो, यही मैं तुमसे पूछना चाहता हूं कि आप यहां क्या कर र
हे हैं, और किसलिए आए हैं? उन लोगों ने कहा;—हम किसलिए आए हैं? नसरुद्दीन

उठकर खड़ा हो गया और कहा कि में क्या कहूं: आप मेरी वजह से यहां हैं और मैं आपकी वजह से यहां हूं!

सारी दुनिया भयभीत है और अगर पूछने जाइए किसी से कि क्यों भयभीत हैं तो पाइएगा कि मैं आपके कारण भयभीत हूं और आप मेरे कारण भयभीत है। पति पत्नी के कारण भयभीत है। पत्नी पति के कारण भयभीत है। और सच्चाई यह है कि हमारे चित्त का केंद्र भय बन गया है। हम शायद किसी के कारण भयभीत नहीं है--हम सिर्फ भयभीत हैं--अकारण। और सिर्फ अपने भय को हम तर्कसम्मत (त्तंजपवदंसप्रम) बनाते है कि हम इसके कारण भयभीत हैं--मैं इस बात से भयभीत हूं। मैं मौत के कारण भयभीत हूं। मैं बीमारियों के कारण भयभीत हूं। मैं उस बात से भयभीत हूं।

हम सिर्फ भयभीत हैं। हमारी आत्मा ही भय से भर गयी है। क्यों भर गयी है? क्या रास्ता है? भजन कीर्तन करें, मंदिरों में जाए, पूजा पाठ करें? बहुत हो चुके भजन कीर्तन। बहुत हो चुकी पूजा-प्रार्थनाएं। आज तक मनुष्यता भय से दूर नहीं हुई। जो चीज भय से ही पैदा होती है उससे भय दूर नहीं हो सकता। वह भजन-कीर्तन, वह पूजा पाठ भय से ही पैदा हो रहा है। बंदूक बनाएं? एटम बम बनाए? हाड्रोजन बम बनाए? उससे भय दूर होगा? उससे भी भय दूर नहीं हुआ। भय बढ़ता चला गया। बम भय से ही पैदा हुए हैं इसलिए बमों के कारण भय दूर नहीं हो सकता है। बंदूकों के कारण भय दूर नहीं हो सकता क्योंकि बंदूक भय के कारण ही पैदा हुई है।

आपने घरों में तस्वीरें देखी होंगी बहादुर लोगों की तलवारें हाथों में लिए हुए जो भी आदमी हाथ में तलवार लिए हुए है वह बहादुर नहीं है। वह भयभीत है। चाहे घरों में फोटो लटकी हों। जिस आदमी के हाथ में तलवार है वह आदमी भयभीत है, वह बहादुर नहीं है। हाथ में तलवार भय का सबूत है। इतनी बात जरूरी है कि भयभीत आदमी अपने से कमजोर आदमी को भयभीत करने की कोशिश करता है। इस भांति उसे यह विश्वास हो जाता है कि मैं भयभीत नहीं हूं, दूसरा भयभीत है। इसलिए दुनिया में हर आदमी कोशिश करता है कि दूसरे को भयभीत कर देंगे। किसलिए? इसलिए ताकि वह यह विश्वास कर ले कि तुम कांप रहे हो मैं नहीं कांप रहा हूं। तुम भयभीत हो, मैं भयभीत नहीं हूं। इसलिए पति मालिक बनकर पत्नी को भयभीत किए रहता है। पति खुद भयभीत है। वह पत्नी को जब डरा देता है, रुला देता है, पत्नी को जब पैरों में गिरा लेता है तब वह आश्वस्त होता है कि मैं भयभीत नहीं हूं। मैं बहादुर आदमी हूं। यह औरत भयभीत है। दफ्तर में वह जाता है, उसका बास उसको कंपा देता है और थर्रा देता है। उसी हालत में पहुंचा देता है जिस हालत में पति पत्नी को पहुंचा देना है। उसका मालिक सोचता है मैं भयभीत नहीं हूं। मैं साधारण आदमी नहीं हूं। आदमी मेरे नीचे काम करते हैं।

पीढ़ी पर पीढ़ी पर आदमी दूसरे को भयभीत करके कुछ और नहीं कर रहा है, इतना ही कर रहा है कि अपने लिए विश्वास पैदा कर रहा है। आत्म विश्वास जुटा रहा है। यह हिटलर और स्टेलिन बड़े भयभीत लोग हैं। ये सारी दुनिया को कंपा देते हैं। विश्वास लाना चाहते हैं कि तुम सब कांप रहे हो, मैं नहीं कांप रहा हूं। लेकिन हिटलर

रात को अपने दरवाजे बंद करके सोता है। वह रात भर जागता रहता है कि कहीं क ोई आ तो नहीं गया। स्टेलिन अपनी पत्नी के साथ भी उसी कमरे में रात भर नहीं स ोता है। स्टेलिन बड़ी बड़ी सभाओं में स्वयं नहीं जाता। अपनी शकल-सूरत का आदमी रख छोड़ा है, डबल रख छोड़ा है। वह जाता है सभाओं में। फौज की परेड की सलाम ी स्टेलिन खुद नहीं लेता हैं, दूसरा लेता है जो उसकी शकल-सूरत का है, क्योंकि खत रा है, कोई गोली न मार दे। नादिर, रातभर नहीं सो सकता था। जरा सी खटखटाह ट हो कि तलवार निकाल कर खड़ा हो जाता था, क्या है? कौन है? और नादिर की मौत इसी तरह हुई। एक घोड़ा छूट गया उसके कैम्प का, रात को। और नादिर के तंबू के पास से निकल गया। घोड़े की आवाज सुनकर नादिर उठ गया। उसने समझा ि क कोई दुश्मन आ गया घोड़े पर सवार होकर। अंधेरे में वह बाहर निकला और भाग ने की कोशिश करी। पैर में रस्सी फंस गयी तंबू की और वह गिर पड़ा और मर गया । वह आदमी राजधानियां कत्ल करता रहा, मकानों में आग लगवाता रहा। किसलिए ?

ये दुनिया भर के राजनीतिज्ञ क्या चाहते है? ये सब भयभीत लोग हैं। ये दूसरे को भ यभीत कर यह विश्वास जुटा लेना चाहते हैं कि नहीं, कौन कहता हूं मैं भयभीत हूं, भयभीत सारी दुनिया होगी। ये सिंहासनों की यात्रा करने वाले लोग भय ग्रंथि (थमंत बवउचसमग) से परेशान और पीड़ित लोग हैं। दुनिया में बड़े नेता, दुनिया के बड़े सेन ापति दुनिया के बड़े विजेता ये सारे लोग भय से भय से पीड़ित लोग हैं। इन्हीं भयभी त लोगों के हाथ में दुनिया है और वे सब एक से भयभीत हैं इसलिए रोज युद्ध पैदा हो जाता है।

जब तक भय है तब तक दुनिया से युद्ध समाप्त नहीं हो सकता। यह तो हो सकता है कि युद्ध के कारण समाप्त हो जाए क्योंकि आदमी हो समाप्त हो जाए, लेकिन यह नहीं हो सकता कि भय जब तक है तब तक युद्ध समाप्त हो जाए। अब तो हम उस जगह ही पहुंच गए हैं कि हमारे भय ने अंतिम उपाय ईजाद कर लिए हैं, अब तो ह म पूरी मनुष्यता को समाप्त करने में समर्थ हो गए हैं। समर्थ पूरी तरह हो गए हैं शा यद जरूरत से ज्यादा हो गए हैं। मैं सुनता हूं कि वैज्ञानिकों ने इतना इंतजाम कर रख ा है कि अगर एक एक आदमी को सात बार मारना पड़े तो हमने व्यवस्था कर ली है । हो सकता है कोई भूल चूक हो जाए। कोई आदमी मारने से एक दफा बच जाए त ो दोबारा मार सकें। दो बार भी सकता है तो तीसरी बार मार सकें। सात बार, हालां कि एक आदमी एक ही बार में मर जाता है, दुबारा मारने की कभी कोई जरूरत आ ज तक नहीं पड़ी। लेकिन भूल चूक न हो जाए इसलिए इंतजाम पूरी तरह करना उ चित है। तीन साढ़े तीन अरब आदमी हैं। पच्चीस अरब आदमियों के मारने की सारी दुनिया में व्यवस्था है। अब की बार आदमी को बचने नहीं देंगे, क्योंकि अब की बार भय चरम स्थिति में हमारे प्राणों को आंदोलित कर रहा है। क्या करें इस भय के लि ए? क्या उपाय खोजें?

एक बात से कहना चाहता हूं, इसके पहले कि भय के संबंध में कुछ करें, इस बात को समझ लेना जरूरी है। अगर इस भवन में अंधकार भरा हो और हम किसी से पूछ ने जाए कि अंधकार को निकालने के लिए हम क्या करें? और वह हमसे कहे कि धक के दे दे कर अंधकार को बाहर निकाल दो, हम सब लौट आए और अंधकार को धक के देकर निकालने की कोशिश करें तो क्या परिणाम होगा? अंधकार निकल सकेगा? या कि अंधकार को निकालने की कोशिश में हम खुद ही समाप्त होने के करीब पहुंच जाएंगे। भय के साथ भी यही हुआ है।

भय को निकालने की हम पांच हजार वर्ष से कोशिश कर रहे हैं, भय को निकालने के लिए हम भगवान को जप रहे हैं। स्वर्ग, नर्क, मोक्ष की कल्पना कर रहे हैं। भय क ो निकालने के लिए हम बंदूकें, बम, अणु अस्त्र तैयार कर रहे हैं। भय से बचने के ि लए हम किले की मजबूत दीवाल उठा रहे हैं। धन की दीवाल उठा रहे हैं। पद प्रतिष ठा के किले खड़े कर रहे हैं। लेकिन बिना यह पूछे कि क्या भय को निकाला जा सक ता है सीधा? मेरी दृष्टि में भय अंधकार की तरह नकारात्मक है। अंधकार को सीधा नहीं निकाला जा सकता है। हां, प्रकाश जला लिया जाए तो अंधकार जरूर निकल जाता है लेकिन अंधकार को कभी कोई सीमा नहीं निकाल सकता। वस्तुतः वह कुछ नहीं है, केवल प्रकाश की अनुपस्थिति मात्र है। प्रकाश को लाते ही अंधकार नहीं पाया जाता है।

कहना गलत है कि निकल जाता है क्योंकि निकलने को कुछ भी नहीं है। कोई चीज ि नकलकर बाहर नहीं चली जाती है। जब आप दिया जलाते हैं, कुछ बाहर नहीं जाता, कुछ मिटता नहीं। अंधकार तो प्रकाश की अनुपस्थिति (:इेमदबम) मात्र थी। प्रकाश आ गया, अनुपस्थिति समाप्त हो गयी।

शायद आपने सुना हो। एक बहुत पुरानी घटना है। भगवान के पास अंधकार ने जाकर एक बार शिकायत कर दी अगर और कहा कि यह सूरज तुम्हारा, मेरे पीछे बहुत बु री तरह पड़ा हुआ है। मैं बहुत परेशान हो गया हूं। सुबह से मेरा पीछा करता है। सां झ तक मुझे थका डालता है। जहां जाता हूं वहीं हाजिर है। फिर जब मैं बहुत थक ज ाता हूं तक रात थोड़ी देर सो पाता हूं। सुबह फिर मौजूद हो जाता है। रात भर विश्र ाम भी नहीं हो पाता है कि सूरज फिर तैयार है। यह करोड़ों वर्षों से चल रहा है। मे रा क्या कसूर है, मैंने सूरज का क्या बिगाड़ा है? भगवान ने कहा, यह तो बड़ा अन्या य चल रहा है। मैं सूरज को बुलाकर पूछ लूं। उसने सूरज को बुलाया और कहा कि तुम अंधकार के पीछे क्यों पड़े हो? क्यों उसे परेशान किए जा रहे हो? उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? सूरज ने कहा—अंधकार? यह नाम मैंने कभी सुना नहीं! यह व्यक्ति मैंने कभी देखा नहीं। अब तक उससे मेरी कोई मुलाकात नहीं हुई। मैं क्यों पीछे पडूं गा? जिससे मेरी पहचान भी नहीं, उससे मेरी शत्रुता कैसे होगी? आप अंधकार को मेरे सामने बुला दें तो मैं पहचान भी लूं और क्षमा भी मांग लूं।

अब तक भगवान सूरज के सामने अंधकार को नहीं ला सके। ला भी नहीं सकेंगे, क्यों कि सूरज का अस्तित्व है। प्रकाश विधायक (ढवेपजपअम) है। अंधकार नकारात्मक (

छमहंजपअम) है। सूरज के सामने अंधकार नहीं लाया जा सकता क्योंकि अंधकार सूर ज की ही अनुपस्थिति हैं, गैर मौजूदगी है। अब जहां सूरज स्वयं मौजूद है वहां उसकी गैरमौजूदगी भी कैसे लाई जा सकती है? मैं यहां मौजूद हूं, मेरी गैरमौजूदगी (:इेमद बम) मेरे साथ ही यहां कैसे मौजूद हो सकती है? या तो मैं हो सकता हूं, या मेरा न होना हो सकता है। यहां दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकती।
लेकिन मनुष्य के भय के संबंध में यही भूल चलती रही है। हम भय को दूर करने की कोशिश करते हैं। भय नकारात्मक गुण (छमहंजपअम ुनंसपजल) है, भय का कोई अ स्तित्व नहीं है। भय किसी चीज की अनुपस्थित है। किसी विधायक गुण का अभाव है। शायद आपको खयाल में ही न हो कि भय प्रेम का अभाव है। जिस हृदय में प्रेम नह ीं है वह हृदय भयभीत रहेगा ही। आमतौर से इसका खयाल नहीं आता क्योंकि हम प्रेम के साथ घृणा को सोचते हैं। हम कभी भय के साथ प्रेम को सोचती ही नहीं। जि स हृदय में प्रेम नहीं वह भयभीत होगा ही। और अगर अपने जीवन में कभी भी थोड़ ा सा प्रेम का अनुभव किया हो तो आपने जाना होगा कि जो क्षण प्रेम का है वही क्ष ण अभय (थमंतसमेदमे) का भी है। जिसके प्रति आपका प्रेम है उसके प्रति आपका भ य समाप्त हो जाता है।
एक युवक का विवाह हुआ है। वह अपनी नयी विवाहिता पत्नी को लेकर जहाज की यात्रा पर निकला है। पुराना जहाज है, पुराने दिनों की बात है। तूफान आ गया है औ र जहाज कंपने लगा है, अब डूबा, तब डूबा होने लगा है लेकिन वह युवक मौज में बैठा हुआ है। उसकी पत्नी घबरा रही है, कांप रही है और उससे कहने लगी है कि तुम इतने शांत बैठे हो और जहाज डूबने को है। मौत करीब मालूम होती है। तुम कै से इतने निश्चित मालूम होते हो? वह युवक हंस रहा है। उसने अपनी तलवार म्यान में बाहर निकाल ली और पत्नी के गले पर रख दी है और वह पत्नी हंस रही है। वह युवक कहने लगा, तुम्हारी गर्दन पर नंगी तलवार रखे हूं फिर भी तुम हंस रही हो? तो उस पत्नी ने कहा मुझे तुमसे प्रेम है तो तुम्हारी तलवार से भय नहीं मालूम होता है। उस युवक ने कहा मुझे परमात्मा से प्रेम है इसलिए तूफान से भय नहीं मालू म होता है।
जहां प्रेम है वहां भय की कोई संभावना नहीं। अगर हम भय को निकालने की कोशि श करेंगे तो हम ज्यादा जड़ता को उपलब्ध हो सकते हैं, अभय को नहीं। अगर हम प्रे म को जन्माने की कोशिश करेंगे तो भय प्रेम के जन्म के साथ वैसे ही नष्ट हो जाएग ा जैसे प्रकाश के जन्म के साथ अंधेरा नष्ट हो जाता है। लेकिन मनुष्य जाति को प्रेम की कोई शिक्षा नहीं दी गयी है। शिक्षा भय की दी गयी है। इसीलिए तो हर आदमी थोथा मालूम होता है क्योंकि व्यक्तित्व का केंद्र अगर नकारात्मक है तो आदमी का पू रा व्यक्तित्व प्राणहीन होगा। व्यक्ति का केंद्र अगर नकारात्मक है तो व्यक्तित्व में बल नहीं हो सकता, वह थोथा, पोच (टउचवजमदज) होगा। इसलिए सारी मनुष्य जाति नपुंसक हो गयी है। कोई बल नहीं है। कोई जीवंत प्रेरणा नहीं है कोई भाव भरा हुआ , कोई आनंद से भरा हुआ हृदय नहीं है। कोई ज्योति से भरी हुई आंखें नहीं हैं। सब

भयभीत, भय से, खतरे से घबराएं हुए कांपते (ंतमउइसपदह) हुए और डरे हुए हैं। मनुष्य के व्यक्तित्व के केंद्र पर पांच हजार वर्षों से भय को रखा गया है। भय नकारा त्मक है इसलिए व्यक्तित्व भी नकारात्मक हो गया है। एक ही गुण है विधायक वह है प्रेम और एक ही गुण है नकारात्मक और वह है भय और दो ही महत्वपूर्ण हैं जी वन में भय या प्रेम।

जहां भय है वहां अपने आप घृणा पैदा हो जाएगी। जिससे हम भयभीत होते हैं उससे हम कभी भी प्रेम नहीं कर सकते हैं। इसीलिए तो परमात्मा का इतनी शिक्षा दी गयी दुनिया में, लेकिन परमात्मा का प्रेम पैदा नहीं हो सका; क्योंकि परमात्मा से भयभीत किए गए आदमी को समझाया गया है ईश्वर भीरु (फवक-थमंतपदह) होने के लिए, ईश्वर से भयभीत होने के लिए। दुनिया के धर्म यही समझाते रहे हैं कि ईश्वर से ड रे। जिससे डरा जाता है उससे कभी प्रेम नहीं किया जा सकता है। यह मनुष्य जाति जो नास्तिक हो गयी है वह ईश्वर भीरु होने की शिक्षा से ही गयी है। नास्तिकों के क ारण दुनिया नास्तिक नहीं हुई है। और दुनिया में अब भी आस्तिक पैदा हो जाते हैं त ो नास्तिकों के बीच से, लेकिन आस्तिकों के बीच से कभी कोई आस्तिक पैदा नहीं हो ता। आस्तिकों के बीच से आस्तिक पैदा हो ही नहीं सकते क्योंकि आस्तिक है ईश्वर से भरा हुआ, और जहां डर है वहां प्रेम असंभव है। जहां भय है वहां प्रेम असंभव है। जिससे हम भयभीत होते हैं उससे हम घृणा करते हैं, गहरे में घृणा करते हैं। ऊपर से हाथ जोड़ सकते हैं, लेकिन भीतर मन हो तो गला घोंट दें।

धर्म भीरुओं ने ईश्वर का गला घुटवा दिया। उन्होंने सिखाया कि ईश्वर से डरो। और आदमी इतना डर गया कि उसने सोचा कि जिससे इतना डरना पड़ता है उसकी हत्या कर दो। और मनुष्य ने ईश्वर की हत्या कर दी। फिर आदमी ने कहा, इसका फैसल ा ही कर दो जिससे इतना भय खाना पड़ता है। इसलिए नीत्से कह सका कि ईश्वर म र गया है। (फवक पे कमंक)। पूछा किसी ने किसीने मार डाला है ईश्वर को? नीत्से ने कहा—आदमी के हाथ देखो, ईश्वर के खून से रंगे हुए हैं। आदमी ने गर्दन दबा दी उसकी जिससे इतना भयभीत होना पड़ता था।

ईश्वर के प्रति भय पैदा करके धर्म नष्ट हो गया क्योंकि भय विधायक और रचनात्म क शक्ति (बतमंजतपअम वितबम) नहीं है। भय तो नकारात्मक और विध्वंस शक्ति है। लेकिन हम सब तरह से भय पैदा करते हैं। बाप बेटे में भय पैदा करता है, कि ब ाप हूं और उसे पता नहीं कि वह बेटे को तैयार कर रहा है कि बाप ही हत्या कर दे । और बेटे मिलकर बाप की हत्या कर ही रहे हे सारी दुनिया में। यह हत्या जारी र हेगी जब तक बाप बेटे को भयभीत करता है। जब तक वह कहता है कि मैं जो कह ता हूं वह ठीक है क्योंकि मेरे साथ में ताकत है। मैं तुझे घर के बाहर कर दूंगा। मैं तेरी गर्दन दबा दूंगा। जब तक पत्नी कहेगी पति से कि मेरे हाथ में ताकत है, जब त क हम परिवार में एक दूसरे को भयभीत करने की कोशिश करेंगे, तब तक अच्छे म नुष्य का जन्म नहीं हो सकता है।

हम सब एक दूसरे को डरा रहे हैं। हमारा सारा संबंध भय का संवंध है। विद्यार्थी गुरु के चरण छूता है भय के कारण और गुरु चरण छुवाता है ताकत के कारण। हम पैर छुवा रहे हैं और प्रसन्न हो रहे हैं और हमें पता नहीं कि इस तरह से हम अपने प्रति घृणा पैदा कर रहे हैं। इस घृणा का बदला लिया जाएगा। वेटे बड़े हो जाते हैं, बाप बूढ़ा हो जाता है। ताकत की स्थिति बदल जाति है। बेटे के हाथ में ताकत आ जाती है, बाप कमजोर हो जाता है। पासा पलट जाता है, बदला लिया जाता है और बेटे क ो सताना शुरू करते हैं। यह प्रतिक्रिया (त्तमंबजपवद) है, यह प्रतिध्वनि है। बाप ने बेटे को बचपन में सताया है, अब पासा पलट गया है। तब बाप ताकतवर था। तब वह छोटे से बच्चे को डरा कसता था। वह डंडा उठा सकता था। द्वार बंद कर सकता था। घर के बाहर निकाल सकता था। उसने जो भयभीत किया था बेटे को उस भय के कीटाणु निकाल सकता था। उसने जो भयभीत किया था बेटे को उस भय के कीटाणु भीतर रह गए हैं, वे बदला मांगते हैं। क्योंकि भय विध्वंसात्मक है, बदला चाहता है। भय से घृणा पैदा होती है। विरोध पैदा होता है। विद्रोह पैदा होता है। बच्चा प्रतीक्षा करेगा कि हाथ में ताकत आ जाए। कल जवान हो जाएगा। ताकत हाथ में जा जाए गी। बाप बूढ़ा हो जाएगा, कमजोर हो जाएगा। ताकत हाथ में आ जाएगी। बाप बूढ़ा हो जाएगा, कमजोर हो जाएगा। फिर सताने की प्रक्रिया उलट जाएगी। बेटा बाप को सताएगा।

हम सब एक दूसरे को भयभीत कर रहे हैं। हमारा सारा व्यक्तित्व भय पर खड़ा हो गया है। हम ईश्वर को भी इसी आधार पर समझते हैं और धर्म को भी। हम किसी को भी। हम किसी को यह कहते हैं कि सत्य बोलो तो साथ में यह भी कहते हैं कि सत्य नहीं बोलोगे तो नर्क जाओगे। हत्या कर दी सत्य की। सत्य के साथ भय जोड़ा जा सकता है? सत्य के साथ भय का कोई संबंध हो सकता है? सत्य विधायक गुण है, भय नकारात्मक गुण है। सत्य का प्रेम से संबंध हो सकता है भय से संबंध नहीं ह ो सकता। नीति का प्रेम से संबंध हो सकता है लेकिन भय से संबंध नहीं हो सकता। लेकिन पांच हजार वर्षों से नकारात्मक गुणों को विधायक धर्मों के साथ जोड़ जा रहा है। इसलिए मनुष्यता नष्ट हो रही है। यह समाज के जीवन में जहर घोला जा रहा है। एक बूंद जहर पूरे जीवन को नष्ट कर देती है। एक नकारात्मक बूंद पूरे विधाय क गुण को नष्ट कर देती है। यही बच्चे को हम कह रहे हैं कि सत्य बोलो, नहीं तो मारेंगे। हम सोच ही नहीं रहे हैं कि हम कौन सी दो चीज जोड़ रहे हैं। हम यह कह रहे हैं कि नीति का आचरण करो नहीं तो नर्क जाना पड़ेगा। वहां कड़ाहे हैं, आग ज लती है, तेल उबलता है और उसमें डाले जाओगे। भगवान को भी बड़ा मजा आता ह ोगा इन कामों में—बेचारे गरीब आदमी को, कमजोर आदमी को कहाड़ी में डालकर ब हुत मजा आता होगा।

एक पादरी, एक चर्च में समझा रहा था। भयभीत कर रहा था लोगों को। लोक कांप रहे थे, औरतें बेहोश होकर गिर पड़ी थीं। आपको पता होगा, ईसाइयों के एक संप्रद ाय का नमा ही क्वेकर्स (रुनांमते) पड़ गया है। क्वेकर्स का मतलब ही है कंपाने वाले

लोग। और एक संप्रदाय शेकर्स ऐींमते) है। वे भी कंपाने वाले लोग हैं। तो उस पादरी ने इतना कंपा दिया था कि लोग बिलकुल कांपने लगे थे। और जितने लोग डरते जा रहे थे उतनी उसकी कविता नर्क के चित्रण में गहरी होती चली जा रही थी। लोग कंप रहे थे तो बहुत मजा आ रहा था। किसी को कंपाने से ज्यादा मजा और किसी चीख में नहीं है।

खलील जिब्रान कहता था कि मैं एक खेत के पास निकल रहा था कि एक झूठा आदमी खेत में खड़ा हुआ था जैसा किसान बनाकर खड़े कर देते हैं। एक हंडी बांध देते हैं, एक कुरता लटका देते हैं। एक झूठा आदमी खेतरों में खड़ा हुआ था। वर्षा आती है, धूप आती है, सर्दी आती है, लेकिन झूठा आदमी खेत में शान से खड़ा रहता है। जिब्रान ने कहा, मैंने झूठे आदमी से पूछा, दोस्त बहुत थक जाते होगे। बड़े ऊब जाते होगे अकेले में खड़े खड़े। बरसात आती है, धूप आती है, तुम यहीं इसी तरह तने ख. डे रहते हो। उसने कहा, बिलकुल नहीं घबराता हूं, बिलकुल ऊब नहीं आती है, क्योंकि पक्षियों को डराने में इतना मजा आता है जिसका कोई हिसाब नहीं। जिब्रान ने कहा, यह तो बात तुम बहुत ठीक कहते हो। आदमी को डराने में मुझ को भी मजा आता है। वह झूठा आदमी हंसने लगा और उसने कहा, तब तुम भी एक झूठे आदमी हो।

जिसको दूसरे को डराने में मजा आता है, वह झूठा आदमी (ढेमनकव भनउंद इमपदह) है। क्योंकि उसके व्यक्तित्व का केंद्र नकारात्मक है, भय है। वास्तविक मनुष्य, वास्तविक केंद्र पर पैदा होता है। वह केंद्र प्रेम है। तो मैं जिस पादरी की बात कर रहा था, वह कंपा रहा है लोगों को। वे घबरा रहे हैं, और तभी उसने कहा, मालूम है तुम्हें, नर्क में क्या होगा? इतनी सर्दी पड़ेगी कि दांत किटकिटाएंगे। एक आदमी खड़ा हो गया। उसने कहा, क्षमा करें मेरे दांत टूट गए हैं। मेरा क्या होगा? पादरी को बहुत गुस्सा आया जैसा कि धर्म गुरुओं को हमेशा गुस्सा आता है प्रश्न पूछने पर। एक क्षण तो वह रुक गया कि फिर गुस्से में उसने कहा कि ऐसे फिजूल के प्रश्न पूछते हो? झूठे दांत दे दिए जाएंगे (थंसेम जममजी ूपसस चतवअपकमक)। उनको लगा लेना फिर कांपना लेकिन कांपना जरूर पड़ेगा। दांत जरूर किटकिटा ने पड़ेंगे।

आदमी को हमने सर्वश्रेष्ठ चीजों के साथ भय से जोड़ दिया है। पांच हजार वर्ष की सारी मनुष्य जाति की शिक्षा व्यर्थ हो गयी है नर्क, हो रही है। यह जो नकारात्मक भय है, इस केंद्र से मनुष्य को हटा लेने की जरूरत है। अगर एक ऐसी दुनिया चाहिए जहां दुनिया के जीवन में सौंदर्य हो, संगीत हो, आनंद हो, गरिमा हो व्यक्तित्व की, एक बिखेरती हुई किरण हो जीवन की, एक स्वतंत्रता हो, एक एक व्यक्ति का अपना अनूठापन हो, जहां संबंध हों प्रेम के, जहां युद्ध न हो, जहां शांति हो। इसके लिए मनुष्य के व्यक्तित्व के केंद्र को बदल देना जरूरी है। भय की जगह प्रेम स्थापित करना होगा। जीवन की समस्त शिक्षाओं से भय को अलग कर देना जरूरी है। एक इंच से अलग कर देना जरूरी है। लेकिन वह अलग नहीं होगा जैसा मैंने कहां अंधेरे को अलग

नहीं किया जा सकता है। तब क्या किया जा सकता है? दिए को जलाया जा सकता है। प्रेम की ज्योति को जलाया जा सकता है। प्रेम के प्रकट किया जा सकता है। आदमी के भीतर प्रेम इतना छिपा है जिसका कोई हिसाब नहीं। यह दुनिया छोटी है। और एक आदमी के भीतर का प्रेम पूरा बहना शुरू हो जाए तो यह जगत छोटा है। जैसे हमें कल तक पता नहीं था कि एक अणु में कितनी ऊर्जा हो सकती है। एक छो टे से अणु में कितनी शक्ति हो सकती है। अणु का विस्फोट अनंत शक्ति को जन्म देत ा है यह कल तक हमें पता नहीं था। एक रेत के छोटे से कण से एक बड़ा महानगर नष्ट हो सकता है। हाइड्रोजन के एक छोटे से कण से बंबई की महानगरी इसी क्षण र ाख हो सकती है यह कभी हमें पता नहीं था। पानी की एक बूंद के एक छोटे से कण में कितनी ताकत हो सकती है इसका कल तक हमें कोई अंदाज नहीं था। आदमी के भीतर कितनी ताकत हो सकती है प्रेम के कण में, इसका हमें कोई पता नहीं कभ ी कभी थोड़ी झलक मिली है। कभी किसी बुद्ध में कभी किसी क्राइस्ट में कभी किसी सुकरात में, छोटी सी झलक मिली है। लेकिन उस झलक को देखते ही हम एकदम टू ट पड़ते हैं और उसे बुझा देते हैं। सुकरात दिखाई पड़ा कि हमने मारा। जीसस दिखाई पड़े कि सूली पर लटकाया। गांधी दिखाई पड़ा कि गोली मार दी। इसे इतने जोर से कूदते हैं इस झलक को मिटाने के लिए, क्यों? क्योंकि वह झलक हम सबका अपमा न बन जाती है। क्योंकि वह झलक हमें खबर देती है कि हम सब के घर में अंधेरे में पड़े हैं और एक घर में दिया जल गया। बुझा दो इस दिए को। हम निश्चिंत हो जा ए, विश्राम में हो जाए कि सब जगह अंधेरा है। ठीक है। ठीक है हम भी अंधेरे में हैं। आज तक दुनिया में जब भी प्रेम की झलक किसी आदमी में आयी तो हमने उसे बुझ ाने की कोशिश की है ताकि हम निश्चित हो जाए, ताकि आत्मग्लानि पैदा न हो, घृ णा पैदा न हो कि मैं कैसा आदमी हूं? जब बुद्ध पैदा हो सकते हैं, जब महावीर पैदा हो सकते हैं, जब क्राइस्ट पैदा हो सकते हैं, तो मेरे भीतर क्यों नहीं हो सकती है यह घटना? एक एक आदमी के भीतर वही छिपा है जो सब आदमियों के भीतर छिपा हुआ है। आदमियत का बीज एक सा ही बीज है। आम के एक बीज से आम का वृक्ष पैदा होता है। आम के दूसरे बीज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आम तीसरे बी ज से भी आम का वृक्ष पैदा होता है। आदमियत के पास भी एक ही बीज है। उसी तरह एक ही वृक्ष भी पैदा हो सकता है। लेकिन हम उसे पैदा नहीं होने देते। कोई वृ क्ष हो जाता है तो काट डालते हैं ताकि हमको यह ग्लानि न आए कि हम कुछ गलत हैं। प्रेम की बड़ी संभावना मनुष्य के भीतर है लेकिन न उसकी शिक्षा है न उसे जगा ने का उपाय है, न उसे प्रकट होने देने की सुविधा है, बल्कि हम सब प्रेम के शत्रु हैं। हमने सब जगह ऐसी व्यवस्था कर रखी है कि प्रेम कहीं पैदा न हो। हमने ऐसी चाल ाकियां की हैं कि प्रेम के लिए कोई मार्ग नहीं छोड़ा है। कहीं कोई मार्ग नहीं छोड़ा है। और प्रेम पैदा न हो तो जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है, वह कुछ भी पैदा नहीं होता। जैसा कि मैंने कहा—जहां भय है, जहां घृणा पैदा होगी। जहां भय है, वहां ईर्ष्या पैदा होगी। जहां भय है वहां हिंसा पैदा होगी। जहां भय है वहां क्रोध पैदा होगा। जहां भ

य, वहां पूरा नर्क पैदा होगा। क्योंकि भय के ये सब अनुषांगिक हैं। ये सब भय की सं
तति हैं। से सब भय के सूत्र हैं। जहां प्रेम है वहां आनंद पैदा होगा, वहां शांति पैदा ह
ोगी, वहां, करुणा पैदा होगी, वहां दया पैदा होगी। वहां सौंदर्य पैदा होगा, वहां स्वर्ग
के द्वार खुलेंगे क्योंकि ये सब प्रेम की संतति हैं। भय के केंद्र का अंतिम परिणाम वि
क्षप्त (ऊंकदमे) है और प्रेम के केंद्र का अंतिम परिणाम विमुक्ति है।

प्रेम कैसे जन्में? प्रेम की बंद दीवारें कैसे टूटें? कोई राजनीतिज्ञ, दुनिया का कोई नेता
विश्व शांति नहीं ला सकता है क्योंकि राजनीति के सारे केंद्र भय के हैं। कोई धर्मगु
रु नहीं ला सकता है क्योंकि तथाकथित धर्मगुरुओं का केंद्र ही भय है, जिसके आधार
पर वह गुरु बना हुआ और शोषण कर रहा है। दुनिया में तो एक ही रास्ते से शांति
आ सकती है, मनुष्य के व्यक्तित्व में और समस्त जीवन में, प्रेम का जन्म हो। कैसे
प्रेम का जन्म हो, प्रेम क्या है, वह कैसे पैदा हो? वह सबके भीतर पड़ा हुआ बीज है
लेकिन बीज बीज ही रह जाता है, वह अंकुरित हो पाता। उसे भूमि नहीं मिल पाती।
उसे पानी रह जाता है, वह अंकुरित हो पाता। उसे भूमिती नहीं मिल पाती। उसे पा
नी नहीं मिल पाता। उसे सूरज की रोशनी नहीं मिल पाती। वह बीज बीज ही रह जा
ता है।और जो बीज ही रह जाता है उसके भीतर एक कसक, एक दर्द, एक पीड़ा रह
जाती है मैं जो हो सकता था, वह नहीं हो पाया। एक विफलता उसके पास पास छा
ई रह जाती है। मनुष्य में जो चिंता दिखाई पड़ती है, वह प्रेम के बीज प्रकट न होने
की चिंता है। मनुष्य में जो उदासी दिखाई पड़ती है वह उसके भीतर जो होने की संभ
ावना (चवजमदजपंसपजल) थी, वह न हो पाने के कारण ही है। संभावना वास्तविकत
ा (:बजनंसपजल) न बन पाए, तो एक गहरा दुख व्यक्ति चेतना को पकड़ लेता है।
लेकिन व्यक्ति जो होने को पैदा हुआ है, जो उसकी नियति है, वह हो जाए तो एक
अदभुत आनंद से वह भर जाता है। जब एक गुलाब फूलों से भर जाता है और जब
एक चमेली खिल जाती है, तो सुगंध लुटाती हुई और हवा में नाचती हुई उसकी पि
त्तयों को देखा है? हवा में नाचते हुए उस पौधे को देखा है जिसके फूल खिल गए हैं
पूरी तरह? उससे ज्यादा मौज में, उससे ज्यादा आनंद में कोई कभी दिखायी पड़ता है
? निश्चित ही जिस पौधे पर फूल नहीं आ पाते हैं जिसकी कलियां, ही रह जाती हैं
और कुम्हला जाती हैं, उसकी उदासी देखिए, उसकी चिंता देखिए, उसके लटके हुए,
मुरझाए हुए पत्ते चाहिए।

आदमी के भीतर जो जो फूल खिलने को हैं, अगर न खिल पाए तो वह भी हो जाता
है, चिंतित हो जाता है। लटक जाती हैं उसकी पत्तियां, उसका व्यक्तित्व भी मुरझा
जाता है। ऐसे ही सारी मनुष्यता का व्यक्तित्व मुरझा गया है। क्या कभी आपने अपने
से पूछा है कि मेरी सबसे गहरी प्यास क्या है, धन, पद, मोक्ष, परमात्मा? नहीं। अ
गर आप अपने से गहरे से गहरे में पूछेंगे तो प्राण एक ही उत्तर देता है—प्रेम दे सकूं
और पा सकूं। एक ही उत्तर है प्राणियों के पास कि प्रेम मुझे से वह सके और मुझे त
क आ सके। एक ऐसा जीवन जहां प्रेम की वीणा अपने पूरे संगीत को प्रकट कर सके,
ऐसा जीवन जहां प्रेम का पूरा फूल खिल सके। एक, एक मनुष्य के केंद्र पर इसके अ

तिरिक्त कोई पुकार नहीं है। कोई हाह्यान नहीं है। और मैं आपसे कहना चाहता हूं कि जिन दिन यह प्रेम का फूल पूरी तरह खिलता है उसी दिन परमात्मा भी उपलब्ध हो जाता है। प्रेम परमात्मा का द्वार है। लेकिन प्रेम का हमें कोई खयाल नहीं, कोई भान नहीं, क्या करें? यह प्रेम कैसे विकसित हो, इसकी बंद दीवालें कहां से तोड़ी जाए, यह झरना कहां से फोड़ा जाए कि खुल जाए? कुछ करना बहुत अपरिहार्य हो गया है, बहुत जरूरी हो गया है। अगर हम नहीं करते हैं तो शायद प्रेम के अभाव में पूरी मनुष्यता नष्ट भी हो सकती है। इसीलिए दो तीन छोटे से सूत्र आपसे कहना चाहता हूं जिससे यह प्रेम की सरिता बह उठे।

पहली बात, जिस व्यक्ति को जीवन में प्रेम के फूल को खिलाना हो उसे प्रेम मांगने का खयाल छोड़ देना चाहिए। उसे प्रेम देने का खयाल कर लेना चाहिए। पहला सूत्र, जो प्रेम मांगते हैं, उनके भीतर का बीज कभी अंकुरित नहीं हो पाएगा। जो लोग प्रेम देते हैं उनके भीतर प्रेम का बीज अंकुरित हो सकता है। क्योंकि अंकुरित होने के लिए दान चाहिए। एक बीज जब अंकुरित होता है तो क्या करता है? पत्तियां निकलती हैं, शाखाएं निकलती हैं, फूल खिलता है, सुगंध बिखर जाती है, सब बंट जाता है। बंट जाने से भीतर का बीज खुलता है और मांगने से सिकुड़ जाता है। भिखमंगे से ज्यादा सिकुड़ा हुआ हृदय किसी का भी नहीं होता है। जो मांगता है, वह सिकुड़ता जाता है। उसके भीतर कोई चीज बंद होती चली जाती है। प्रेम के द्वार पर जो भिक्षा के लिए हाथ फैलाते हैं, उनके हाथ खाली रह जाते हैं। लेकिन जो देने के लिए हाथ बढ़ाते हैं, उनका दान अनंत गुना होकर लौट आता है। लेकिन हम सब भिखारी बने खड़े हैं। कारण कि हम भय से भरे हैं।

भयभीत आदमी मांगता है। भयभीत भिखमंगा होता है। भय ही अकेला भिखारी है, क्योंकि भय कहता है कि इसे मत छोड़ो। जो मिल जाए उसे ले लो। भय भिखारी बनाता है। प्रेम सम्राट बना देता है। लेकिन सम्राट बनने की दिशा देना है, मांगना नहीं। प्रेम का पहला सूत्र है कि प्रेम तब तक जन्म नहीं पा सकेगा जब तक हम मांगते हैं। हम सब एक दूसरे से मांगते हैं। मां बच्चे से कहती है कि तुम प्रेम नहीं करते हो, बेटा सोचता है मां मुझे प्रेम नहीं करती। पत्नी कहती है, पति मुझे प्रेम नहीं करता। चौबीस घंटे एक ही शिकायत है पत्नी की कि तुम प्रेम नहीं करते और पत्नी की भी वही शिकायत है कि मैं थका मांदा घर आता हूं मुझे कोई प्रेम नहीं मिलता है। दोनों मांग रहे हैं, दोनों भिखारी, एक दूसरे के सामने झोली फैलाए खड़े हुए हैं। पर यह सोचते नहीं कि उस तरफ भी मांगने वाला खड़ा है और इस तरफ भी मांगने वाला खड़ा है। जीवन में कलह, द्वंद्व और युद्ध न होगा तो क्या होगा? जहां सभी भिखारी हैं वहां जीवन बरबाद नहीं होगा तो क्या होगा?

प्रेम के जन्म का पहला सूत्र है—प्रेम दान है, भिक्षा नहीं। इसलिए जीवन में देने की तरफ दृष्टि जगनी चाहिए। यह मत कहें कि पति मुझे प्रेम नहीं देता। उसका एक ही मतलब है, आप प्रेम नहीं दे रही हैं। यह मत कहें कि पति मुझे प्रेम नहीं देता। उसका एक ही मतलब है, आप प्रेम नहीं दे रही हैं। यह मत कहें कि पत्नी मुझे प्रेम नहीं दे

रही है। इसका मतलब है कि आप प्रेम नहीं दे रहे हैं। क्योंकि जहां प्रेम दिया जाता है वहां तो वह अनंत गुना होकर वापस लौटता है, जीवन का यही शाश्वत नियम है। गाली दी जाती है, तो गालियां अनंत गुना होकर वापस लौटती हैं और प्रेम दिया जा ता है तो प्रेम अनंत गुना होकर वापस लौट आता है। जीवन एक इकोप्वाइंट से ज्यादा नहीं है। जहां हम ध्वनि करते हैं, वह गूंजकर वापस हम पर आ जाती है। और हर व्यक्ति एक इकोप्वाइंट है। उसके पास जो हम करते हैं, वही वापस लौट आता है। व ही अनंत गुना होकर वापस लौट आता है। प्रेम मिलता है उन्हें, जो देते हैं। प्रेम उन्हें कभी भी नहीं मिलता है जो मांगते हैं।जब मांगने से प्रेम नहीं मिलता तो और मांग ब. ढती चली जाती है और मांग में प्रेम कभी मिलता नहीं है। प्रेम उनका मिलाता है जो देते हैं, जो बांटते हैं। लेकिन हमें हमेशा बचपन से यह सिखाया जा रहा है मांगो, म ांगो, मांगो! इस मांग ने हमारे भीतर के बीज को सख्त कर दिया है। इसलिए पहला सूत्र है प्रेम दो। दूसरा सूत्र यह है कि देने में अगर अपेक्षा रखेंगे, देने में अगर कोई प्र त्याशा (मगचतमबजंजपवद) रखेंगे, देने में अगर कोई खयाल है कि लौटाना चाहिए तो कभी नहीं लौटेगा। लौटेगा नहीं और भीतर जो पैदा हो सकता था वह भी पैदा न हीं क्योंकि देना कभी भी सशर्त (बवदकपजपवदंस) नहीं हो सकता। दान हमेशा बेशर्त है।

तो दूसरा सूत्र है—प्रेम का जन्म होगा अगर प्रेम का बेशर्त दान हो। बेशर्त दान प्रेम क ी शिक्षा की दूसरी सीढ़ी है। लेकिन हम हमेशा शर्त बंद हैं। देने के पहले हमारी मांग खड़ी है। देने के वक्त हमारी अपेक्षा खड़ी है। दिया नहीं और हम तैयार है कि उत्तर वापस आना चाहिए। ऐसा जो मन है, जो उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा है, ऐसे पता नह ीं है कि उस उतर की प्रतीक्षा में देने के कारण उसके भीतर जो पैदा होता है, वह उ से दिखाई ही नहीं पड़ेगा। जब मैं किसी को प्रेम दूं तो अगर उससे कोई अपेक्षा है तो नजर उस पर लगी रहती है कि वह क्या करता है और अगर उससे कोई अपेक्षा न हीं है तो देने के बाद नजर खुद पर जाती है, कि देने से क्या हुआ है। देने से भीतर के फूल खिल उठते हैं। उसके लिए ध्यान (ऊमकपजंजपवद) चाहिए। जिसकी नजर दू सरे पर होती है उसका ध्यान तो उस पर भी जाता ही नहीं, जो स्वयं उसके भीतर हो रहा है। ध्यान उस पर जाता है जिसके साथ हमने किया है। चूक गए एक मौका। जैसे बीज के लिए सूरज की किरणें चाहिए ऐसे ही भीतर प्रेम के बीज के लिए ध्यान की किरणें चाहिए। ध्यानपूर्ण चेतना चाहिए ताकि मेरा ध्यान भीतर जाए। ध्यान की ि करणें भीतर जाए। भूमि चाहिए दान की, किरणें चाहिए ध्यान की। तो भीतर किरणें चाहिए लेकिन तेरा ध्यान तो लगा हुआ है उस पर जिसको मैंने प्रेम दिया है।

मैंने किसी को हाथ का सहारा देकर जमीन से उठा दिया तो देख रहा हूं कि आसपास फोटोग्राफर है या हनीं। कोई अखबार वाला है या नहीं। वह आदमी उठकर धन्यवाद देता है या नहीं। चूक गया मैं मौका। एक क्षण आया था जब मैं भीतर जा सकता था। और दान घटित हुआ था उस दान के पीछे जो भीतर फूल खिल सकता था उसे देखता। मेरे देखने के साथ ही वहां भीतर कोई कली खिल जाती, लेकिन मैं चूक गया

। देखने का मौका भूल गया। मैं बाहर देखने लगा। मैं फोटोग्राफर खोजने लगा। मैं अ खबार वाले को देखने लगा। मैं उस आदमी को देखने लगा कि बेईमान कुछ कहता है कि चुपचाप चला जाता है? धन्यवाद देता है कि नहीं? चूक गया एक क्षण, एक प ल आया था जब भीतर नजर जाती तो कोई चीज खिल जाती। आपको शायद पता न हो आंख जहां चली जाती है वही चीज खिल जाती है।

मनुष्य के पास जो सबसे बड़ी ताकत है वह आंख की ताकत, देखने की ताकत है, अ ौर कोई बड़ी ताकत नहीं है। सबसे बड़ी, सबसे सूक्ष्म, सबसे मूल्यवान ताकत जो है व ह देखने की है। किसी को जरा प्रेम से देखें, जैसे जहां कोई चीज खिल जाती है। कोई उदासी मिट गई, कोई रोशनी हो गई। तो जरा प्रेम से देखिए वहां जैसे कोई फूल ि खल गया है, कोई सुगंध आ गई है। ऐसे ही जब कोई भीतर, अपने भीतर दान के क्ष ण में प्रेम से देखता है, निहारता है तो वहां भी कोई चीज खिल जाती है, हृदय में कोई फूल खिल जाता है।

दूसरा सूत्र है दान के क्षण में बेशर्त, बिना किसी अपेक्षा के चुपचाप मौन, बिना किसी उत्तर के रह जाता। तीसरा सूत्र है—जो आपके प्रेम को स्वीकार कर ले उसके प्रति अनुग्रह का भाव (फतंजपजनकम) कि उसने स्वीकार किया। हम तो यह चाहते हैं कि वह हमारा धन्यवाद करे कि हमने उसे प्रेम दिया। लेकिन प्रेम का बीज यह चाहता है कि हम अनुग्रह स्वीकार करें। कोई इंकार भी कर सकता था। एक गिरा हुआ आद मी यह भी कह सकता था कि नहीं, मत उठाओ। फिर मेरी क्या सामर्थ्य कि मैं उसे उठाने का मौका पाता। लेकिन नहीं उसने मुझे उठाने दिया। उसने एक अवसर दिया ि क मेरे भीतर जो प्रेम है वह बह सके। उसने एक मौका (वचचवतजनदपजल) दिया उसके लिए धन्यवाद देना चाहिए। यह नहीं कि वह मेरा धन्यवाद करे। मैं उसे धन्यवा द दूं कि मैं कृतज्ञ हुआ, मैं अनुगृहीत हुआ। तो मैं अनुगृहीत हूं कि तुमने मेरे प्रेम को स्वीकार कर लिया यह। तीसरा सूत्र है जो प्रेम को स्वीकार करे उसके प्रति अनुग्रह भा। भाव। इस अनुग्रह के भाव में भीतर की कली और जोर से चटखेगी और खिलेगी । क्योंकि अनुग्रह के भाव में ही जीवन में जो भी महत्वपूर्ण है वह खिलता है और वि कसित होता है।

अनुग्रह से बड़ा कोई भाव नहीं, कोई प्रार्थना नहीं। लेकिन हाथ जोड़े बैठे हैं, भगवान के सामने और कुछ शब्द दोहरा रहे हैं, यह प्रार्थना नहीं है। जीवन के समक्ष अनुग्रह का भाव, तारों के समक्ष, सूरज के समक्ष, फूलों के समक्ष, लोगों के समक्ष, चारों तर फ यह जो विराट जीवन है, इसके प्रति कृतज्ञता का भाव क्योंकि वह प्रेम को स्वीकार करता है। यह मेरे प्रेम को बहने का मौका होता है। यह मेरी आत्म-उपलब्धि में सह योगी और मित्र बन गया है। इस सब का, अनुग्रह, इस सब का धन्यवाद जब मन में होगा तो भीतर के झरने फूट पड़ेंगे और जिस दिन प्रेम का झरना भीतर बहने लगता है उसी दिन पाया जाता है कि भय कहीं भी नहीं है। है ही नहीं। वह था ही नहीं। वह प्रेम की अनुपस्थिति थी। वह गैर मौजूदगी थी।

जब प्रेम से हृदय भर आता है तो इस जगत में कोई भय नहीं रह जाता। तब हाथ में तलवार उठाने की जरूरत नहीं। तब राम-राम जपकर मन को बोथला करने की कोई जरूरत नहीं है। तब तो सब तरफ राम ही दिखाई पड़ने लगता है। तब तो सब तरफ उसी परमात्मा के दर्शन होने लगते हैं। जब भीतर परमात्मा होता है तो सारा जगत परमात्मा हो जाता है। और जब भीतर भय होता है तो सारा जगत शत्रु हो ज ाता है। भीतर जो है वही बाहर हो जाता है। भीतर भय है तो बाहर शत्रुता है। भीत र प्रेम है तो बाहर प्रभु है। वह प्रीतम, फिर सब तरफ वही है, हर इशारे में, हर दृषि ट में, जीवन में, मौत में, कांटे में, फूल में, पत्थर में, सब में वही हैं।
जिस दिन हृदय इतने प्रेम से भर जाता है कि चारों ओर परमात्मा के दर्शन होने लग ते हैं, उसी दिन भय का अंधकार विलीन हो जाता है। और जहां भय नहीं है वहां जी वन का सत्य है। जहां भय नहीं है वहां जीवन का आनंद है। जहां भय नहीं है वहां ज ीवन का सौंदर्य है। और जहां भय नहीं है वहां जीवन का संगीत है। लेकिन अभी तो हम सब विसंगीत में हैं, दुख में हैं, चिंता में हैं, भय में हैं, क्योंकि प्रेम का मंदिर हम नहीं बना पाए। आज तक की पूरी मनुष्यता ही गलत रही है। ठीक और स्वस्थ मनुष यता का जन्म हो सकता है। उसके लिए मनुष्य के प्राणों से भय को हटाकर प्रेम को स्थापित करना होगा।

जीवन की कला

मैं अत्यंत आनंदित हूं। छोटे छोटे बच्चों के बीच बोलना अत्यंत आनंदपूर्ण होता है। ए क अर्थ में अत्यंत सृजनात्मक होता है। बूढ़ों के बीच मुझे बोलना इतना सुखद प्रतीत नहीं होता। क्योंकि उनमें साहस की कमी होती है, जिसके कारण उनके जीवन में क्रांि त होना करीब करीब असंभव है। छोटे बच्चों में तो साहस अभी जन्म लेने को होता है। इसलिए उनके साहस को पुकारा जा सकता है और उनसे आशा भी बांधी जा सक ती है। एक बिलकुल ही नई मनुष्यता की जरूरत है। शायद उस दिशा में तुम्हें प्रेरित कर सकूं इसलिए मैं खुश हूं।
मैं थोड़ी सी बातें बच्चों से कहना चाहूंगा, कुछ अध्यापकों से और कुछ अभिभावकों से जो यहां मौजूद हैं, क्योंकि शिक्षा इन तीनों पर ही निर्भर होती है।
पहली बात तो मैं यह कहूं कि विद्यालय सारी दुनिया में बनाए जा रहे हैं, विश्वविद्या लय बनाए जा रहे हैं। सारी दुनिया का ध्यान बच्चों की शिक्षा पर दिया जा रहा है अ ौर ज्यादा से ज्यादा लोग शिक्षित भी होते जा रहे हैं, लेकिन परिणाम बहुत शुभ नहीं है। अभी हमारे मुल्क में शिक्षा कुछ कम है, कुछ दिनों में बढ़ जाएगी, लेकिन शिक्षा के साथ-साथ जगत में न शांति आ रही है, न आनंद आ रहा है। हम मानते हैं कि शिक्षा देकर बहुत कुछ हो जाएगा लेकिन ऐसा होता नहीं। जरूर शिक्षा के आधारों में भूलें होंगी, निश्चित ही कुछ आधार भूत गड़बड़ होगी। शिक्षा का उपक्रम असफल हों गी, निश्चित ही कुछ आधारभूत गड़बड़ होगी। शिक्षा का उपक्रम असफल ही है। एक विवेकपूर्ण संस्कृति पैदा करने में वह बिलकुल विफल है। हम देखते हैं कि जो मनुष्य ि शक्षित हैं, वे मनुष्यता की दृष्टि से उन मनुष्यों से भी नीचे हो गए है, जो कि अशि

क्षत हैं। पहाड़ों में जो आदिवासी हैं, वे हमसे ज्यादा प्रेमपूर्ण हैं। हम जो बहुत ज्यादा कठोर, असभ्य, वा पाषाण हृदय होते जा रहे हैं, वह सब शिक्षा से ही हो रहा है। व ही शिक्षा तुम्हें भी मिल रही है, वही शिक्षा सारी दुनिया में सारे बच्चों को मिल रही है। इससे डर मालूम हो रहा है। तुम्हारा भविष्य कुछ बहुत प्रकाशपूर्ण नहीं है। अगर इस शिक्षा पर तुम निर्भर रहे तो तुम्हारे संबंध में बहुत आशा नहीं बांधी जा सकती। क्योंकि आज तक इस दीक्षा से जो कुछ पैदा हुआ है वह किसी भी भांति सुखद नह ीं है।

जैसा कि अभी यहां कहा गया कि विद्याक्रम में धार्मिक शिक्षा जोड़ी जाए, लेकिन वह भी हो तो भी कुछ होने वाला नहीं है। क्योंकि दुनिया में धार्मिक शिक्षा बहुत दिनों से दी जा रही है, उसके परिणाम अच्छे नहीं हैं। धर्म की शिक्षा के नाम पर क्या सिखा या जाता है? अगर जैन धर्म से संबंधित विद्यालय है तो जैन धर्म की शिक्षा सिखाई जाती है और किसी दूसरे धर्म का, तो दूसरे धर्म के शास्त्र पढ़ाए जाते हैं। लेकिन शास् त्र जानने से क्या होता है? सिखाने के नाम पर बच्चों से शब्द और शास्त्र कंठस्थ करा लिए जाते हैं। कोरी बातें तुम्हारे दिमाग में डाल दी जाती हैं। तुम्हें बता दिया जाता है कि आत्मा है, स्वर्ग है, मोक्ष है। तुम्हें बता दिया जाता है कि कैवल्य-ज्ञान का क्य ा अर्थ है, सम्यक दर्शन क्या है, सम्यक चरित्र क्या है। यह सब तुम सीख लेते हो, उ सकी परीक्षा दे देते हो और परीक्षा में अत्तीर्ण भी हो जाते हो। लेकिन इससे कोई बेह तर आदमी पैदा नहीं होता। मैं ऐसी धार्मिक शिक्षा के विरोध में हूं, क्योंकि उससे पि रणाम भले की जगह बुरे ही निकलते हैं।

ऐसी शिक्षा के परिणाम स्वरूप छोटे-छोटे बच्चे यदि जैन स्कूल में पढ़े तो जैन ही हो जाते हैं, मुसलमान स्कूल में पढ़ें तो मुसलमान हो जाते हैं, ईसाई स्कूल में पढ़ें तो ईस ाई हो जाते हैं, और फिर ये जैन, मुसलमान, ईसाई आपस में झगड़ाकर परेशानी पैदा करते हैं। इन सांप्रदायिक बुद्धि के लोगों से मनुष्यता का निरंतर घात होता है। इस भांति की शिक्षा से तुम्हारे भीतर धर्म का नहीं, वरना धार्मिक संकीर्णता और जड़ता का जन्म होता है। तुम संप्रदायों से बंध जाते हो; सारी मनुष्यता के साथ, एकात्मकता के साथ न बंधकर एक अलग छोटे से टुकड़े के साथ बंध जाते हो और इन टुकड़ों के कारण दुनिया में बहुत संघर्ष, बहुत वैमनस्य और बहुत ईर्ष्या चली है। इसके इतने दुखद परिणाम हुए है, इतनी हिंसा बढ़ी है, कोई हिसाब नहीं। तो फिर क्या करें? मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि धार्मिक शिक्षा की जरूरत नहीं है, धार्मिक साधना की जरूरत है। और यह बड़े आश्चर्य की बात है कि धार्मिक शिक्षा या तो जैनियों की होगी या मुसलमानों की होगी या हिंदुओं की होगी—लेकिन धार्मिक साधना न तो जैन की होती है, न मुसलमान की होती है, न हिंदू की होती है। धार्मिक साधना तो बा त ही अलग है—उसका संप्रदाय से कोई संबंध नहीं है। धार्मिक साधना का क्या अर्थ है ?

धार्मिक साधना का अर्थ है : बच्चों को सत्य के लिए तैयार करो, प्रेम के लिए तैयार करो। धार्मिक साधना का अर्थ है : बच्चे को शांति के लिए तैयार करो, ध्यान के लि

ए तैयार करो, आत्मा के भीतर जाने के लिए तैयार करो। सत्य न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिंदू का होता है। प्रेम न तो जैन का होता है, न मुसलमान का होता है, न हिंदू का होता है। ध्यान किसी संप्रदाय का नहीं होता। लेकिन हम देते हैं धार्मिक शिक्षा और देनी चाहिए धार्मिक साधना। लेकिन आज धार्मिक साधना देने के लिए कोई उत्सुक नहीं है। बच्चों को मनुष्य बनाने की किसी की भी उत्सुकता नहीं है। हिंदू डरा हुआ है कि उसका लड़का ईसाई न हो जाए इसलिए उसके दिमाग में रामायण और गीता भर दी जाती है। ऐसे ही ईसाई भी भयभीत है। यह भय है सारी दुनिया में। और इस भय की वजह से सभी धर्म कहते हैं कि बच्चों को धार्मिक शिक्षा दी जाए। उनकी कोई इच्छा मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाने की नहीं है। उनकी इच्छा तो हिंदू बनाने की है, जैन बनाने की है, मुसलमान बनाने की है। और जो मनुष्य ऐसे विशेषणों के साथ है, वह ठीक मनुष्य नहीं है। मैं पूछना चाहता हूं कि क्यों बच्चों को हिंदू बनाया है, जैन बनाना है, ईसाई बनाना है--क्या सांप्रदायिक मू.ढताओं और संकीर्णताओं और वैमनस्यों ने मनुष्य जाति की काफी हानि नहीं कर ली है? धर्म का जन्म इन धर्मों के कारण ही तो नहीं हो पाता है। इसलिए जिनका धर्म से प्रेम है, उनके सामने पहला लक्ष्य है: मनुष्य जाति की धर्मों से मुक्ति। जिसे धर्म का होना है, उसके लिए धर्मों के होने का कोई भी मार्ग नहीं है।

अगर मनुष्य बनाना है तो धार्मिक शिक्षा में नहीं, धार्मिक साधना में जाना पड़ेगा। और धार्मिक साधना का रास्ता बिलकुल अलग है धार्मिक शिक्षा से। धार्मिक शिक्षा से थोथा पांडित्य पैदा होता है, धार्मिक साधना से धार्मिक चित्त पैदा होता है। पांडित्य और ज्ञान में अंतर है। थोथा पांडित्य दुनिया में मिट जाए तो बेहतर। दुनिया में ज्ञान चाहिए। धार्मिक चित्त से संतत्व पैदा होता है। और संतत्व बहुत कम है, क्योंकि जिस संत को यह खयाल हो कि मैं जैन हूं, हिंदू हूं, मुसलमान हूं, तो समझ लेना कि वह अभी पंडित ही है। अभी तो तथाकथित संत भी इस हालत में नहीं है कि पूर्ण मनुष्यता के साथ अपना तादात्म्य कर सके। संत घर द्वार को छोड़ देता है, बच्चे छोड़ देता है, पत्नी को छोड़ देता है, वस्त्र भी छोड़ देता है लेकिन मुझे शक है उसने समाज को छोड़ा या नहीं। अगर वह हिंदू घर में पैदा हुआ तो उसने हिंदू पन को तो छोड़ा ही नहीं और यदि वह जैन घर में पैदा हुआ है तो वह अभी भी जैन बना हुआ है। वह कहता है कि मैंने समाज को छोड़ा लेकिन समाज को कहां छोड़ा? जिस समाज ने सिखाया कि तुम जैन हो, हिंदू हो, मुसलमान हो--वह उसी का तो हिस्सा बना हुआ है। पत्नी को छोड़ना बहुत आसान है, पत्नी को छोड़ना बहुत कठिन नहीं है। यदि मौका मिल जाए तो पत्नी छोड़ने को हर कोई राजी हो सकता है। पत्नी को छोड़ना कठिन नहीं है, क्योंकि पत्नी को, झेलना एक उत्तरदायित्व है। अपने बच्चों को छोड़कर भागना भी कठिन हनीं है, हर कोई कमजोर और काहिल बच्चों को छोड़कर भागना भी चाहेगा। वह कोई कठिनाइयां नहीं हैं। और जिस समाज में छोड़कर भागनेवाले को आदर मिलता हो वहां तो यह बहुत ही सरल बात है। छोड़ने से व्यक्ति उत्तरदायित्व से त

ो बच ही जाता है और आदर को भी उपलब्ध हो जाता है। अहंकार की भी तृप्ति हो ती है और बोझ भी कह हो जाता है।

यदि छोड़ना है तो समाज के उन संस्कारों को, उसके दिए गए विचारों को, समाज के द्वारा भीतर डाले गए खयालों को छोड़ो, किंतु समाज के द्वारा डाले गए घेरे को तो. डना कठिन है। इसे जो जोड़ता है मेरी दृष्टि में वही साधु है। और जो इसके भीतर खड़ा है, वह पंडित से ज्यादा कभी नहीं है। दुनिया में साधना की जरूरत है। ऐसे सा धु यदि दुनिया में हो सकें तो दुनिया एक अलग ढंग की दुनिया हो सकती है। एक ब हुत बड़ी दुनिया का निर्माण हो सकता है जहां सारी दुनिया के बीच प्रेम का सागर ल हरा सके। यह कौन करेगा? अगर यह छोटे छोटे बच्चे नए ढंग से तैयार किए जाए तो यह हो सकता है। नहीं तो नहीं हो सकता है। मगर यह छोटे बच्चे भी उन्हीं ढांच ों में ढाले जा रहे हैं, जिनमें हजारों सालों से ढलाई चल रही है। ये भी उन्हीं ढांचों में डालकर तैयार किए जाएंगे और उन्हीं लड़ाइयों को लड़ेंगे, ईर्ष्याओं को पालेंगे और उन्हीं घृणाओं में जीएंगे जिनमें इनके मां बाप जिए थे।

दुनिया को बदलने के लिए शिक्षा बुनियादी से धार्मिक होनी चाहिए, लेकिन धार्मिक ि शक्षण नहीं, धार्मिक साधना। इन बातों का स्पष्टी करण हो जाए तो इस गुरुकुल में भी एक क्रांति हो सकती है। धार्मिक साधना की फिकर कीजिए। बच्चों को हिंदू या जैन बनाने की कोशिश छोड़ दीजिए। बहुत दिन दुनिया में हिंदू, जैन टिकने वाले नहीं हैं। दुनिया में धर्म बचेगा, हिंदू, जैन नहीं। न यह दुनिया में बचने ही चाहिए। क्योंकि इनके कारण दुनिया में परेशानियां ही हुई हैं। यह भी मैं निवेदन करना चाहता हूं ि क दुनिया से अगर हिंदू, जैन, मुसलमान, बौद्ध, ईसाई चले जाए तो कोई हर्जा नहीं, महावीर, बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट भी नहीं जाते। जैन के मिटने से महावीर नहीं मिट ते बल्कि जैनों के होने से महावीर मिटे हुए हैं। जैनों की वजह से महावीर सबके हो नहीं पाते। एक घेरा डाले है जैनी महावीर के चारों तरफ और इनकी वजह से दूसरों के लिए दरवाजा बंद है। कितने जैन हैं जिन्होंने बाइबिल को पढ़ा हो, क्योंकि बाइबि ल को ईसाइयों ने बांधकर रखा है। क्या आपको पता नहीं कि बाइबिल में अदभुत ही रे भरे हैं? कितने ईसाई हैं जिन्होंने महावीर की वाणी पढ़ी है, क्योंकि महावीर को जै न बांधकर रखे हुए हैं। और महावीर की वाणी में अदभुत खजाने भरे हैं। दुनिया में ि जतने भी महत्वपूर्ण खजाने थे उस खजानों पर दुष्टों ने कब्जा कर लिया है, और पूर्ण मनुष्य जाति को उससे वंचित कर दिया है। यह घेरे टूटने चाहिए ताकि यह सारी सं पत्ति सबकी हो जाए। महावीर सबके हों, राम सबके हों, कृष्ण सबके हों, क्राइस्ट सब के हों।

विज्ञान तो तुम सब पढ़ते होगे। विज्ञान की खोज तो सारी दुनिया की खोज होती है। एडीसन अगर कोई खोज करता है तो वह किसकी होती है? आईन्स्टीन अगर कोई ख ोज करे तो वह खोज सारी दुनिया की हो जाती है। कोई भी वैज्ञानिक दुनिया में खो ज करता है तो सारी दुनिया की हो जाती है। लेकिन धर्म के संबंध में जो बहुमूल्य ख

ोज हुई है वह सारी दुनिया की अभी तक नहीं हो पाई है। इससे दुनिया बहुत दरिद्र है। इससे दुनिया की जो आध्यात्मिक समृद्धि हो सकती थी वह नहीं हो पाई।

बच्चों को इस भांति तैयार किया जाना चाहिए कि वे मनुष्य बने, धार्मिक बनें। धार्मिक होना तथाकथित धर्म भेदों में उलझने से दूसरी बात है। एक दिन एक साधु मेरे पास ठहरे हुए थे। सबेरे ही उठकर उन्होंने पूछा कि जैन मंदिर कहां है? मैंने पूछा कि क्या करिएगा जैन मंदिर को जानकर? उन्होंने कहा कि मैं आत्मध्यान के लिए वहां जाना चाहता हूं, सामायिक के लिए वहां जाना चाहता हूं। मैंने कहा कि आप निश्चित हैं कि आपका आत्मघात ही करना है? और कोई बात तो नहीं है? उन्होंने कहा कि निश्चित हूं, मुझे शांति चाहिए और आत्मघात करना चाहता हूं, और कुछ नहीं। मैं ने कहा कि यहां जो जैन मंदिर है, वह जो बाजार में है, हमारे बगल में एक चर्च हैं, वहां एकदम सन्नाटा है, एकदम शांति है और आज रविवार भी नहीं है, इस लिए वहां कोई ईसाई भी नहीं आएगा, आप वहां जाए और आत्मध्यान करें, चर्च का नाम सुनते ही साधु सटपटाए और कहने लगे चर्च में? मैंने कहा आपको तब आत्मध्यान से कोई संबंध नहीं है। जिसे चर्च शब्द से बाधा है, वह आत्मा को जान सकेगा यह असंभव है। यह मारे साधु की बुद्धि है। जिसको चर्च जैसी छोटी चीज से बाधा है वह आत्मा जैसी विराट शक्ति से कैसे परिचित हो सकता है? यह असंभव है। मैंने कहा कि आपको जैन मंदिर जाना है, आपको आत्मघात से कोई मतलब नहीं है, न ध्यान से कोई मतलब है। जैन मंदिर इसलिए जाना है कि बचपन से ही सिखाया गया है कि मंदिर जाना धर्म है।

मैं आपसे कहना चाहूंगा कि आत्मा में जाना धर्म है, किसी मंदिर में जाना धर्म नहीं। लेकिन शिक्षा अगर होगी तो वह सिखाएगी कि जैन मंदिर में जाना धर्म है, और साधना अगर होगी तो वह सिखाएंगी कि भीतर जाना धर्म है। एक ईसाई से भी मैं यही कहता हूं कि चर्च अगर दूर है और जैन मंदिर पड़ोस में हैं तो वहीं बैठ जाओ, हिंदू मंदिर पड़ोस में है तो वहीं बैठ जाओ। सवाल महत्वपूर्ण यह नहीं है कि आप किस मंदिर में बैठे हैं, सवाल महत्वपूर्ण यह है कि आप अपने भीतर प्रवेश करते हैं या नहीं? जहां आप अपने भीतर प्रवेश करते हों वहां धर्म से संबंधित होते हैं और जहां आप मकानों का हिसाब-किताब रखते हैं वहां आपका धर्म से कोई संबंध नहीं है।

मैं एक महानगरी में जाता था। वहां एक मित्र के यहां ठहरता था। उनकी बगल में ही चर्च था। बहुत सन्नाटे का स्थान था। मैं सुबह ही उठता और चर्च में चला जाता। मेरे मित्र ने कहा, आपने मुझे क्यों नहीं कहा, मैं आपको मंदिर ले चलता। मैंने कहा, मेरा काम तो यही पूरा हुआ। लेकिन में चर्च में गया इस कारण से बहुत दुखी हुए। फिर पांच वर्षों के बाद दोबारा उनके यहां मेहमान हुआ। सुबह से वे मुझ से बोल : धर्मस्थान चलिए। गया तो हैरान हो गया। वे उसी चर्च में ले गए थे उसको अब ईसाइयों ने बेच दिया था। अब स्थान मंदिर हो गया था। मैंने उनसे पूछा, यह वही जगह है, जहां मैं पहले आया था। उस समय आप नाराज हुए थे। इस बार इस जगह आप

बड़ी खुशी से मुझे लेकर आए हैं। इस जगह में तो कोई भी फर्क नहीं पड़ा है। उन्होंने कहा : बहुत फर्क पड़ गया है, पहले चर्च था अब पवित्र मंदिर है।

जिनकी बुद्धि इन तख्तियों में लटकी हो, उनको भी कभी आत्मा से संबंध हो सकता है? यह असंभव है लेकिन यह तख्ती तुम्हें भी सिखाई जा सकती है, इस नाम पर कि तुम्हें धार्मिक शिक्षा दी जा रही है और यह खतरनाक होगी। यह कोई धार्मिक शिक्षा नहीं है। बच्चों को सिखाया जाना चाहिए कि तुम भीतर कैसे जा सको और यह बड़े मजे की बात है कि बूढ़े की बजाए बच्चे बड़ी आसानी से आत्म प्रवेश कर सकते हैं, क्योंकि बूढ़ों की बजाय बच्चे ज्यादा सरल हैं, ज्यादा सौम्य हैं, ज्यादा भावयुक्त हैं। इसलिए बच्चों में बहुत शीघ्रता से भीतर प्रवेश हो सकता है। बच्चे बहुत शीघ्रता से ध्यान में और सामायिक में प्रवेश पा सकते हैं। लेकिन बच्चे को कोई सिखाने वाला नहीं है। और सिखाएगा कौन? क्योंकि जो सिखानेवाला है उसे भी कोई पता नहीं। वह शिक्षक जो बच्चों के लिए धर्म शिक्षा के लिए नियुक्त किया गया है उसका भी आत्मा से कोई संबंध नहीं। और यही सारी कठिनाई हो गई है।

शिक्षकों को भी पुनः स्थिति होने की आवश्यकता है। लेकिन यदि वे सोच विचार करें तो वे स्वयं ही सम्यक दिशा में दीक्षित हो सकते हैं। वे स्वयं ही अपने विवेक को जागृत कर सकते हैं। और जिन शिक्षकों की ध्यान में गति हो, वे छोटे-छोटे बच्चों को ध्यान में ले जा सकते हैं। ध्यान कठिन भी नहीं है। ध्यान अत्यंत सरल प्रक्रिया है और एक बार उसकी छोटी सी भी झलक मिल जाए तो उसे छोड़ना कठिन है। एक बार थो.डा सा आनंद मिल जाए तो मनुष्य का मन ऐसा है कि वह अपने आप आनंद की तरफ बहता है। मैं यहां बोल रहा हूं और एक व्यक्ति पास में वीणा बजाने लगे तो आप में से बहुतों का मन उसकी तरफ अपने आप बह जाएगा। क्योंकि वीणा मग जो आनंद की झलक है वह मन को अपने भीतर की ओर ले जाती है। एक बार पता चल जाए कि भीतर एक आनंद है, उसकी थोड़ी सी भी झलक तुम्हीं मिल जाए तो तुम्हारा मन बार-बार वहीं लौट जाता है। दुनिया में बहुत से कामों के बीच चौबीस घंटे में यदि दो चार बार भी मन भीतर प्रवेश कर जाए तो जीवन में एक ताजगी होगी, एक आनंद होगा, जो अदभुत होगा। इस ताजगी और आनंद का यह परिणाम होगा कि तुम्हारे भीतर क्रोध और वासनाएं क्षीण होती चली जाएगी।

गुरुकुल के भीतर सर्वाधिक महत्वपूर्ण यह नहीं है कि बहुत बड़े मकान बनाए जाए, यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वहां धर्म की शिक्षा दी जाए। यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि वहां खास ढंग से कपड़े पहनाए जाए, खास तरह का खाना खिलाया जाए, खास समय पर उठा जाए, ये सब बातें बहुत महत्वपूर्ण नहीं हैं। यह जीवन का अत्यंत क्षुद्र अनुशासन है। और इनमें ही यदि विद्यार्थियों को बहुत अधिक बांध दिया जाए तो बाद में वे ऊंचा उठने में असमर्थ हो जाते हैं। विवेकानंद से किसी ने अमेरिका में पूछा कि आपके देश में धर्म की बहुत चचा है, लेकिन धार्मिक लोग तो दिखाई नहीं पड़ते? विवेकानंद ने कहा कि : मेरे देश मग दुर्भाग्य हो गया है, मेरे देश का सारा धर्म चौके और चूल्हे का धर्म हो गया है। इसलिए सब गड़बड़ हो गई है। हमारा। मन चौके औ

र चूल्हे में उलझ गया है। हमारा सारा चिंतन एक जगह केंद्रित है : क्या खाओ, क्या न खाओ, किस समय खाओ और किस समय न खाओ। यह सब अच्छी बातें हो सकती हैं लेकिन खतरा यह है कि तुम्हारा मन इन्हीं सारी बातों में उलझ जाए तो तुम इनसे ऊपर उठकर विराट शक्ति तक न पहुंच पाओगे।

गुरुकुल में जीवन की बहुत बुनियादी शिक्षा दी जानी चाहिए। मात्र आजीविका की शिक्षा पूरी शिक्षा नहीं है। तुम पांच-छह वर्षों तक रहोगे इस बीच तुम किसी न किसी तरह आत्मा से संबंधित होने के मार्ग को पा जाओ तो इसको मैं जीवन की शिक्षा और साधना कहूंगा। यही धर्म की साधना है। जीवन जीने की सम्यक कला ही तो धर्म है। धर्म जीवन विरोधी नहीं है। और जो धर्म जीवन विरोधी हो उसे धर्म ही न जानना। वह जरूर मृत्युमुख रुग्ण मस्तिष्कों की उपज होगा। ऐसी मृत्युमुख शिक्षाओं ने ही जीवन से धर्म का संबंध तोड़ दिया है। फिर शिक्षाओं को जबरदस्ती ही थोपना पड़ता है। क्योंकि हमारे भीतर जो जीवन है, वह उनका विरोध करता है।

सम्यक धर्म का तो जीवन में सदा स्वागत है क्योंकि वैसे धर्म के आधारों पर ही तो जीवन आनंद को, सौंदर्य को, सत्य को और अमृतत्व को उपलब्ध होता है। मिथ्या धर्म सदा ही नकारात्मक होता है। यही उसकी पहचान है। सम्यक धर्म होता है सदा विधायक। मिथ्या धर्म आत्म कलह में डालता है। वह कहता है यह न करो, वह न करो। विधायक धर्म आत्मसृजन में संलग्न करता है। वह जीवन की सभी शक्तियों को ऊर्ध्वमुखी बनाता है। वह कहता है : यह करो, यह करो, यह करो। वह छोड़ने को नहीं, पाने को कहता है। उसका जोर सदा ऊपर उठने पर होता है। निश्चय ही जो ऊपर उठता है, उससे बहुत कुछ अपने आप छूटता जाता है। लेकिन बल पाने के लिए है, खोने के लिए नहीं। वह कहता है : संसार को नहीं छोड़ना है बल्कि परमात्मा को पाना है।

इस संबंध में यह ध्यान रहे कि धर्म की साधना बच्चों पर थोपी न जाए क्योंकि जो थोपा जाता है प्राण उसके प्रति विरोध से भर जाते हैं। छोटे छोटे बच्चों के प्राण भी विरोध से भर जाते हैं और फिर यह विरोध जीवन भर उनके साथ रहता है। मैं एक बार थोड़े दिन के लिए एक संस्कृत महाविद्यालय में था। वहां के छात्रालय में १०० के करीब विद्यार्थी थे। वे सभी विद्यार्थी शासन से छात्रवृत्ति पाते थे। छात्रवृत्ति के कारण उनसे कुछ भी करवाया जा सकता था। उन्हें तीन बजे रात्रि से उठकर स्नान करके प्रार्थना करनी पड़ती थी। सर्दियों के दिन थे। पहले ही दिन जब मैं स्नान करने कुएं पर गया तो एकदम अंधकार था। मैंने देखा कि विद्यार्थी वहां स्नान भी करने जाते थे और प्रिन्सिपल से लेकर परमात्मा तक को गालियां भी देते जाते थे। यह स्वाभाविक ही था। उस गहरी सर्दी में स्नान करने के लिए बाध्य करने में प्रिन्सिपल का हाथ था, इसलिए वे पुरस्कार स्वरूप प्रिन्सिपल को गालियां देते थे और प्रिन्सिपल के सत्संग के कारण बेचारे परमात्मा को भी गालियां खानी पड़ती थी।

धर्म के प्रति अरुचि पैदा करना बहुत आसान है। प्रश्न तो है रुचि पैदा करने का। और धार्मिक शिक्षा देनेवाले रुचि पैदा करने में अक्सर ही असफल होते हैं। शायद मनुष्य

के मन के अत्यंत सीधे सादे नियमों पर भी हम ध्यान नहीं देते है, इसीलिए उस महा विद्वालय में जिस भांति प्रार्थना करवाई जा रही थी, उससे प्रार्थना के साथ भावों का संबंध होना असंभव है। प्रार्थना तो प्रेम और आनंद से स्फुरित हो, तो ही सार्थक हो स कती है। इसलिए मेरा कहना है: बच्चों के साथ जल्दबाजी न करना। भय से, दंड से, धर्म का संबंध न जोड़ना। ऐसी बातें उनके चित्त को सदा के लिए अधार्मिक बना देत ी हैं। मैंने उस महाविद्यालय के प्रिन्सिपल को यह कहा था तो वे मानने को राजी नह ीं हुए थे, उल्टे उन्होंने कहा: हम कोई जबरदस्ती नहीं करते हैं। मैंने कहा: एक सूच ना निकालिए कि कल से जिसे स्वेच्छा से प्रार्थना में आना हो वे ही आवें। सूचना निक ली गई। दूसरे दिन १०० में से एक भी नहीं आया। तब वे हैरान हुए। मैंने कहा: ऐ सी प्रार्थना का क्या मूल्य है? फिर मैं उन बच्चों को सुबह ७ बजे लेकर प्रार्थना के ि लए बैठता था। प्रार्थना क्या थी, बस हम मौन होकर बैठते और सुबह की चिड़ियों के गीत सुनते। प्रभातकालीन मौन में बच्चों को आनंद आने लगा। धीरे धीरे वे सभी बच चे स्वेच्छा से सम्मिलित होने लगे। यदि किसी दिन कोई बच्चा न आ पाता तो दुखी ह ोता, क्योंकि सुबह की प्रार्थना का जो आनंद था, उसकी कमी उसे दिन भर खलती। उस छात्रावास में प्रार्थना एक आनंद हो गई। वे क्षण अमूल्य हो गए। उस आनंद और शांति के लिए बच्चे के हृदय सहज ही परमात्मा के प्रति कृतज्ञात से भर जाते थे। और ये वे ही बच्चे थे जो पहले परमात्मा को गालियां देते थे।

गुरुकुल जैसे स्थानों में जबरदस्ती जरा भी नहीं होनी चाहिए। और धर्म के संबंध में त ो जरा भी नहीं होनी चाहिए। इस बात से बहुत बड़ी हानि नहीं है कि बच्चा देर तक सोता रहा, लेकिन हम बात से हानि है कि बच्चा जबरदस्ती उठाया गया। देर से सो ने में दुनिया में कोई हानि नहीं हुई। दुनिया में बहुत से महापुरुष देर से सोकर उठते रहे हैं। देर से उठने या जल्दी उठने का इतना महत्वपूर्ण मामला नहीं है। यह ठीक है कि कोई जल्दी उठे, सुखद है, स्वास्थप्रद है, लेकिन कोई बड़ी हानि नहीं होती है। ले किन मैं यह कहना चाहता हूं कि बच्चों के साथ किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं होनी चाहिए। शिक्षक और मां-बाप बच्चों के साथ बहुत प्रकार की हिंसा करते हैं, और उ नको खयाल नहीं होता कि वे हिंसा कर रहे हैं। वे समझते हैं कि बहुत प्रेम प्रकट कर रहे हैं। वे समझते हैं कि हम बच्चों को बड़ा सुधार रहे हैं। अगर इस ढंग से बच्चे सु धरे होते तो आज सारी दुनिया सुधर गई होती। दुनिया तो सुधरती नहीं और आप उ न्हें सुधार जा रहे हैं। आपके सुधार में जरूर गड़बड़ होगी। और अक्सर यह होता है ि क जो मां-बाप बच्चे को सुधारने में लगे हैं, उनके बच्चे उतने बिगड़ते हैं, जितने दूस रे के नहीं बिगड़ते हैं।

अति अनुशासन के घातक परिणाम होते हैं। अनुशासन की जगह बच्चों के विवेक को जगाए। उनमें स्वयं की विचार शक्ति को पैदा करें। यांत्रिक अनुशासन नहीं, चाहिए स जग विवेक। लेकिन यांत्रिक अनुशासन थोपना आसान है, इसलिए हम उसे ही चुन ले ते हैं। नहीं मित्रों, चाहे विवेक जगाना कितना ही कठिन हो, और उसके लिए कितना ही श्रम और प्रतीक्षा करनी पड़े, तो भी यांत्रिक अनुशासन चुनना उचित नहीं है। म

नुष्य की विकृति में यांत्रिक अनुशासन से अधिक और किसी चीज का हाथ नहीं है। य ांत्रिक अनुशासन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही अच्छृंखलता खड़ी होती है। क्या आज तक य ही नहीं देखा गया कि जिनके मां-बाप बच्चों को सुधारने में लग जाते हैं, उसके विपर ीत ही बच्चे खड़े होते हैं? इसके पीछे कारण हैं। क्योंकि अच्छा करने के पीछे आप ब च्चों के साथ हिंसा करने लगते हैं, क्योंकि आपके पा ताकत है—लेकिन बच्चा प्रतिहिंस ा को इकट्ठी करता रहेगा और वह आज नहीं कल उसका बदला लेगा और बदला ख तरनाक होगा। जब भी लड़के के हाथ में ताकत आएगी वह आपके विरोध में खड़ा ह ो जाएगा। और जो जो आपने सिखाया था, उसके उल्टा वह चलने लगेगा। दुनिया में इतनी अनैतिकता है, दुनिया में इतनी अनुशासनहीनता है, लड़के आज्ञा तोड़ रहे हैं, लड़के मां-बाप की मर्यादाएं नष्ट कर रहे हैं। इसमें मां-बाप और शिक्षक का ही हाथ है। सारी मर्यादाएं जबरदस्ती थोपी जा रही हैं और उनके विरोध में प्रतिक्रिया खड़ी ह ोती है।

इन बच्चों के साथ आपकी बहुत बड़ी कृपा यह होगी कि इन बच्चों के साथ किसी भी तरह हिंसा का वातावरण गुरुकुल में न हो। इन पर किसी भी प्रकार का बलपूर्वक अनुशासन न हो। अच्छे करने के लिए भी नहीं, क्योंकि दुनिया में जबरदस्ती से कोई कभी अच्छा हुआ ही नहीं है। आप कहेंगे कि फिर तो स्वच्छंदता हो जाएगी, फिर इन बच्चों का क्या होगा? तो मैं यह निवेदन करूं कि बच्चे प्रेम से बदलते हैं, जबरदस्ती से नहीं। जितना ज्यादा से ज्यादा प्रेम दिया जा सके, उतना वे अनुगृहीत होते हैं। जि तनी स्वतंत्रता दी जा सके, उतना वे आदर से भरते हैं। जितना बच्चों को ज्यादा ज्या दा प्रोत्साहन दिया जा सके, मुक्त किया जा सके, उतना ही उनके मन में पैदा होती है और वे मानने को तैयार होते हैं। बच्चों को जितना ज्यादा दबाया जाए उतना ही ि वरोध पैदा होती है।

फ्रायड का नाम आपने सुना होगा। वह बहुत बड़ा मनोवैज्ञानिक हो गया है। एक दिन वह, उसकी पत्नी और उसका बच्चा बगीचे में घूमने गए। जब रात हो गई और वे घर को लौटने लगे तो बच्चा दिखाई नहीं दिया। पत्नी घबड़ाई गई और बोली : अब बच्चे को कहां खोजें? क्या आप सोच सकते हैं कि फ्रायड ने क्या पूछा? उसने पूछ : तुमने बच्चे को कहीं जाने के लिए मना तो नहीं किया था? पत्नी ने कहा : बड़े फुहा रे पर जाने के लिए मना किया था। फ्रायड बोला : तो चलें, वहीं चल कर देख लें। व ह वहां फुहारे पर पैर लटकाए बैठा हुआ था। उसकी पत्नी बोली कि आपने कैसे पहच ान लिया कि बच्चा बड़े फुहारे पर ही गया होगा? फ्रायड ने कहा कि पूरी मनुष्य जाि त का अनुभव यही है। जिन बातों के लिए मां-बापों ने मना किया, बच्चे वहीं गए। इ सलिए मना करनेवाले मां-बाप जिम्मेवार हैं। उनकी मनाही में जिम्मा है।

बच्चे वहां जाएंगे जहां मना किया गया है। मना करते वक्त जरा सोच समझ कर ही मना करना। क्योंकि हम जिस बात को कह रहे हैं मत करो, वह करने की प्रेरणा बन रही है। बच्चे के मन में यह बात बल पकड़ रही है कि वहां कुछ होगा, कुछ रहस्य पूर्ण, जानने जैसा और कुछ करने जैसा। आप उसके भीतर खोज को जगा रहे हैं। भी

तर जिज्ञासा को जगा रहे हैं। दुनिया में जो पतन हुआ है, वह मत करो की शिक्षा के कारण ही हुआ है। अभी भी धर्म-गुरु, संन्यासी यह कहते हैं कि यह मत करो, वह मत करो, इन सब बातों का परिणाम यह हो रहा है कि पतन रोज करीब आता जा रहा है। मनुष्य नीचे गिरता जा रहा है।

मत करो कि शिक्षा से विषाक्त और जहरीली शिक्षा न कोई है, न हो सकती है। इस लिए इन बच्चों को मत करो की शिक्षा देना ही नहीं। इन बच्चों की यह सिखाना कि कुछ चीजें करने जैसी हैं। यह मत सिखाओ कि कौन सी चीजें न करने जैसी हैं। नक ारात्मक नहीं, विधायक शिक्षा होनी चाहिए। दुनिया में कौन सी चीजें करने जैसी हैं और उन चीजों में कौन सा आनंद है, उस आनंद की ओर इन्हें प्रेरित करें। बच्चों से यदि यह कहें कि मांस मत खाना तो वह मांस अवश्य ही खाएंगे। उन्हें यह कहा जाए कि शराब मत पीना तो वे आज नहीं कल शराब जरूर पीएंगे। इसमें कसूर होगा उ न लोगों का जो इन्हें समझा रहे हैं, सिखा रहे हैं। उनको क्या सिखाया जाए फिर। बच्चों को कुछ करने के लिए बताया जाए, न झरने के लिए नहीं। जीवन के सृजनात मक द्वार उनके लिए खोले जावें। निषेध नहीं, विधेय ही शिक्षा का लक्ष्य हो। उन्हें सृ जनात्मक आनंद की ओर उन्मुख किया जाए। फिर तो वे दुख से और अशांति से स्वयं ही दूर रहेंगे। उन्हें प्रकाश के लिए दीक्षित किया जाए फिर तो अंधकार उन्हें खुद ही प्रीतिकर न रहेगा। और हम करते हैं उल्टा ही। प्रकाश की दीक्षा तो नहीं देते, हां अंधकार से बचने की शिक्षा जरूर देते हैं।

एक बार एक मित्र मेरे पास आए। उन्होंने आकर कहा कि मैं बहुत दिनों से आपके प ास आना चाहता था, लेकिन नहीं आया कि आपके पास आऊंगा तो आप मांस और शराब छोड़ने के लिए कहेंगे। ये दोनों काम मैं करता हूं। मैंने कहा कि: जिंदगी में मैं ने तो कभी नहीं कहा कि यह छोड़ो, यह मत करो वे बोले कि यह जैसे ही ज्ञात हुअ ा मैं आपके पास आ गया हूं। उन्होंने कहा, मेरा मन बड़ा अशांत है। मैंने उनसे ध्यान करने के लिए कहा। मन कैसे शांत हो, इसके बारे में कहा। उन्होंने कहा कि इसके ि लए मांस और शराब पीना छोड़ना तो जरूरी नहीं है? मैंने कहा: बिलकुल नहीं। तीन बाद वापिस लौटे तो कहने लगे कि जैसे जैसे मन शांत होता गया, शराब पीना मुश्कि कल हो गया। शांत मन का व्यक्ति शराब ही नहीं पी सकता। छोड़नी ही पड़ती है। प ीने का कारण ही नहीं रह जाता। अशांत मन भूलना चाहता है अपने को, इसलिए श राब पीता है, सिनेमा देखता है, गाना सुनता है। यह सब भूने की तरकीबें हैं। अगर भूने की तरकीबें छीन ली जाए तो वह पागल हो जाएगा। मन अगर शांत है तो भुला ने के लिए उपाय करने की जरूरत ही नहीं है। उन्होंने मुझसे कहा: शराब तो गई, क या मांसाहार भी छोड़ना पड़ेगा? मैंने कहा, मुझको पता नहीं। अभी भी आपकी मर्जी हो तो ध्यान छोड़ दे। उन्होंने कहा: अब ध्यान छोड़ना कठिन है। क्योंकि भीतर मुझे आनंद झरता हुआ मालूम होता है। वे तीन माह बाद वापिस लौटे और कहने लगे कि मांस खाना भी कठिन हो गया है। कल एक मित्र के साथ पार्टी में गया था। पार्टी

में मांस खाने का आग्रह हुआ। मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि मैंने पहले मांस कैसे खा या होगा। और मुझे ग्लानि होने लगी। घर लौटते ही मुझे कै हो गई।
यह निश्चित है कि मन जब शांत होगा तो दूसरे को दुख देना असंभव हो जाता है। मन जब अशांत होता है, तो दूसरों को दुख देने में मजा आता है। यह सब भीतर अ शांति के कारण होता है। तो बच्चों को विधायक रूप से शांति होने का उपाय समझा इए। उन्हें जीवन में शांत होने की प्रक्रिया दें। शांत चित्त ही समग्र बुराइयों और पापों के प्रति एकमात्र सुरक्षा है। इसके लिए एक ही उपाय है कि नकारात्मक शिक्षा को क्षीण करें। बच्चों के जीवन में आनंद जगाए। और जहां आनंद है, जहां शांति है, जहां बच्चों के भीतर विवेक है, वहां बच्चों को बुरे काम करने की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती। लेकिन हम सिखाते हैं बुरे काम मत करो। हम गलत ही बात सिखाते हैं। औ र जब आदमी को गलत बातें करता देखते हैं तो जमाने को दोष देते हैं। कोई जमाने को खराबी नहीं है। क्योंकि हमारे दृष्टिकोण, हमारे आधार सबके सब गलत हैं। ये ह ी बच्चे अदभुत रूप से शांत, अदभुत रूप से मानवी गुणों को उपलब्ध हो सकते हैं। क योंकि आज हम जो भी कर रहे हैं गलत है, परिणाम भी गलत निकल रहे हैं।
विधायक रूप से बच्चों के जीवन में कुछ करने की चेष्टा की जो तो यह गुरुकुल है, वरना गुरुकुल नाम ही रह जाता है। जैसे और स्कूल हैं, वैसे ही यह भी स्कूल है। हो सकता है, आप इस पर चिंतन करेंगे, विचार करेंगे, कुछ रास्ता खोजेंगे तो बच्चों क ो तेजस्वी जीवन दिया जा सकता है कि सारे देश में गुरुकुल के बच्चे अलग से दिखाई पड़ें। गुरुकुल के बच्चे यहां की खबर ले जावें, यहां की हवा ले जावें, यहां की सुगंध ले जावें और जहां जावें वहां यह स्पष्ट प्रतीति हो कि इन्होंने जीवन दृष्टि और तरह की पाई है, इन्होंने और तरह का व्यक्तित्व पाया है।
इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आप में से दो चार डाक्टर हो जाएंगे। बहुत डाक्टर हैं दुनिया में, उससे क्या फर्क पड़ने वाला है। तुममें से दो चार इंजीनियर हो जावेंगे, द ो चार युरोप चले जाएंगे। इससे फर्क पड़ने वाला है? लौटकर आएंगे तो और शोषण करेंगे, और उपद्रव करेंगे, समाज का और पैसा छीनेगा और कुछ नहीं करेंगे। यह को ई मूल्य की बात नहीं कि हमारे गुरुकुल से इतने डाक्टर होगे, इतने इंजीनियर होगे, इतने मिनिस्टर हो गए। क्या मिनिस्टर होना बहुत अच्छी बात है? रोज मिनिस्टर को देखते हो और फिर भी ऐसा सोचते हो तो अंधे हो। राजनीतिज्ञों के कारण ही तो म नुष्यता संकट में है। राजनीतिज्ञों के कारण ही दुनिया युद्धों में है। सो इस बात का वि लकुल गौरव मत मानना कि तुम्हारे गुरुकुल से कोई बड़ा राजनीतिज्ञ पैदा हो गया है। इससे तो शर्मिंदा ही होना है। डाक्टर और इंजीनियर तो फिर भी ठीक है, यह मिनि स्टर तो बिलकुल भी ठीक नहीं है। मैं तो चाहूंगा कि तुम इतने अच्छे आदमी बनना ि क तुम में से कोई भी मिनिस्टर न होना चाहे।
महत्वाकांक्षा तो रोग है और वह केवल उनमें ही जड़ पकड़ता है जो कि स्वयं में हीन ग्रंथि से पीड़ित होते हैं। महत्वाकांक्षा भी विक्षिप्तता का एक प्रकार है। स्वस्थ चित्त व यक्ति महत्वाकांक्षी नहीं होता है। शिक्षा सम्यक हो तो जीवन में महत्वाकांक्षा का को

ई स्थान न होना चाहिए। जीओ—गहरा से गहरा जीवन जीओ। लेकिन पद पर यश के लिए जो जीता है, वह जो गहरा कभी भी नहीं जी पाता है। वह तो अत्यंत उथले में जीता है। उसका कोई जीवन थोड़े ही है। वह तो महत्वाकांक्षा से खींचा जाता है। जीवन उसका एक शांति और आनंद नहीं बल्कि एक तनाव और पीड़ा है। इसलिए ि कतने महत्वाकांक्षी पागल पैदा किए गए, इससे गुरुकुल की प्रतिष्ठा बढ़ने वाली नहीं है। यह एक धर्म प्रतिष्ठान है, इसके लिए कोई और गौरव निर्मित करें। यह एक आद र की बात होगी कि गुरुकुल से निकला हुआ विद्यार्थी महत्वाकांक्षी न हो, पदाकांक्षी न हो, धनाकांक्षी न हो तो हम कह सकते हैं हमारे गुरुकुल से निकला हुआ विद्यार्थी महत्वाकांक्षी न हो, पदाकांक्षी न हो, धनाकांक्षी न हो तो हम कह सकते हैं कि हमारे गुरुकुल से निकला विद्यार्थी विक्षिप्त नहीं है, स्वस्थ चित्त है।

बच्चों को महत्वाकांक्षा नहीं, प्रेम सिखाइए। बच्चों को प्रथम आने की दौड़ में मत लग ाइए। बच्चों को अंतिम खड़ा होने की सामर्थ्य और बल सिखाइए। क्राइस्ट ने कहा है : धन्य हैं वे लोग, जो अंतिम खड़ा होने में समर्थ हैं। उन लोगों को धन्य नहीं कहा जो प्रथम खड़े हो जाते हैं। क्राइस्ट ने उन लोगों को धन्य कहा है जो अंतिम खड़े होने में समर्थ हैं। गुरुकुल तो वह होगी कि बच्चे को हम यह सिखो कि वह सब भांति के पा गलपनों में दूर पीछे खड़े रहने में समर्थ हों। वह प्रेम में इतना आगे हो कि प्रतिस्पर्धा में पीछे खड़ा हो सके। लेकिन हम तो प्रतिस्पर्धा सिखाते हैं, प्रेम नहीं, और तब यदि हमारी सभ्यता रोज युद्धों में पड़ जाती हो तो आश्चर्य नहीं। शायद हम सोचते हैं कि बिना स्पर्धा के तो कुछ सिखाया ही नहीं जा सकता है, लेकिन यह भूल है। स्पर्धा का ज्वर पैदा करके जो सिखाया जाता है, वह सब घातक है, क्योंकि फिर वह ज्वर जी वन भर नहीं उतरता है। सहयोगियों से स्पर्धा नहीं, वरन जो सिखाया जा रहा है, उस के प्रति प्रेम और आनंद पैदा करें। संगीत साथियों से स्पर्धा में भी सीखा जा सकता है और संगीत के प्रेम में भी। ऐसे ही गणित भी और ऐसे ही शेष सब कुछ निश्चय ही संगीत से प्रेम में भी एक स्पर्धा होगी, लेकिन वह स्वयं से ही होगी। वह होगी स्वयं को ही निरंतर अतिक्रमण करने की। मैं जहां आज हूं वहां कल मैं न रहूं। मैं जहां क ल था, वही आज भी न ठहरा रहूं। ऐसी आत्मस्पर्धा शुभ है। लेकिन दूसरों से जो प्रति योगिता है, वह जीवन को बहुत दुखों और तनावों में ले जाती है, क्योंकि उस सारी दौड़ का केंद्र अहंकार है और अहंकार नर्क का मार्ग है।

लेकिन अभी तो सभी भांति परोक्ष अपरोक्ष अहंकार ही सिखाया जाता है। वह देखो— दीवाल पर क्या लिखा है? लिखा है : राजा तो केवल अपने ही देश में लेकिन विद्वान सर्वत्र पूजता है। इसका क्या अर्थ है, क्या प्रयोजन है? निश्चय ही एक ही अभिप्राय है कि विद्वान बनो। लेकिन क्या पूजने की, पूजा पाने की इच्छा कोई शुभेच्छा है? इस भांति त्याग की शिक्षा भी दी जाती है। त्यागी बनो क्योंकि त्यागी पुजता है। लेकिन जो पूजना चाहता है क्या वह ज्ञानी या त्यागी हो सकता है? पूजा जाने की इच्छा त ो अत्यंत गहरे अज्ञान और मूढ़ता से उत्पन्न होती है। वह तो निपट अहंकार है। और अहंकार से बड़ा न दुख है न दारिद्रय है, न दुर्भाग्य है।

सम्यक शिक्षा अहंकार से मुक्तदायी होनी चाहिए। क्या यह गुरुकुल ऐसे बच्चे पैदा नह
ीं करेगा जो निरहंकारी हों? यह एक बात ही हो सके तो जीवन में क्रांति हो जाती
है। क्या हम ऐसे बच्चे तैयार नहीं कर सकते हैं जो सरल हों, सहज हों और जिन्हें ज
ीवन में—दैनन्दिन जीवन में आनंद हो? परमात्मा के सौंदर्य को जानने में उसके संगीत
को अनुभव करने में केवल वे ही सफल हो सकते हैं जो कि सहज और सरल हैं।
मैं बहुत आशाओं से भरा हुआ आपसे विदा लेता हूं। मनुष्य तो अनगढ़ पत्थरों की भां
ति है। मैं अभी यहां की गुफाओं से लौटा हूं। उन पत्थरों को सृष्टा कारीगर मिल गए
इसलिए वे साधारण से पोषण प्रतिमाएं बनकर अप्रतिम सौंदर्य को उपलब्ध हो गए हैं
। प्यारे बच्चो, तुम्हारा जीवन भी ऐसे ही सौंदर्य को प्राप्त कर सकता है। लेकिन तुम्हें
अपना सृष्टा बनना होगा। निश्चय ही तुम्हारे शिक्षक, तुम्हारा गुरुकुल, तुम्हारे मां-बा
प इसमें बहुत सहयोगी हो सकते हज, लेकिन फिर भी अंतिम जिम्मेवारी तो तुम पर
ही है।
मनुष्य के निर्माण में वह स्वयं ही पत्थर है और स्वयं ही कारीगर और स्वयं ही वे उ
पकरण, जिनसे कि एक पाषाण प्रतिमा में परिवर्तित होता है।
आनंद खोज की सम्यक दिशा
अनेक लोगों के मन में यह प्रश्न उठता है कि जीवन में सत्य को पाने की क्या जरूर
त है? जीवन इतना छोटा है उसमें सत्य को पाने का श्रम क्यों उठाया जाए? जब सि
नेमा देखकर और संगीत सुनकर ही आनंद उपलब्ध हो सकता है, तो जीवन को ऐसे
ही बिता देने में क्या भूल है?
यह प्रश्न इसलिए उठता है, क्योंकि हमें शायद लगता है कि सत्य और अलग अलग
हैं। लेकिन नहीं, सत्य और आनंद दो बातें नहीं हैं। जीवन में सत्य उपलब्ध हो तो ही
आनंद उपलब्ध होता है। परमात्मा उपलब्ध हो तो ही आनंद उपलब्ध होता है। आनं
द, सत्य या परमात्मा एक ही बात को व्यक्ति करने के अलग अलग तरीके हैं। तब
इस भांति न सोचें कि सत्य की क्या जरूरत है? सोचें इस भांति कि आनंद की क्या
जरूरत है? और आनंद की जरूरत तो सभी को मालूम पड़ती है, उन्हें भी जिनके म
न में इस तरह के प्रश्न उठते हैं। संगीत और सिनेमा में जिन्हें आनंद दिखाई पड़ता है
उन्हें यह बात समझ लेना जरूरी है कि मात्र दुख को भूल जाना ही आनंद नहीं है। ि
सनेमा, संगीत या इस तरह की और सारी व्यवस्थाएं केवल देख को भुलाती हैं, आनं
द को देती नहीं। शराब भी दुख को भूला देती है, संगीत भी, सिनेमा भी, सेक्स भी।
इस तरह दुख को भूल जाना एक बात है और आनंद को उपलब्ध कर लेना बिलकु
ल ही दूसरी बात है।
एक आदमी दरिद्र है और वह अपनी दरिद्रता को भूल जाए यह एक बात है, और व
ह समृद्ध हो जाए यह बिलकुल ही दूसरी बात है। दुख को भूल जाने से सुख का भान
पैदा होता है।सुख केवल दुख का विस्मरण (थवतहमज-थनसनमे) मात्र है। और आनं
द? आनंद बात ही अलग है, वह किसी चीज का विस्मरण नहीं, स्मरण है। वह किसी

बीज की उपलब्धि है, विधायक उपलब्धि। आनंद विधायक (ढवेपजपअम) है, सुख न कारात्मक (छंहंजपअम) है।

एक आदमी दुखी है। इस दुख को हटाने के दो उपाय हैं। एक उपाय तो यह है कि व ह जाए और संगीत सुने या किसी और चीज में इस भांति डूब जाए कि दुख की उसे याद ही न रहे। संगीत में इतना तन्मय हो जाए कि उसका चित्त दूसरी तरफ जाना बंद कर दे, तो उतनी देर को उसे दुख भूला रहेगा लेकिन इससे दुख मिटता नहीं है। संगीत से जैसे ही चित्त वापस लौटेगा, दुख अपनी पूरी ताकत से पुनः खड़ा हो जाए गा। जितनी देर वह संगीत में अपने को भूला था, उतनी दूर भीतर दुख सरक रहा थ ा, संगृहीत हो रहा था। जैसे ही संगीत से मन हटेगा दुख अपने दुगुने वेग से सामने ख. डा हो जाएगा। अब उसे पुनः विस्मृत। करने के लिए किसी ज्यादा गहरे भुलावे की ज रूरत पड़ेगी। तो फिर शराब है, और दूसरे रास्ते हैं जिनसे चित्त को बेहोश किया जा सकता है। लेकिन स्मरण रहे यह बेहोशी आनंद नहीं है। बल्कि सचाई तो यह है कि जो आदमी जितना ज्यादा दुखी होता है उतना ही स्वयं को भूलने का रास्ता खोजता है। दुख से ही यह पलायन निकलता है। दुख से ही कहीं डूब जाने की, भागने की अ ौर मूर्छित हो जाने की आकांक्षा पैदा होती है।

दुख से ही लोग भागते हैं। सुख से तो कोई भागता नहीं। तो अगर आप यह कहते हैं कि जब मैं सिनेमा में बैठता हूं तो बहुत सुख मिलता है तो स्वभावतः ही प्रश्न उठत ा है कि जब आप सिनेमा में नहीं होते तब क्या मिलता होगा? तब निश्चित ही दुख मिलता होगा। यह इस बात की ही घोषणा है कि आप दुखी है। लेकिन सिनेमा में बैठ कर दुख मिट कैसे जाएगा? दुख की धारा तो भीतर सरकती रहेगी। हां, जितने ज्याद ा आप दुखी होंगे सिनेमा में उतना ही ज्यादा सुख अनुभव होगा। जो सच में आनंदित है उसे तो शायद को सुख प्रतीत नहीं होगा। और ये जो हमारी दृष्टि है कि इसी त रह हम अपना पूरा जीवन क्यों न बिता दें—मूर्छित होकर, भूल कर, तब तो उचित है कि एक आदमी जीवन भर सोया रहे सिनेमा की भी क्या जरूरत है? और अगर जी वन भर सोना कठिन है तो फिर जीने की भी क्या जरूरत है? मर जाए और जब में सो जाए तो सारे दुख भूल जाएंगे। इसी प्रवृत्ति से आत्मघात की भावना पैदा होती है। सिनेमा देखने वाला, शराब पीने वाला और संगीत में डूबने वाला आदमी अगर अपने तर्क की अंतिम सीमा पर पहुंच जाए तो वह कहेगा : जीने की जरूरत क्या है? जीने में दुख है तो मरा जाता हूं। यह सब आत्मघाती (एनपबपकम) प्रवृत्तियां है। जब भी हम जीवन को भूलना चाहते हैं तभी हम आत्मघाती हो जाते हैं। लेकिन जीवन का आनंद उसे भूलने में नहीं उसकी परिपूर्णता में उसे जान लेने में है।

एक बहुत बड़ा संगीतज्ञ हुआ। उसकी अनोखी शर्त हुआ करती थीं। एक राजमहल में वह अपना संगीत सुनाने को गया। उसने कहा कि मैं एक ही शर्त पर अपनी वीणा ब जाऊंगा कि सुननेवालों में से किसी का भी सिर न हिले। और अगर कोई सिर हिला तो मैं वीणा बजाना बंद कर दूंगा। वह राजा भी अपनी ही तरह का था। उसने कहा

वीणा रोकने की कोई जरूरत नहीं। हमारे आदमी तैनात रहेंगे और जो सिर हिलेगा वे उस सिर को ही काट कर अलग कर देंगे।

संध्यान सारे नगर में यह सूचना करवा दी गई कि जो लोग सुनने आए थोड़ा समझ कर आए, अगर संगीत सुनते वक्त कोई सिर हिला तो वह अलग करवा दिया जाएगा । लाखों लोग संगीत सुनने को उत्सुक थे। उतना बड़ा संगीतज्ञ गांव में आया था। सब को अपने दुख को भूलने का एक सुअवसर मिला था। कौन उसे चूकना चाहता? लेकिन इतनी दूर तक सुख लेने को कोई भी राजी न था। गर्दन कटवाने के मूल्य पर संगीत सुनने को कौन राजी होता? भूल से गर्दन हिल भी सकती थी। और हो सकता है सिर संगीत के लिए न हिला हो, मक्खी बैठ गई हो और गर्दन हिल गई हो या हो सकता है किसी और कारण से हिल गई हो। लोग जानते थे कि राजा पागल है और फिर बाद में इस बात की कोई सुनवाई न होगी कि गर्दन किसलिए हिली थी। बस गर्दन का हिलना ही काफी हो जाएगा। इसके बावजूद भी उस रात्रि कोई दो तीन सौ लोग संगीत सुनने गए। वे लोग जो जीवन खोने के मूल्य पर भी सुख चाहते थे वहां आए। वीणा बजी। कोई घंटे भर तक लोग ऐसे बैठे रहे जैसे मूर्तियां हों। लोगों ने जैसे डर के कारण सांस भी न ली हो। दरवाजे बंद करवा दिए थे ताकि कोई भाग न जाए। नंगी तलवारें लिए हुए सैनिक खड़े थे किसी की भी गर्दन एक क्षण में अलग की जा सकती थी।

घंटा बीता, दो घंटे बीते, आधी रात होने के करीब आ गई। फिर राजा हैरान हुआ उसके सिपाही भी हैरान हुए जो कि नंगी तलवारें लिए हुए खड़े थे। उन्होंने देखा दस पंद्रह सिर धीरे-धीरे हिलने लगे। संख्या और बढ़ी। रात पूरी होते होते कोई चालीस पचास सिर हिलने लगे थे। वे पचास लोग पकड़ लिए गए। राजा ने उस संगीतज्ञ को कहा इनकी गर्दन अलग करवा दें? उस संगीतज्ञ ने कहा, नहीं। मैंने शर्त बहुत और अर्थों में रखी थी। अब यही वे लोग हैं जो मेरे संगीत को सुनने के सच्चे अधिकारी हैं। कल सिर्फ ये लोग संगीत सुनने आ सकेंगे।

राजा ने उन लोगों से कहा, ठीक है कि संगीतज्ञ की शर्त का यह अर्थ रहा हो, लेकिन तुम्हें तो यह पता था! पागलो! तुमने गर्दन क्यों हिलाई? उन आदमियों ने कहा हमने गर्दन नहीं हिलाई, गर्दन हिल गई होगी। क्योंकि जब तक हम मौजूद थे गर्दन नहीं हिली, लेकिन जब हम गैरमौजूद हो गए फिर हमें कोई पता नहीं। जब तक हम सजग थे, जब तक हमें होश था, हम गर्दन संभाले रहे। फिर एक घड़ी ऐसी आ गई जब हमें कोई होश नहीं रहा। हम संगीत में इतने डूब गए कि लगभग बेहोश ही हो गए। उस बीच फिर गर्दन हिली हो तो हमें कोई पता नहीं है। तो अब भला आप हमारी गर्दन कटवा लें लेकिन कसूरवार हम नहीं है। क्योंकि हम मौजूद ही नहीं थे। हम बेहोश थे। अपने होश में हमने गर्दन नहीं हिलाई।

क्या इतनी बेहोशी संगीत से पैदा हो सकती है?

जरूर हो सकती है, मनुष्य के जीवन में बेहोशी के बहुत रास्ते हैं। जितनी इंद्रियां हैं उतने ही बेहोश होने के रास्ते भी हैं। प्रत्येक इंद्रिय का बेहोश होने का अपना रास्ता

है। कान पर ध्वनियों के द्वारा बेहोशी लाई जा सकती है। अगर इस तरह के स्वर औ र इस तरह की ध्वनियां कान पर फेंकी जाए कि कान में जो सचेतना है वह सो जाए , शिथिल हो जाए—तो धीरे-धीरे कान तो बेहोश होगा ही उसके साथ ही पूरा चित्त भी सो जाएगा, क्योंकि इस हालत में कान के पास ही सारा मन एकाग्र और इकट्ठा हो जाएगा और जैसे कान में शिथिल आएगी उसके साथ ही पूरा चित्त भी शिथिल हो कर बेहोश हो जाएगा। इसी तरह आंखें बेहोश करवा सकती हैं। सौंदर्य को देखकर अ ांखें हो सकती हैं। और आंखें बेहोश हो जाए तो पीछे से पूरा चित्त बेहोश हो सकता है।

इस भांति अगर हम बेहोश हो जाए तो होश में लौटने पर लगेगा कि कितना अच्छा हुआ। क्योंकि इस बीच किसी भी दुख का कोई पता न था, कोई चिंता न थी, कोई कष्ट न था और कोई समस्या न थी। नहीं थी इसलिए क्योंकि आप ही नहीं थे। आप होते तो ये सारी चीजें होती। आप गैरमौजूद थे इसलिए कोई चिंता न थी, कोई दुख न था, कोई समस्या न थी। दुख तो था लेकिन उसे जानने के लिए जो होश चाहिए व ह खो गया था। इसलिए उसका कोई पता नहीं चलता था। इसे, जो लोग आनंद सम झ लेते हैं, वे भूल में पड़ जाते हैं। उनका जीवन बिना आनंद को जाने एक बेहोशी में ही बात जाता है और आनंद से वे सदा के लिए अपरिचित ही हर जाते हैं।

इसीलिए मैं कहता हूं कि सत्य की खोज की जरूरत है, क्योंकि उसके बिना आनंद क ी कोई उपलब्धि न किसी को हुई है और न हो सकती है। अब अगर कोई यही पूछने लगे कि आनंद की खोज की क्या जरूरत है तो थोड़ी कठिनाई हो जाएगी। हालांकि अब तक किसी आदमी ने वस्तुतः ऐसा प्रश्न पूछा नहीं है। दस हजार वर्षों में आदमी ने वहुत प्रश्न पूछे हैं, लेकिन किसी आदमी ने यह नहीं पूछा कि आनंद की खोज की जरूरत क्या है? क्योंकि इस बात को पूछने का अर्थ यह होगा कि हम दुख से तृप्त हैं । लेकिन दुख से तो कोई भी तृप्त नहीं है। अगर दुख से ही तृप्त होते तो फिर आप सिनेमा भी क्यों जाते? संगीत भी क्यों सुनते? वह आनंद की ही खोज चल रही है, लेकिन गलत दिशा में। गलत दिशा में इसलिए क्योंकि दुख को भूलने से आनंद उपलब् ध नहीं होता। हां, आनंद उपलब्ध हो जाए तो दुख जरूर विलीन हो जाता है। अंधेरे करके बैठ जाऊं और भूल जाऊं अंधेरे को, तो भी कमरा अंधेरा ही रहेगा। लेकिन हां , दिया मैं जला लूं तो अंधेरा जरूर विलीन हो जाएगा।

एक बात तय कि हम जो हैं, जैसे हैं, जैसे होने से तृप्त नहीं हैं। इसीलिए खोज की जरूरत है। जो तृप्त है उसे खाज की कोई भी जरूरत नहीं है। हम जो हैं उससे तृप्त नहीं हैं। हम जहां वहां से तृप्त नहीं हैं। भीतर एक बेचैनी है, एक पीड़ा है, जो निरंत र कहे जा रही है कि कुछ गलत है, कुछ गड़बड़ है। वही बेचैनी कहती है—खोजो! उ से फिर सत्य नाम दो, चाहे और कोई नाम दो उससे भेद नहीं पड़ता। संगीत में और सिनेमा में भी उसकी ही खोज चल रही है। लेकिन वह दिशा गलत और भ्रांत है। ज ब कोई आत्मा की दिशा में खोज करता है, तब ठीक और सम्यक दिशा में उसकी ख ोज शुरू होती है। क्योंकि दुख को भूलने से आज तक कोई आनंद को उपलब्ध हनीं हु

आ है लेकिन आत्मा को जान लेने से व्यक्ति जरूर आनंद को उपलब्ध नहीं हुआ है, लेकिन आत्मा को जान लेने से व्यक्ति जरूर आनंद को उपलब्ध हो जाता है। जिन्होंने उस सत्य की थोड़ी सी झलक पा लीद है उनके पूरे जीवन में एक क्रांति हो जाती है। उनका सारा जीवन आनंद और मंगल की वर्षा बन जाता है। फिर वे बाहर संगीत में भूलने नहीं जाते क्योंकि उनके हृदय की वीणा पर स्वयं एक संगीत एक संगीत बजने लगता है। फिर वे बाहर सुख की खोज में नहीं भटकते हैं, क्योंकि उनके भीतर एक आनंद का झरना फूट जाता है।

जो भीतर दुखी है, वह बाहर सुख को खोजता है, लेकिन जो भीतर दुखी है वह बाहर सुख को कैसे पा सकेगा? जो भीतर आनंद से भर जाता है, उसकी बाहर सुख की खोज जरूर बंद हो जाती है, क्योंकि जिसे वह खोजता था वह तो उसे स्वयं के भीतर ही उपलब्ध हो गया है।

एक भिखारी एक बड़ी महानगरी में मरा। वह एक ही जगह पर बैठ भीख मांगता रहा। जिंदगी भर वही बैठकर एक-एक पैसे के लिए गिड़गिड़ाया। वहीं जीया और वहीं मरा भी। उसके मर जाने पर उसकी लाश को म्युनिसिपल कर्मचारी घसीटकर मरघट ले गए। उसके कपड़े चिथड़ों में आग लगा दी गई। लोगों ने सोचा—तीस साल तक उस भिखारी ने इस जमीन को खराब और अपवित्र किया है, क्यों न इस भूमि की थोड़ी सी मिट्टी को खुदवा कर फेंक दिया जाए? मिट्टी जब बदली गई तो वे हैरान हो गए। जहां वह भिखारी बैठा करता था वहीं एक बड़ा खजाना गड़ा मिला। वह उसी भूमि पर बैठकर, उसी खजाने को ऊपर बैठकर, तीस वर्षों तक एक-एक पैसे के लिए भीख मांगता रहा। उसे कोई कल्पना भी न थी कि जिस भूमि पर वह बैठता है वहां कोई खजाना भी हो सकता है।

यह किसी एक भिखारी की कहानी नहीं है, यह हर आदमी की कहानी है। हर आदमी जहां बैठा है, जहां एक-एक पैसे सके सुख के लिए गिड़गिडा रहा है, मांग रहा है और हाथ हीला रहा है, उसी जमीन में, उसके ही नीचे बहुत बड़े आनंद के खजाने गड़े हुए हैं। यह उसकी मर्जी है कि वह उन्हें खोजता है या नहीं, कोई उसे मजबूर नहीं कर सकता है।

अगर उस भिखमंगे को जाकर मैंने कहा होता—मित्र, गड़े हुए खजाने की खोज करो। और वह मुझसे कहता—क्या जरूरत है मुझे गड़े हुए खजाने की खोज की? भीख मांग लेता हूं और मजे से जीता हूं। मैं क्यों खोजूं? मैं तो ऐसे ही जिंदगी बिता दूंगा? तो मैं उससे क्या कहता? कहता कि ठीक है मांगो भीख! लेकिन जो भीख मांग रहा है वह कहे कि मुझे खजाने की कोई जरूरत नहीं है तो वह पागल है। अगर जरूरत नहीं है तो भीख मांग रहा है?

सिनेमा और संगीत में सुख खोज रहा है और कहे कि आनंद की खोज की मुझे क्या जरूरत है? तो वह पागल है, नहीं तो फिर सिनेमा में, संगीत में, शराब में और सेक्स में किस की भीख मांग रहा है? किसको खोज रहा है?

हम भीख मांगने वाले लोग हैं और जब कोई हमें खजाने की खबर देता है तो हमें वि श्वास नहीं आता क्योंकि जो एक-एक पैसे की भीख मांग रहा है उसे विश्वास ही नहीं हो सकता कि खजाना भी हो सकता है। भीख मांगने वाला खजाने पर विश्वास नहीं कर पाता। उसे खजाना मिल भी जाए तो वह यही सोचेगा कि कहीं मैं सपना तो न हीं देख रहा हूं? उसे यह विश्वास ही नहीं आता है कि मैं भीख मांगने वाला और मु झे खजाना भी मिल सकता है! इसी बात को भुलाने के लिए वह कहना शुरू करता है कि जरूरत क्या है खजाने खोजने की? मैं तो अपनी भीख मांगने में मस्त हूं। मैं क यों परेशान होऊं? छोटी सी जिंदगी मिली है, उसे मैं आनंद की खोज में क्यों गंवा दूं ? अगर आनंद की खोज में भी जिंदगी गंवाई जाती है, तो फिर मैं यह पूछना चाहता हूं कि कमाई किस बात में की जाएगी?

यह अधूरी शिक्षा?

मनुष्य जाति के ऊपर जो बड़े से बड़े दुर्भाग्य आए हैं उनमें सबसे बड़े दुर्भाग्य वे हैं जि न्हें हम सौभाग्य समझ रहे हैं। सौभाग्य समझने के कारण उन दुर्भाग्यों से बचना भी सं भव नहीं हुआ, उनको बदलना भी संभव नहीं हुआ, उनसे मुक्त होने का भी कोई उप ाय नहीं किया गया, बल्कि सौभाग्य मानने के कारण, वरदान मानने के कारण हम अ पने अभिशापों की जड़ों में भी पानी सींचते रहे हैं। और अब परिणाम में यह मनुष्य पै दा हुआ है जो हमारे सामने है। और जो निर्मित हुआ है वह हमारे चारों तरफ फैला हुआ है। उन बड़े दुर्भाग्यों में शिक्षा के नाम से जो चलता रहा है उसे मैं बड़े से बड़ा दुर्भाग्य मानता हूं। सुनकर निश्चित ही आपको हैरानी होगी, क्योंकि शिक्षा तो वरदान है, शिक्षित सज्जन तो धन्यभाग ही हो जाति हैं, ऐसा ही अब तक हम मानते रहे हैं । लेकिन क्या आपको पता है शिक्षा ने मनुष्य के जीवन को संतुलन और स्वास्थ्य नहीं दिया है बल्कि मनुष्य जीवन के सारे संतुलन (ईंसंदबम) को छीन लिया है और यह निश्चित ही था। क्योंकि जो हम अब तक शिक्षा से समझते रहे हैं उसमें कुछ बुनियाद ी भूलें हैं।

पहली बुनियादी भूल यह है कि हमने आदमी को केवल बुद्धि (टदजमससमबज) सम झ लिया है। इससे ज्यादा झूठी और गलत बात नहीं हो सकती। आदमी अकेले बुद्धि नहीं है और शिक्षा केवल बुद्धि की है। शेष पूरा मनुष्य अधूरा और अछूता छूट जाता है। शेष पूरा मनुष्य अविकसित छूट जाता है। केवल बुद्धि विकसित होती है। यह वैसा ही है जैसे एक आदमी का सारा शरीर तो सुख जाए सिर्फ सिर बड़ा हो जाए, एक आदमी का सारा शरीर तो क्षीण हो जाए सिर्फ खोपड़ी बड़ी होती चली जाए। फिर व ह आदमी केवल एक कुरूपता (नहसपदमे) होगा। और वह आदमी चलने में भी असम र्थ हो जाएगा। उनका बड़ा सिर उसके पूरे शरीर के संतुलन में नहीं होगा तो उसका जीना कठिन हो जाएगा।

शिक्षा के नाम पर यही हुआ है। हमने सोच लिया कि मनुष्य है केवल बुद्धि, केवल इं टलेक्ट। और तब हम पिछले तीन हजार वर्षों से मनुष्य की बुद्धि को ही विकसित क

रने के सब उपाय करते रहे हैं। बुद्धि विकसित हो गई लेकिन शेष सारा मनुष्य बहुत पीछे छूट गया। शेष मनुष्य तीन हजार वर्ष पीछे छूट गया और बुद्धि तीन हजार वर्ष आगे चली गई। इन दोनों के बीज जो तनाव और खाई पैदा हो गई है वही हमारे प्राण ले रही है। इससे एक उल्टे ढंग की पंगुता (टदअमतजमक बतपचचसमीववक) पैदा हुई है। एक आदमी के पास सब होता है लेकिन आंखें नहीं होती तो हम उस आदमी को कहते हैं कि इसका एक अंग पंगु है, विकसित नहीं हुआ है। एक आदमी के पास सब होता है लेकिन उसके पास दो पैर नहीं होते उसे हम पंगु कहते हैं। इससे उल्टे तरह की पंगुता भी हो सकती है जिसका हमें खयाल भी नहीं है। एक आदमी के पास कुछ न हो, केवल दो पैर हो तो वह आदमी इनवटेंड क्रिपिल्ड है। वह उल्टे ढंग से पंगु हो गया है।

शिक्षा ने मनुष्य को स्वस्थ नहीं किया, पंगु किया है। केवल बुद्धि का विकास हुआ है और शेष अंग अविकसित रह गए हैं। बुद्धि बड़ी होती चली गई और जीवन के सब स्रोतों से उसके संबंध, उनके नाते विच्छिन्न हो गए। हम सीखते क्या है? हम शिक्षा के नाम पर देते क्या है? जीवन की कोई शिक्षा देते हैं हम? कोई जीवन की कला सिखाते हैं? जरा भी नहीं। हम कुछ सभ्यता सिखाते हैं, कुछ गणित सिखाते हैं, कुछ भाषा सिखाते हैं, कुछ केमेस्ट्रीफिजिक्स सिखाते हैं, कुछ भूगोल-इतिहास सिखाते हैं और इस सब सिखाने में हम सिखाते क्या हैं? हम शब्द ही सिखाते हैं। शब्द जीवन नहीं है जीवन को जीने में शब्द की उपादेयता है। लेकिन शब्द मात्र की शिक्षा जीवन की शिक्षा नहीं हो सकती है। तब यह होता है कि शब्द बहुत हो जाते हैं।

शिक्षित व्यक्ति के पास शब्दों के अतिरिक्त कोई संपत्ति नहीं होती। वह उतना ही मूढ़ होता है जितना अशिक्षित व्यक्ति। एक फर्क होता है, सिर्फ उसे एक भ्रांति पैदा होती है कि मैं मूढ़ नहीं हूं। जीवन के और सारे अंगों के संबंध में वह उतना ही अज्ञानी होता है जितना कोई जंगल का निवासी। जीवन की कला के संबंध में उसकी कोई समझ नहीं होती। जीवन को जीने के रास्तों को उसे कोई पता नहीं होता। जीवन से उसका कोई परिचय ही नहीं होता। पुस्तकालयों और किताबों से जीवन का क्या नाता है? क्लास रूम से जो परिचित है वह जीवन से परिचित है, ऐसा समझ लेने के भ्रम में पड़ जाने की कोई जरूरत नहीं। और विद्यालय में जिसने स्वर्ण पदक ले लिया है, जीवन उसे मिट्टी के पदक की भी कीमत नहीं देगा इसे खयाल रखना जरूरी है।

शब्दों की शिक्षा मात्र, शब्दों का संग्रह मात्र, शब्दों की संपत्ति मस्तिष्क में एक बोझ तो बन जाती है, लेकिन मस्तिष्क को न तो मुक्त करती है, न जीवन बनाती है, न विचार पूर्ण बनाती है, न जीवन को देखने की मौलिकता देती है, न जीने की कला देती है, न जीने को उपाय सिखाती है। इसको हम अब तक शिक्षा कहते रहे हैं। इस शिक्षा का फल यह आदमी है जो आज हमारे सामने खड़ा हो गया है—बीमार, विक्षिप्त, रुग्ण।

क्या अमरीका पता है जितनी शिक्षा बढ़ती जाती है, उतना आदमी विकृत होता चला जाता है? अशिक्षित आदमी के पास एक तरह का संतुलन और स्वास्थ्य था जो शि

क्षत आदमी के पास नहीं है। जंगलों के वासियों के पास एक तरह का सौंदर्य था, एक तरह का संगीत था, एक तरह का आनंद था; जीवन में एक अर्थ और प्रयोजन था जो शिक्षित आदमी के पास नहीं है। यह बड़ी हैरानी की बात है। क्या हम आनंद को खोने के मूल्य पर शिक्षित हो रहे हैं? हमारी, आनंद को अनुभव करने की क्षमता अ ौर पात्रता कम हो रही है। क्या हम जीवन के साथ अपनी जड़ों का संबंध तोड़ रहे हैं ?

शिक्षित आदमी को निष्पक्ष आंखों से देखना कठिन है क्योंकि हम भी शिक्षित आदमी हैं। बहुत कठिन है यह बात हम शिक्षित आदमी के रोग को देख सकें। जहां सब लोग ों को एक ही रोग होता है वहां पहचानना बहुत कठिन हो जाता है। हम सभी शिक्षि त हैं, न केवल हम शिक्षित हैं बल्कि हम शिक्षक भी हैं। हम किसी शिक्षा को फैलाने और देने वाले लोग भी हैं। तो हमें यह देखना बहुत कठिन हो जाएगा, यह सोचना ब हुत कठिन हो जाएगा कि जो हम फैला रहे हैं वह मनुष्य को स्वस्थ नहीं बना रहा है। लेकिन जिनके पास आंखें हैं और जिन्होंने शिक्षा में शिक्षित होकर अपने पूरी बुद्धिम त्ता नहीं खो दी है वे लोग कुछ बातें देखने में समर्थन हो सकते हैं।

अमेरिका सर्वाधिक शिक्षित मुल्क है, लेकिन सर्वाधिक पागलों की संख्या भी अमेरिका में है। उन दोनों के बीच कोई संबंध है या यह केवल संयोग है? जो मुल्क जितने शि क्षत होते जा रहे हैं उन मुल्कों का मानसिक तनाव भी बढ़ता चला जा रहा है। जो मुल्क जितने शिक्षित होते जा रहे हैं उतने ही आत्मघात की संख्या वहां बढ़ती चली जा रही है। केवल अमेरिका में ही प्रतिदिन १५ लाख से लेकर ३० लाख लोग मानसि क विकारों के लिए चिकित्सा की तलाश करते हैं। और ये सरकारी आंकड़े हैं और ह म भलीभांति जानते हैं कि सरकारी आंकड़े कभी भी ठीका नहीं होते १५ लाख से ३ ० लाख लोग अगर रोज मानसिक चिकित्सा को खोज रहे हों तो हमें जानना चाहिए कि कोई व्यक्तिगत भूल नहीं हो रही है, कोई सामूहिक बीमारी मनुष्य के भीतर प्रवि ष्ट हो रही है। न्यूयार्क में तीस प्रतिशत लोग बिना दवा लिए रात में नहीं सोते हैं। अ ौर वहां के वैज्ञानिकों की खोज-बीन का यह नतीजा है कि अगल पचास वर्षों में न्यूया र्क में एक भी आदमी बिना दवा लिए नहीं सो सकेगा।

यह विकसित होते मनुष्य के लक्षण है। फिर न्यूयार्क से हमारा क्या वास्ता है, बंबई भ ी बहुत दिन पीछे नहीं रहेगी। हम भी विकास करने में, दौड़ने में साथ खड़े होंगे। हिंदु स्तान भी पीछे रहेगा। जो हिंदुस्तान हर चीज में जगतगुरु रहा है वह पागलपन में भी जगतगुरु होकर ही रहेगा। हम बच नहीं सकते। हजम दौड़ रहे हैं। हमारे नेता पूरी कोशिश कर रहे हैं कि हम किसी से पीछे न रहे जाए। पश्चिम पर जो एक काली छा या मानसिक तनावों और अशांति की पैदा हुई है है वह कैसे पैदा हो गई है?

जिन लोगों ने पिछले तीन सौ वर्ष में पश्चिम को शिक्षित करने की कोशिश की है उ न भले लोगों का, भली इच्छाओं के साथ इसके पीछे हाथ है। शायद उन्हें पूरी तरह जीवन का पता नहीं था। शायद अकेली बुद्धि विकसित हो जाएगी तो मनुष्य दुखी हो जाएगा यह उनके खयाल में नहीं था। जरूर बुद्धिमत्ता विकसित होनी चाहिए, बुद्धि

विकसित होनी चाहिए। लेकिन जीवन के सारे अंगों के अनुपात में, संतुलन में स्वास्थ्य के साथ, हृदय के साथ, प्राणों के साथ उसका विकास होना चाहिए। वह अकेली वि कसित हो जाएगी तो खतरा होना निश्चित है।
बुद्धि के पास कोई हृदय नहीं होता है बुद्धि जीवन और जगत को बनाएगी वहां हृद य नहीं होगा। बुद्धि के पास गणित होता है, प्रेम नहीं। बुद्धि के पास हिसाब और आं कड़े होते हैं, भावना नहीं। बुद्धि संख्याओं में सोचती है और तर्क में सोचती है। जीवन तर्क, संख्याओं और गणित के पार चला जाता है। जीवन वह बहुत रहस्यपूर्ण है। को ई गणित जीवन को समझा नहीं पाता। कोई संख्या, कोई आंकड़ा जीवन को हल नहीं कर पाता। जीवन बहुत रहस्यमय है लेकिन बुद्धि रहस्त (ऊलेजमतल) को मानती ह ी नहीं। बुद्धि मानती है कि चीजें दो और दो चार जैसी सीधी और साफ हैं। बुद्धि की यह जो रहस्य शून्य (छवद-ऊलेजमतपलवे) और हृदयहीन पहुंच है जीवन के प्रति, उसने ही जीवन को यांत्रिकता प्रदान दी है।
मनुष्य रोज रोज मशीन की भांति होता चला जा रहा है। लेकिन जब कोई आदमी म शीन हो जाता है तो हम कहते हैं बहुत दक्ष है, हम कहते हैं बहुत कुशल है। मशीन आदमियों से हमेशा ज्यादा कुशल होती है और आदमी की कुशलता पर ही हमारा जो र रहा तो एक न एक दिन आदमी मशीन जैसा कुशल हो जाएगा। लेकिन अपनी आत मा को खोकर। आदमी भूलचूक करता है, मशीन भूलचूक नहीं करती। हम ऐसे आद मी की कोशिश कर रहे हैं जिससे भूलचूक न हो सके, जो एकदम कुशल हो, जो एक दम गणित की लकीरों पर चलता हो। गणित की लकीरों पर चले, रेल जैसे पटरियों पर दौड़ती है उस भांति। लेकिन जीवन की सरिताएं पटरियों पर नहीं दौड़ती, अनजा न, अपरिचित मार्गों पर दौड़ती हैं। जीवन की सरिता की एक स्वतंत्रता है जो बुद्धि के बंध हुए ढांचे में समाविष्ट नहीं होती। लेकिन आज तक हमने यह किया है।
मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि अकेली बुद्धि की शिक्षा बुद्धिमत्ता नहीं है। लेकिन के और पहलू भी हैं जो बुद्धि से भी ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। क्योंकि आदमी बुद्धि से नहीं जीता है। आदमी के जिन के स्रोत बुद्धि से कहीं अधिक गहरे हैं। न तो बुद्धि से हम प्रेम करते हैं, न बुद्धि से हम क्रोध करते हैं, न बुद्धि से हम घृणा करते हैं, न बुद्धि से हम सौंदर्य को परखते हैं, न बुद्धि से हम गीत और काव्य को पढ़ते हैं, और न ह ी बुद्धि से जीवन की कोई भी गहरी अनुभूति उपलब्ध होती है। अकेले बुद्धि की शिक्ष ा जीवन को सब तरह की अनुभूतियों से क्षीण और वंचित कर दे तो कोई आश्चर्य न हीं। लेकिन हम बुद्धि की की शिक्षा देते रहे हैं। इस शिक्षा ने एक अत्यंत असंतुलित मनुष्य को पैदा कर दिया है।
यह जो असंतुलित मनुष्य है यह कुछ भी कर रहा है, इससे कुछ भी हो रहा है, यह कोई भी उपद्रव कर रहा है। यह उपद्रव बिलकुल ही सुनिश्चित है क्योंकि जब आदमी भीतर से असंतुलित हो जाए तो उसकी बहार की चर्या भी असंतुलित हो जाती है। उसके जीवन में फिर कोई गति, कोई सुनिश्चित लक्ष्य, कोई लयबुद्धता नहीं रह जात ी। यह तो हमारे दुर्भाग्यों में पहला दुर्भाग्य हुआ कि शिक्षा को हमने केवल बुद्धि की ि

शक्षा समझ रखा है, समग्र जीवन की नहीं, पूरे (जवजंस) जीवन की नहीं। पूरे जीवन की शिक्षा और ही अर्थ लेगी।

मेरी दृष्टि में बुद्धि पर अति भार मनुष्य के भीतर कुछ चीजों का विकसित होने से ह ी रोक देता है। पांच वर्ष के बच्चे को हम स्कूल भेजते हैं। उसकी बुद्धि पर इतना भा र पड़ता है कि उसके शरीर, उसके हृदय, उसकी भावनाओं की, जीवन में रस और आनंद लेने की सब क्षमताएं क्षीण हो जाती हैं। सारे जीवन का रस बुद्धि ले लेती है और सारा जीवन सूख जाता है। ये बच्चे बड़े होते हैं, हृदयहीन, भावना शून्य, प्रेम से रिक्त। मशीनों की भांति उनका एक ही मूल्य होता है कि वे कितने बड़े पदों पर प हुंच जाए, कितनी तनख्वाहें ले आए, कितनी कुशलता से काम करें।

आदमी क्या केवल इसलिए पैदा होता है कि वह ज्यादा तनख्वाह कमाए और बड़ी कु र्सी पर बैठे जाए? या आदमी किसी और आनंद की संपदा को खोजने जीवन में आता है? निश्चित ही उसकी खोज किसी बड़ी संपत्ति की है। लेकिन उस संपदा को खोजने के लिए कुछ और चीजें विकसित होनी चाहिए। मेरी दृष्टि में दस या बारह वर्ष तक या चौदह वर्ष तक बच्चे की बुद्धि पर कोई भार नहीं होना चाहिए। १४ वर्ष के बाद ही बच्चे की बुद्धि पर भार होना चाहिए। चौदह वर्ष तक उसके शरीर और उसकी भावनाओं के विकाश पर सारा श्रम होना चाहिए। चौदह वर्ष बच्चे के जीवन के बहुत संक्रंमणकारी हैं। जैसे ही यौन परिपक्वता (मग-उंजनतपजल) उपलब्ध होती है, जैसे ही बच्चा यौन दृष्टि से परिपक्व होता है उसके बाद ही उसकी बुद्धि का सम्यक विका स करना आसान और उचित है। उसके पहले उसके जीवन के और बहुत मूल्य हिस्से हैं वे विकसित होने चाहिए। उसका स्वास्थ्य विकसित होना चाहिए, उसकी भावनाएं ि वकसित होनी चाहिए, उसके प्रेम करने की क्षमता विकसित होनी चाहिए। क्योंकि ब चपन में जिन बच्चों की प्रेम करने की क्षमता विकसित नहीं हुई है वे बूढ़े भी हो जा एं तो उनके भीतर प्रेम का विकास नहीं हो सकेगा।

बचपन सबसे सुखद और अदभुत मौका है जब कि बच्चे के जीवन में प्रेम विकसित हो सकता है। लेकिन वह अमूल्य समय हम गणित सिखाने में, भूगोल सिखाने में और इ तिहास की बेवकूफियां सिखाने में नष्ट करते हैं और समाप्त करते हैं। क्या प्रयोजन है यह सब सिखाने का? बच्चा अगर नहीं जानेगा बहुत भूगोल तो कुछ हर्जा नहीं हुआ जाता। और बच्चे ने अगर अकबर, नेपोलियन और सिकंदर जैसे पागल लोगों के ना म नहीं सीखे तो कोई फर्क नहीं पड़ता है। किन लोगों ने कितने लोगों की हत्याएं की हैं इसकी कोई योजना बच्चों ने नहीं सीखी तो कोई अंतर नहीं पड़ता है। और किस सन में कौन बादशाह पैदा हुआ और मरा इन नासमझियों के सीखने का कोई अर्थ न हीं, न कोई सार है। लेकिन इन सबके सिखाने में बच्चे के प्रेम के विकसित होने के जो क्षण थे वे नष्ट हो जाते हैं।

क्या आपको पता है कि बचपन के बाद आपका प्रेम सूखा, थोथा और धोखे से भरा ह ो जाता है? जिनको आपने बचपन में चाहा है उस चाहे में और जिनको आप बड़े में चाहते हैं, बुनियादी फर्क है। बचपन की वह जो पवित्रता है प्रेम की, अगर एक बार

खो गई, अगर वह निर्दोषता (टददवबमदबम) एक बार खो गई तो जीवन में उसे दो बारा पाना अत्यंत दूभर, अत्यंत असंभव हो जाएगा। बचपन की सारी पवित्रता प्रेम के विकास में लगनी चाहिए, बुद्धि के विकास में नहीं। क्योंकि प्रेम के आधार पर, बुनि याद पर जो जीवन का भवन खड़ा होता है वही केवल आनंद को उपलब्ध हो सकता है। बुद्धि से आनंद का कोई भी नाता और संबंध नहीं है। बुद्धि को हम बुनियाद में र ख देते हैं तो फिर जो भवन खड़ा होता है वह मंदिर नहीं होता है, वह एक फैक्टरी बन जाता है।

आदमी को जिंदगी फैक्टरी बनानी हो तो बुद्धि पर भवन खड़ा होना चाहिए और आद मी की जिंदगी को एक मंदिर बनाना हो तो प्रेम पर बुनियाद रखी जानी चाहिए। बच पन के सारे क्षण हृदय के विकास में दिए जाने चाहिए, सारा श्रम हृदय के विकास के लिए होना चाहिए। और हृदय के विकास के लिए कुछ और अवसर खोजने पड़ते हैं। वे अवसर नहीं जो हम स्कूल और विद्यालय में खोजते हैं। हृदय के विकास के लि ए जरूरी है कि बच्चा खुले आकाश के नीचे हो, बजाय बंद मकानों में। क्योंकि बंद म कान हृदय को भी बंद और कुंठित करते हैं। खुले आकाश के नीचे दरख्तों के पास ह ो, चांद तारों की छाया में हो, नदी और समुद्र के किनारे हो, खुली मिट्टी और पृथ्वी के संसर्ग में हो।

जितने विराट के निकट होगा बच्चा उतने ही प्रेम का उसके भीतर जन्म होगा, सौंदर्य का बोध होगा और रस विकसित होगा। बंद दीवालों में काले तख्तों के सामने बैठे हु ए छोटे बच्चों पर जो अपराध हो रहा है, जो पाप हो रहा है उसकी गणना आज नहीं कल मनुष्य जाति कभी करेगी तो हम सब दोषी करार सिद्ध होंगे। बच्चे को होश अ ाते ही हम बंद कमरे और दीवालों में कैद कर देते हैं शिक्षा के नाम पर। कारागृह में बंद कर देते हैं और क्या सिखाते हैं उन्हें हम? और कौन से जीवन का मूल्य सिखा ते हैं? फिर बचपन के ये अदभुत क्षण जबकि जीवन से संपर्क हो सकता था, व्यर्थ ख ो जाते हैं।

रवींद्रनाथ ने लिखा है कि मुझे बंद किया जाता था स्कूलों में। बाहर वृक्षों पर चिड़ियां गीत गाती थीं और मुझे काले तख्ते को ही देखते रहना पड़ता था। चिड़ियां के गीत बहुत अदभुत थे लेकिन मुझे शिक्षक की ही बेसुरी आवाज में गणित और भूगोल पढ़ ने पड़ते थे। अगर मेरे कान और मेरे प्राण पक्षियों के निकट पहुंच जाते तो बहुत सज ा झेलनी पड़ती थी। रवींद्रनाथ ने शांति निकेतन में पहली दफा जब विद्यालय खोला तो कौन उनको अपने बच्चे देता बिगाड़ने के लिए? रवींद्रनाथ खुद भी कोई उपाधि न हीं पा सके, किसी विद्यालय से। सौभाग्य था उनका, नहीं तो दुनिया एक महाकवि से वंचित रह जाती। भाग्यशाली थे वे। उनके मां बाप असफल हो गए और रवींद्रनाथ को स्कूल से उठा लिया। अगर मां बाप सफल हो जाते तो दुनिया को एक बहुत बड़ा नुकसान सहना पड़ता। और इस दुनिया ने कितने-कितने नुकसान सहे होंगे मनुष्य के इतिहास में इसका कोई आकलन नहीं हो सकता। इसका कोई पता नहीं हो सकता ि क कितने रवींद्रनाथ खो गए होंगे स्कूलों में।

रवींद्रनाथ ने जब पहला स्कूल खोला कौन देता अपने बच्चों को बिगाड़ने के लिए। मैं कोई स्कूल खोलूं तो अप अपने बच्चे को भेजेंगे? नहीं भेजेंगे। बच्चे को बिगाड़ने के लिए कौन भेजता? लेकिन फिर भी रवींद्रनाथ के मित्रों के कुछ ऐसे बच्चे थे जिनको और बिगाड़ना संभव नहीं था। उनको रवींद्रनाथ के स्कूल में भेज दिया गया। वे आखिरी सीमा पर थे उनसे कोई आशा और नहीं थी। रामनंद चपर्जी मार्डन रिव्यू के संपादक ने अपने लड़के को भेजा था। उससे वे बाज आ गए थे। जिन लड़कों में भी थोड़ी प्रतिभा होती है मां बाप उनसे बहुत परेशान हो जाते हैं। प्रतिभा और मेधा से रिक्त जड़बुद्धि बच्चे मां बाप को बड़े प्रीतिकर लगते हैं। क्योंकि उनसे जहां कहो बैठ जाओ, वे वहीं बैठ जाते हैं और कहो उठ जाओ तो उठ जाते हैं। उनके पास न अपनी कोई आत्मा होती है, न अपने कोई प्राण होते हैं।

रामानंद ने अपने लड़के को भी भेजा था। तीन महीने बाद रामानंद देखने गए कि हालत क्या है? स्कूल कैसा चलता है? कोई आशा तो न थी स्कूल चलने की, लेकिन जो देखा उससे और बड़ी हैरानी हुई। एक बड़े वृक्ष के नीचे रवींद्रनाथ बैठे थे। दस पंद्रह बच्चे उनके पास बैठे हैं। पढ़ाई। चलती है। पास जाकर रामानंद ने देखा, दस पंद्रह नीचे बैठे, दस पंद्रह वृक्ष के ऊपर चढ़े हैं। यह कैसी कक्षा है? रवींद्रनाथ से उन्होंने कहा, मुझे शक था पहले ही। यह क्या हो रहा है, यह को कक्षा है? देखकर मुझे दुख होता है। लड़के वृक्ष पर चढ़े हुए हैं।

रवींद्रनाथ ने कहा, दुख मुझे भी होता है। फल पक गए हैं। जो लड़के नीचे बैठे हैं उन पर मैं हैरान हूं। दुख मुझे भी होता है, दुखी मैं भी हूं। मैं बूढ़ा हो गया अन्यथा मैं भी वृक्ष के ऊपर होता। फल पक गए हैं। फलों की सुगंध हवाएं ले आई हैं। वृक्ष पुकार रहा है और अगर बच्चे नहीं चढ़ेंगे तो फिर कौन चढ़ेगा? वृक्षों ने निमंत्रण दे दिया है। ये बच्चे अभी से बूढ़े हो गए हैं नीचे बैठे हैं। इन्हें परिणाम भी नहीं मिलता है। इनकी नासापुटों में खबर नहीं हो रही है कि फल पक गए हैं। वृक्ष बुलाता है कि आओ। दुखी हो गए वे जो असमर्थ हैं ऊपर चढ़ने में, जो बूढ़े हो गए। लेकिन यह तो अभी बूढ़े नहीं हुए। मैं बैठा यही सोचता था। ये बच्चे अभी से बूढ़े हो गए हैं क्या? क्या इन्हें वृक्ष की चुनौती नहीं मिली? इन्हीं कोई खबर नहीं मिली?

हम बच्चों को बचपन में ही बूढ़े कर देते हैं और फिर अगर जीवन से युवापन ताजगी (थतमीदमे) नष्ट हो जाती हो तो कौन जिम्मेवार है? बहुत अनाचार हो रहा है, बहुत गलत हो रहा है। बचपन के क्षण इतने अदभुत हैं कि जीवन में वे वापस नहीं लौटेंगे। हिसाब-किताब की बातें बाद में भी हो सकती हैं। पूरा जीवन पड़ा है लेकिन जीवन के कुछ मूल्यवान तत्व बचपन में ही दिए जा सकते हैं जो फिर कभी नहीं दिए जा सकते।

प्रकृति का सान्निध्य जिन बच्चों को नहीं मिलता उन बच्चों को परमात्मा का सान्निध्य भी नहीं मिल सकेगा यह जान लेना चाहिए। क्योंकि प्रकृति द्वार है परमात्मा का। आकाश के तले, सूरज के निकट, समुद्र की रेत पर, वृक्षों के पास जो वहां मौजूद है, जो उपस्थिति है वहां परमात्मा की, उसे जिसने बचपन में अनुभव नहीं कर लिया है

वह बुढ़ापे तक मंदिरों में पूजा करेगा, पत्थर की मूर्तियों के सामने सिर झुकायेगा, गी ता, कुरान और बाइबिल कंठस्थ कर लेगा लेकिन परमात्मा से उसका कोई संबंध नहीं हो सकता। जो द्वार था उसने उसको ही खो दिया है। जो रास्ता था वह उससे भटक गया है।

सम्यक शिक्षा (त्तपहीज ंमकनबंजपवद) के लिए जो पहली बात जरूरी है वह यह कि हम बच्चों को प्रकृति का सान्निध्य उपलब्ध कर सकें। उन्हें हम मनुष्य निर्मित मकानों के पास नहीं, जीवन की ऊर्जा से जो निर्मित हुआ है उसके निकट ला सकें, उसी से वे परमात्मा के निकट पहुंच सकेंगे, उसी से वे प्रार्थना के सूत्र समझ सकेंगे। पीछे आन ी चाहिए गणित, प्रेम पहले, क्योंकि जिस आदमी ने प्रेम सीख लिया है फिर गणित उ से धोखा नहीं दे सकेगी।

संत अगस्टीन से किसी ने पूछा, हम क्या करें कि हमसे बुरा न हो? अगस्टीन ने कहा, यह मत पूछें कि हम क्या करें, यह सवाल नहीं है। अगर भीतर प्रेम नहीं है तो तुम जो भी करोगे वह बुरा होगा। और अगर भीतर प्रेम है तो तुम भी करोगे वह बुरा नहीं हो सकता है। लेकिन प्रेम की हमने कौन सी शिक्षा दी है, हमने प्रेम के कौन से प्रमाणपत्र बांटें हैं, हमने प्रेम की कौन सी उपाधियां दी हैं? और अगर तीन हजार वष ों में आदमी बिलकुल प्रेमशून्य ही हो गया हो, हत्यारा हो गया हो, हिंसक हो गया हो तो कौन है जिम्मेवार? हमारी शिक्षा के अतिरिक्त और किसी पर यह दोष दिया जा सकता, लेकिन इसके शिक्षक बुरा न मानें क्योंकि शिक्षा को यह दोष देने का मतलब है मैं शिक्षा को बहु आदर दे रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं कि शिक्षा जीवन का केंद्र है इसलिए केंद्रीय दोष भी झेलने की तैयारी शिक्षक के पास होनी चाहिए क्योंकि केंद्री य सम्मान भी केवल उसी को मिल सकता है।

कल अगर जीवन परिवर्तित होगा तो सम्मानित भी शिक्षा ही होगी और अगर आज जीवन दूषित और विषाक्त हो गया है तो उसके केंद्रीय दोष को, जिम्मेवारी (त्तमेचप वदेपइपसपजल) को लेने को शिक्षाशास्त्री को तत्पर होना चाहिए। यह शिक्षा के केंद्री य होने का, शिक्षा के केंद्र में होने का प्रमाण है। यह सम्मानपूर्ण है। यह बात मैं कह रहा हूं इसलिए क्योंकि शिक्षा केंद्रीय है, न तो राजनीतिज्ञ जिम्मेवार है और न धर्मगुरु , उतना जितना शिक्षक जिम्मेवार है। लेकिन आनेवाली दुनिया भी शिक्षक को ही सम्मान देगी अगर वह जीवन को बदलने का कोई आधार रख सकता है। अगर आप नह ीं बदल सकेंगे तो बच्चे खुद कल बदलना शुरू कर देंगे।

मेरे एक मित्र हालैंड और बेल्जियम से होकर लौटे। उन्होंने मुझे कहा वहां हाईस्कूल के लड़के और लड़कियों ने आगे पढ़ने से इंकार करना शुरू कर दिया है। उनके बड़े संगठन हैं और वे कहते हैं कि आगे पढ़ने से क्या होगा? मां बाप से भी वे यह पूछते हैं कि आप तो बहुत पढ़े लिखे हैं, आपके जीवन में क्या है? तो हमें व्यर्थ उसी मशी न से क्यों गुजारते हैं जिससे गुजर कर आपने कुछ भी नहीं पाया है? और मां बाप के पास उत्तर नहीं है इस कात का। अगर आपके बच्चे भी आपसे पूछेंगे कि शिक्षित होकर आपने क्या पा लिया? क्या उत्तर है आपके पास? तिजोरी बता देंगे अपनी? अ

पने बड़े मकान बता देंगे? दिल्ली में पाई गई अपनी कुर्सियां बताएंगे? क्या बताएंगे ब च्चों को?
है कुछ आपके पास, जो शिक्षित होकर अपने पा लिया है? किस बल से आप कह स कते हैं कि तेरा आत्मबल बड़ा है। किस बल पर आप कह सकते हैं कि मेरा आनंद ि वकसित हुआ है? लेकिन बल पर आप कह सकते हैं कि जीवन के प्रति मेरा अनुग्रह भाव विकसित हुआ है? क्या आप कह सकते हैं कि मैं धन्यभागी हुआ हूं? नहीं कह सकते हैं तो बच्चे आज नहीं कल आपसे पूछेंगे और अगर उत्तर नहीं है आपके पास तो मैं आपको कहे देता हूं बच्चे आज नहीं कल, आपकी शिक्षा की फैक्टरी में जाने से इनकार करेंगे उन्होंने बहुत शिक्षित मुल्कों में इंकार करना शुरू कर दिया है। ठीक भी है उनका इंकार। लेकिन इसके पहले कि वे इंकार करें, क्या हम सारे जीवन के स ोचने का ढंग गलत नहीं सकते?
जब तक बच्चा यौन दृष्टि से परिपक्व नहीं हो जाता तब तक उसके जीवन की केंद्रीय शिक्षा प्रेम और हृदय की होनी चाहिए। क्योंकि सारा जीवन उससे निकलेगा फिर व ह पत्नी बनेगी या पति बनेगा, वह बाप बनेगा या मां बनेगी, उसके जीवन के सारे र ागात्मक संबंध उसके प्रेम और हृदय के संबंध होंगे, गणित के नहीं, भूगोल के नहीं, इतिहास के नहीं। इतिहास पढ़ने से कोई मां ज्यादा बेहतर मां नहीं बन सकती और न भूगोल पढ़ने से कोई बाप ज्यादा बेहतर बाप बन सकता है। कुछ और चाहिए जो ए क बेहतर मां को, बेहतर बाप को पैदा करे। कुछ और चाहिए जो एक पति को और पत्नी को पैदा करे।
आज न तो दुनिया में मां है, न बाप, न पत्नी न पति। इनके नाम पर झूठे रिश्ते (चे मनकव-तमसंजपवदेीपचे) हैं। इनके नाम पर झूठे संबंध हैं। जिसको आप पत्नी कहते हैं उसको कभी आपने प्रेम किया है? यह तो हो भी सकता है कि जिसको आप पत्नी नहीं कहते हैं उसको आपने कभी प्रेम किया हो लेकिन जिसको आप पत्नी कहते हैं उसे कभी नहीं। जिसको पत्नी पति कहती है उसको कभी चाहा है? कभी आदर दिया है? उसे कभी प्रेम किया है? प्राणों ने कभी उसके लिए प्रार्थना की है। कभी उसके जीवन को समृद्ध और संगीतपूर्ण बनाने के लिए कोई कदम उठाए है? बिलकुल नहीं, बल्कि उसके जीवन में जितने कांटे बो सके पत्नी, उतने कांटे बोती है, जितनी बाधा एं खड़ी कर सके उतनी बाधाएं करती है और पति भी यही करती हैं, मां बाप भी य ही करते हैं।
कहते हैं कि हम अपने बच्चे को प्रेम करते हैं। हमने प्रेम जाना ही नहीं हम बच्चे क ो प्रेम कैसे करेंगे? अगर हम बच्चे को प्रेम करते होते तो दुनिया में इतने युद्ध नहीं हो सकते थे। कौन मां बाप हैं जो अपने बच्चे को युद्ध में भेजते? अगर हम अपने बच चे को प्रेम करते होते तो दुनिया इतनी कुरूप नहीं हो सकती थी। अगर हम अपन ब च्चों को प्रेम करते होते तो मैं यह कहता हूं कि आप बच्चे पैदा भी नहीं कर सकते थे। क्योंकि इस कुरूप और गंदी दुनिया में बच्चों को किस मुंह से लाते। मां बाप अपने बच्चे को पैदा करने को तौर होंगे? वे हाथ जोड़ लेंगे कि इस दुनिया में हम बच्चे

को कैसे लाए? किस मुंह से लाएं? बहुत लाया। कल बच्चे बड़े होंगे तो हम बेशर्म म
ालूम होंगे उनके सामने कि इस दुनिया कि इस दुनिया में हमने तुमको पैदा किया। इ
स कुरूप, बदशक्ल, अनीति से, अंधकार से भरी दुनिया में हम तुम्हें कैसे भेजें?
मां बाप बच्चे पैदा करने से इनकार कर देते अगर उनके हृदय में प्रेम होता। नहीं लेि
कन वे बच्चे पैदा किए चले जाते हैं। उन्हें बच्चे से कोई प्रयोजन नहीं है। वे बच्चे को
 बड़ा किए चले जाते हैं। वे बच्चे को तोड़कर बंदूक का भोजन बनाए चले जाते हैं।
नई नई तरकीबों और नए नए नामों पर बच्चों की हत्या करवाए चले जाते हैं--हिंदुस्
तान के नाम पर, पाकिस्तान के पास पर, चीन के नाम पर, कम्युनिज्म के नाम पर,
डेमोक्रेसी के नाम पर। किसी भी बड़े नारे के नाम पर मां बाप अपने बच्चों की हत्या
 करवाने को हमेशा तैयार है। बहुत बड़े हैं, नारे बहुत बड़े हैं, बच्चे बहुत छोटे हैं।
अगर दुनिया में प्रेम होता तो मां बाप के मन में बच्चों के प्रति प्रेम के कारण एक दू
सरी दुनिया पैदा होती जिसमें युद्ध नहीं हो सकते थे। क्यों? क्योंकि हर बच्चा किसी
मां का बच्चा है और हर बच्चा किसी बाप का बेटा है। कौन बच्चे को युद्ध में भेजने
के लिए राजी होता? हम कह देते मिट जाए पाकिस्तान, मिटे हिंदुस्तान लेकिन बच्चे
युद्ध में नहीं जा सकते। न बचे चीन, न बचे रूस, न बचे अमरीका, लेकिन कोई मां
अपने बच्चे को युद्ध पर भेजने के लिए तैयार नहीं है। दुनिया में युद्ध भी खत्म होते,
 राजनीतिज्ञ भी, राष्ट्र भी। लेकिन कोई अपने बेटे को प्रेम नहीं करता है। प्रेम हम ज
ानते ही नहीं हैं। प्रेम से हमारी परिचय भी नहीं है। प्रेम हमारी मुलाकात ही नहीं हो
पाई। प्रेम से मुलाकात के क्षणों को हमने न मालूम क्या क्या फिजूल की बातें सीखने
में नष्ट कर दिया है। मेरी दृष्टि में शिक्षा की बुनियाद होनी चाहिए प्रेम, बुद्धि नहीं।
बुद्धि केवल उपकरण है। अगर भीतर प्रेम होगा तो बुद्धि एक उपकरण बन जाती है
प्रेम को फैलाने और विकसित करने का, और भीतर अगर प्रेम होगा तो बुद्धि एक उ
पकरण बन जाती है प्रेम को फैलाने और विकसित करने का, और भीतर अगर प्रेम
नहीं होगा तो बुद्धि उपकरण बन जाती है घृणा को फैलाने का।
ट्रूमेन ने हिरोशिमा पर एटम बम गिराने की आज्ञा दी। दूसरे दिन सुबह मैंने सुना है प
त्रकारों ने ट्रूमेन को घेर लिया और पूछा, रात आप शांति से सो सके? ट्रूमेन ने कहा
 बहुत शांति से। जैसे ही मुझे खबर मिली कि हिरोशिमा, नागासाकी राख हो गए औ
र जापान समर्पण कर देगा वैसे ही पहली रफा शांति से सो सका। उन पत्रकारों में से
 किसी ने भी यह नहीं पूछा कि एक लाख बीस हजार आदमी नष्ट हो गए और तुम
शांति से सो सके? तुम आदमी हो या कुछ और? लेकिन उस आदमी का नाम है ट्रूमे
न (ंतनउंद) असली आदमी।
हमारी शिक्षा ऐसे ही ट्रूमेन पैदा कर रही है। जिनके भीतर कोई मनुष्यता, प्राणों की
कोई ऊर्जा, कोई करुणा नहीं है। जिनके पास प्रेम का कोई झरना नहीं है वे हिसाब ल
गाने वाले कमप्यूटर्स, मशीन हो सकते हैं लेकिन आदमी नहीं। आदमी की पहली पहच
ान उसके भीतर का प्रेम है, जितना बड़ा प्रेम उतना बड़ा आदमी। जितना बड़ा प्रेम उ
तनी उस आदमी की परमात्मा से सन्निधि। इसलिए एक बात ही बुनियादी रूप से कह

ना चाहता हूं कि शिक्षा के प्राथमिक क्षण प्रेम के क्षण होने चाहिए। और प्रेम के क्षण पाने के लिए बंद दीवारें नहीं, खुला आकाश, पक्षी और वृक्ष, तारे और चांद चाहिए। प्राथमिक शिक्षा गणित की नहीं काव्य की। प्राथमिक शिक्षा भूगोल की नहीं सौंदर्य की। प्राथमिक शिक्षा विज्ञान की नहीं,कला की। प्राथमिक शिक्षा तनाव की नहीं, विश्राम की और शांति की। अगर हम चौदह वर्ष तक की शिक्षा को इस भांति व्यवस्थित कर सके तो बाद में इन बच्चों को बिगाड़ना कठिन है। इनको फिर किसी भी स्कूल और किसी भी युनिवर्सिटी में भेजा जा सकता है। फिर इन्हें कुछ सिखाया जा सकता है। उसमें फिर कोई खतरा नहीं होगा। इनके प्रेमपूर्ण हाथ में अगर तलवार दी जाएगी तो उस तलवार से कोई नुकसान नहीं होगा। एटम दे दिया जाएगा तो कोई नुकसान नह ीं होगा। बड़ी से बड़ी शक्ति प्रेम के हाथों में सृजनात्मक (बतमंजपअत) हो जाती है। विज्ञान में शक्ति खोजते हैं बड़ी से बड़ी, लेकिन शिक्षक प्रेमपूर्ण हृदय नहीं दे पाया। बड़ी शक्ति खतरनाक है उन हाथों में जिनके पास प्रेम न हो।

नादिरशाह हिंदुस्तान की तरफ आता था। एक ज्योतिषी को उसने पूछा कि मैं सुनता हूं कि ज्यादा सोचना, ज्यादा नींद लेना बहुत बुरा है और मुझे तो बहुत नींद आती है । क्या सच में बहुत बुरी बात है ज्यादा देर सोए रहना? उस ज्योतिषी ने कहा, नहीं, आप जैसे लोग अगर चौबीस घंटे सोए रहें तो बहुत अच्छा है। बुरे लोग अगर बिलकु ल सो जाए तो बहुत अच्छा है। भले लोगों का जागना अच्छा होता है। और बुर लोगों का सोना।

सुनते हैं नादिरशाह ने उस आदमी की गर्दन कटवा दी लेकिन उसने बात बड़ी सच्ची कही थी। सच्ची बात कहने वालों की गर्दन काटे जाने का पुराना रिवाज रहा है। उस ने बात ठीक कहीं थी। बुरे आदमी का सोना अच्छा है, अच्छे आदमी का जागना। ऐसे ही मैं कहता हूं प्रेमपूर्ण व्यक्ति का शक्तिशाली होना अच्छा है, प्रेम शून्य व्यक्ति का शक्तिहीन नपुंसक (टउचवजमदज) होना अच्छा है। प्रेमपूर्ण व्यक्ति के हाथ में शक्ति ह ो तो जीवन विकसित होता है। प्रेमशून्य व्यक्ति के हाथ में शक्ति हो तो जीवन एक कब्रिस्तान बनेगा और कुछ भी नहीं बन सकता।

इस दिशा में चिंतन करना जरूरी है। शिक्षकों से मैं यही प्रार्थना और निवेदन करने अ ाया हूं कि वे सोचें, वे इस संबंध में सोचें कि हृदय का विकास कैसे हो और अगर ज रूरी हो, जैसा मुझे लगता है कि है, तो सौ वर्ष के लिए सारी दुनिया के सारे विद्याल य और सारे विद्यापीठ बंद कर दिए जाए और आदमी के मन को बिलकुल ही अशिि क्षत छोड़ दिया जाए तो भी नुकसान न होगा, जितना नुकसान सो वर्ष में जो शिक्षा चल रही है उसका देने से होने वाला है। आदमी हजारों वर्ष अशिक्षित था। उन अशिि क्षत लोगों ने आनंद जाना है, गीत जाने, प्रेम जाना। उन्होंने भी एक दुनिया बनायी थ ी। उनके जीवन में भी खुशी थी और मुस्कुराहटें थीं, इसमें बहुत ज्यादा। हमने सब ख ो दिया है। आदमी के निसर्ग को वापस लौटा लेना जरूरी है।

मैं यह नहीं कहता हूं कि शिक्षा खत्म कर दी जाए। मैं यह कह रहा हूं कि शिक्षा की बुनियाद को बदल दिया जाए। और यही शिक्षा चलती हो और कोई विकल्प (:सजम

तदंजपअम) शेष न हो, यही शिक्षा एकमात्र चुनाव हो तो मैं कहता हूं यह सारी शिक्ष
ा बंद हो जाए और आदमी वापस जंगल में लौट जाए तो भी हम कुछ खोएंगे नहीं।
लेकिन मुझे लगता है कि विकल्प है, इस शिक्षा को परिपूर्ण किया जा सकता है। एक
चीज इसमें जुड़ जाए, इसके आधार प्रेम के, भाव के, हृदय के, करुणा और दया के
हो जाएं। मनुष्य के हृदय को हम पहले विकसित कर लें पीछे उसकी बुद्धि को। हृद
य नेतृत्व करे, बुद्धि अनुगामी हो तो यह शिक्षा भी सम्यक हो सकती है।
मैं निराश नहीं हूं। निराश होता तो फिर आपसे यह बात नहीं कहता। शिक्षकों से यह
बात इसी आशा से कहता हूं कि वे सोचेंगे। उनके हाथ में बड़ी शक्ति है। आज नहीं
कल दुनिया उन्हें जिम्मेवार ठहराएगी अगर गलत हो गया तो। उससे पहले चिंतन क
र लेना उचित है। जीवन का मंदिर बनाना है तो आधार प्रेम के रखने होंगे और बच
पन के चौदह वर्ष तक का समय प्रेम के लिए अदभुत मौका है। उस वक्त अगर हम
चूक जाते हैं तो हम हमेशा के लिए चूक जाते हैं। फिर कोई उपाय नहीं रह जाता ि
क हम उसमें बदलाहट ला सकें। जब कि बचपन में बदलाहट लाने के लिए कुछ भी
करना जरूरी नहीं था। प्रेम के झरने बहने को उत्सुक थे। हमने जान बूझकर उन्हें रो
क दिया, बहने नहीं दिया। हम केवल मौका बन जाए उनके प्रेम के झरने को बहाने
के लिए तो बिलकुल ही नए तरह के मनुष्य को पैदा करने में हम समर्थ हो सकते हैं।

एक नए मनुष्य की अत्यंत जरूरत है। न तो इतनी जरूरत इस बात की है कि हम
और नए एटम बम और हाइड्रोजन बम बनाए। न इस बात की जरूरत है कि हम चां
द तारे पर पहुंचने के लिए स्पुतनिक और यान बनाए। न इस बात की जरूरत है कि
हम समुद्रों की गहरइयां नाप लें, न इस बात की जरूरत है कि हम बहुत बड़ी फैक्टि
रयां, बहुत बड़े बड़े पुल, बहुत बड़े बड़े रास्ते बनाए। ये सब पड़े रह जाएंगे। आदमी
अगर गलत हो गया तो ये सब व्यर्थ हो जाएंगे। इस वक्त तो एक ही जरूरत है और
वह यह है कि हम ठीक आदमी बनाए। आदमी गलत है, ठीक आदमी कैसे निर्मित
हो इस दिशा में हम सोचें।

शिक्षा : महत्वाकांक्षा और युवा पीढ़ी का विद्रोह
मनुष्य की आज तक की सारी शिक्षा महत्वाकांक्षा की शिक्षा रही है। वह मनुष्य को
ऐसी दौड़ में गति देती है जो कभी भी पूरी नहीं होती। और जीवन भर की दौड़ के
बाद भी हृदय खाली का खाली रह जाता है। मनुष्य के मन का पात्र जीवन भर की
कोशिश के बाद भी अंत अपने को खाली पाता है। इसीलिए मैं ऐसी शिक्षा को सम्यक
नहीं कहता।
मैं उसी शिक्षा को सम्यक शिक्षा (त्तपहीज मकनबंजपवद) कहता हूं, तो मनुष्य की म
न को भरने की इस व्यर्थ की दौड़ को समाप्त कर दे। मैं उसी शिक्षा को सम्यक कह
ता हूं जो महत्वाकांक्षा के इस ज्वर से मनुष्य को मुक्त कर दे। मैं उसी शिक्षा को ठी
क शिक्षा कहता हूं जो मनुष्य कोई बुनियादी भूल से छुटकारा दिलाने में सहायक हो

जाए। लेकिन ऐसी शिक्षा पृथ्वी पर कहीं भी नहीं। उल्टे जिसे शिक्षा कहते हैं वह मनुष्य की महत्वाकांक्षा (:उइपजपवद) को बढ़ाने का काम करती है। उसकी महत्वाकांक्षा की आग में घी डालती है, उसकी आग को प्रज्वलित करती है, उसके भीतर जोर से त्वरा पैदा करती है, जोर से गति पैदा करती है कि वह व्यक्ति दौड़े और अपनी महत्वाकांक्षा को पूरा करने में लग जाए। मन की वासनाओं को पूरा करने के लिए व्यक्ति को सक्षम बनाने की कोशिश करती है शिक्षा, मन को महत्वाकांक्षा से मुक्त होने के लिए हनीं। और इसके स्वाभाविक परिणाम फलित होने शुरू हुए हैं। सारे लोग अगर महत्वाकांक्षी हो जाएंगे तो जीवन एक द्वंद्व और संघर्ष के अतिरिक्त कुछ भी नहीं हो सकता है। अगर सारे लोग अपनी महत्वाकांक्षा के पीछे पागल हो जाएंगे तो जीवन एक बड़े युद्ध के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हो सकता है।

पुराने जमाने के लोग अच्छे नहीं थे। आज के जमाने के लोग बुरे नहीं हो गए हैं। यह भ्रांति है बिलकुल कि पहले के जमाने के लोग अच्छे थे और आज के लोग बुरे हो गए हैं। यह भी भ्रांति है कि पहले जमाने के युवक अच्छे थे और आज के युवक पतित हो गए हैं और चरित्रहीन हो गए हैं। झूठी हैं ये बातें, इनमें कोई भी तथ्य नहीं है। लेकिन एक फर्क जरूर पड़ा है। पुराने जमाने का जवान शिक्षित नहीं था, उसकी महत्वाकांक्षा बहुत कम थी। आज की दुनिया का युवक शिक्षित है। उसकी महत्वाकांक्षा की अग्नि में घी डाला गया है। वह पागल होकर प्रज्वलित हो उठी है और जितनी जोर से शिक्षा बढ़ती जाएगी उतनी ही जोर से यह विक्षिप्तता और पागलपन भी बढ़ता जाएगा। शिक्षा के साथ-साथ मनुष्य का पागलपन भी विकसित हो रहा है।

अतीत के लोग अशिक्षित थे, बेपढ़े लिखे लोग थे। उनकी महत्वाकांक्षा धीमे धीमे जलती है। आज के युग की शिक्षा ने आदमी को, उसकी महत्वाकांक्षा को बहुत प्रज्वलित कर दिया है। पहले कभी कोई एकाध आदमी पागल हो जाता था और सिकंदर बनने की कोशिश करता था। अब सब आदमी पागल हैं और सभी सिकंदर होना चाहते हैं। और हम सिकंदर और पागल बनाने की इस कोशिश को शिक्षा का नाम देते हैं।

मैंने पुरानी से पुरानी किताबें देखी हैं और मैं देखकर हैरान हो गया। चीन में संभवतः दुनिया की सबसे पुरानी किताब है जो साढ़े छह हजार वर्ष पुरानी है और उस किताब की भूमिका में लिखा हुआ है कि आजकल के लोग बिलकुल बिगड़ गए हैं, पहले के लोग बहुत अच्छे थे। मैं बहुत हैरान हुआ। वह भूमिका इतनी आधुनिक मालूम पड़ती है कि लगता है आजकल के किसी लेखक ने किताब लिखी हो। साढ़े छह हजार वर्ष पहले कोई लिखता है कि आजकल के लोग बिगड़ गए हैं, पहले के लोग अच्छे थे! यह पहले के लोग कब थे?

आज तक जमीन पर एक भी किताब ऐसी नहीं है जिसमें लिखा हो कि आजकल के लोग अच्छे हैं। हर किताब कहती है कि पहले लोग अच्छे थे। यह पहले की बात बिलकुल कल्पना, बिलकुल असत्य है। अगर पहले के लोग अच्छे थे तो ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध ने किन लोगों को सिखाया कि चोरी मत करो, झूठ मत बोलो, हिंसा मत करो? किन लोगों को सिखाई है यह बात? अगर पहले के लोग अच्छे थे तो महाभार

त कौन कराता था और सीता कौन चुरा ले जाता था? और अगर पहले के लोग अच्छे थे तो दुनिया में यह जो उपदेशक हुए जीसस क्राइस्ट, कृष्ण, बुद्ध और कन्फ्यूसियस, इन्होंने किन लोगों के सामने अपनी बातें समझाई? ये किनके लिए रोते थे? इनके हृदय में किनके लिए वेदना थी? ये किनसे कहते रहे कि तुम अच्छे हो जाओ? तो फिर ये सारे लोग पागल थे कि लोग अच्छे थे और ये व्यर्थ ही उपदेश दिए जाते थे। अगर यहां सभी लोग सच बोलने वाले हों और मैं आकर समझाने लगूं कि आपको सच बोलना चाहिए तो लोग हंसेंगे कि आप किसको समझा रहे हैं! यहां तो सभी लोग सच बोलते ही हैं।

दुनिया भर के शिक्षकों की शिक्षाएं यह कहती हैं कि लोग कभी भी अच्छे नहीं थे। जो फर्क पड़ा है वह इस बात में नहीं पड़ा कि लोग बुरे हो गए हैं। फर्क बड़ा है कि बुरे लोग शिक्षित हो गए हैं और शिक्षा ने बुरे लोगों को अपनी बुराई से बचाने के लिए कवच का रूप ले लिया है। शिक्षा उनकी बुराई को बचाने का माध्यम हो गई है। शिक्षा उनकी बुराई को बढ़ाने का माध्यम हो गई है। शिक्षा उनकी बुराई की जड़ों को पानी डालने का कारण बन गई है। लोग बुरे नहीं हो गए लेकिन बुरे लोग ज्यादा सबल और ज्यादा शक्तिमान हो गए हैं और उनके हाथ में शिक्षा ने बड़ा अस्त्र शस्त्र दे दिए हैं।

एक बुरा आदमी हो और उसके पास तलवार न हो और एक बुरा आदमी हो उसके हाथ में एटम बम आ जाए तो जिसके हाथ में एटम बम है वह बहुत बड़ी बुराई कर सकेगा और शायद तब हम सोचेंगे जिनके पास एटम बम नहीं था वे बड़े कोई अच्छे लोग थे। उनके हाथ में पत्थर थे तो उन्होंने पत्थर फेंके थे और एटम बम उनके हाथ में आ गया तो वे एटम बम फेंक रहे हैं। फेंकने वाले वही के वहीं हैं। केवल फिंकने वाली चीज की ताकत बढ़ गई है।

आदमी शिक्षित हुआ है और शिक्षा गलत है। आदमी बुरा हमेशा से था। शिक्षा ने बुराई को हजार गुनी ताकत दे दी है। कहते हैं न, करेला नीम पर चढ़ जाए तो और कडवा हो जाता है। बुरे आदमी शिक्षा की नीम पर चढ़ गए। करेला तो पहले से ही कडवा था और शिक्षा की नीम ने और कड़वा कर दिया है। और यह भी मत सोचना कि आज की शिक्षा ही गलत है, आज तक की सारी गलत रही है। यह भी मत सोचना कि पश्चिम के लोगों ने आकर शिक्षा गलत कर दी है। यह भूल से मत सोचना। शिक्षा हमेशा से गलत रही है। और यह भी मत सोचना कि विद्यार्थी गलत हो गए हैं। सब विद्यार्थी और सब गुरु हमेशा से गलत रहे हैं।

द्रोणाचार्य का नाम हम भलीभांति जानते हैं। अपने एक अमीर शिष्य के पक्ष में गरीब शूद्र का अंगूठा काट लाए थे। वे गुरु थे! एकलव्य से इसलिए अंगूठा लिया था कि अंगूठा दे दे तू, क्योंकि एकलव्य था शूद्र, गरीब और दरिद्र। और अर्जुन था धनपति, सम्राट, राजकुमार। अगर एकलव्य धनुर्विद्या में बड़ा हो जाए तो अर्जुन को कोई पूछेगा ही नहीं दुनिया में। तो उस गरीब शूद्र लड़के से अंगूठा कटवा लिया ताकि अमीर शिष्य आगे बढ़े जाए। पहले से ही गुरु गरीब शिष्यों के अंगूठे काटते रहे हैं यह कोई आ

ज की बात नहीं है। लेकिन एक फर्क पड़ गया है। पुराना एकलव्य सीधा सादा था। उ सने अंगूठा दे दिया था। नए एकलव्य अंगूठा देने से इंकार कर रहे है। वे कहते हैं, इ स अंगूठा नहीं देंगे और वे कहते हैं कि यदि ज्यादा कोशिश की तो हम तुम्हारे अंगूठे काट लेंगे। यह फर्क पड़ गया है। इसके अतिरिक्त और कोई फर्क नहीं पड़ा है।
यह जो स्थिति है, यह जो आदमी की आज दशा है उससे चिंता होती है। हर तरफ ि वद्यार्थी आग लगा रहे हैं, पत्थर फेंक रहे हैं मकान तोड़ रहे हैं, यह कोई सामान्य घ टना नहीं है। और यह घटना आज के विद्यार्थियों भर से संबंधित नहीं है। यह पांच ह जार वर्ष का युवकों का रोष है जो इकट्ठा हो कर चरम सीमा पर पहुंच गया है। यह पांच हजार वर्ष की गलत शिक्षा का अंतिम फल है। यह पांच वर्षों के शोषण—यह प ांच हजार वर्षों के दमित युवक के मन की पीड़ा और वेदना है और आज उसने वह जगह ले ली है कि अब उस वेदना को कोई ठीक मार्ग नहीं मिल रहा है तो वह गल त मार्गों से प्रकट हो रही है।
असल बात यह है कि युवक मकान तोड़ना नहीं चाहता है। कौन पागल होगा जो मक ान तोड़ेगा? क्योंकि मकान अंततः किसके टूटते हैं? बूढ़ों के नहीं टूटते हैं, हमेशा युव कों के ही टूटते हैं। क्योंकि बूढ़े कल बिदा हो जाएंगे और मकान युवकों के हाथ में प. डेंगे। फिर कौन महान तोड़ना चाहता है? कौन कांच तोड़ना चाहता है? कौन बसें ज लाना चाहता है? कोई नहीं जलाना चाहता। शायद मन के भीतर किन्हीं और चीजों को जलाने की तीव्र भावना पैदा हो गई है और समझ में नहीं आ रहा है कि हम कि स चीज को जलाए तो हम किसी भी चीज को जला रहे हैं। सारे अतीत को जलाने का खयाल आज मनुष्य के भीतर पैदा हो रहा है और समझ में नहीं आ रहा है कि हम क्या जलाए, हम क्या करें, हम क्या तोड़ दें? कोई चीज तोड़ने जैसी हो गई है। कोई चीज मिटाने जैसी हो गई है। कोई चीज बिलकुल जलाने जैसी हो गई है। हर यु ग में कुछ चीजें जला देनी पड़ती है ताकि हम अतीत से मुक्त हो जाए और आगे बढ़ जाए, ताकि परंपराओं से मुक्त हो जाए और जीवन गतिमान हो सके। नदी जब समु द्र की ओर दौड़ती है तो न मालूम कितने पत्थर तोड़ने पड़ते हैं, कितनी मार्ग की बा धाएं, हटानी पड़ती हैं, कितने दरख्त गिरा देने पड़ते हैं, तब कहीं रास्ता बनता है औ र नदी समुद्र तक पहुंचती है।
हजारों हजारों साल से मनुष्य की चेतना को रोकने वाली बहुत सी चीजें पत्थरों की दीवाल की तरह खड़ी हैं। आज तक आदमी ने विचार नहीं किया उन्हें तोड़ डालने क ा। लेकिन जैसे जैसे मनुष्य की चेतना में समझ, बोध और विचार का जन्म हो रहा है वैसे ही एक तीव्र वेदना, एक तीव्र आंदोलन सारे जगत में प्रकट हो रहा है। युवक नासमझ है कि वह कुछ भी तोड़ने में लग गया है। लेकिन फिर भी मुझे बड़ी खुशी हो ती है और मेरे हृदय में बड़ा स्वागत है कि कम से कम उसने तोड़ना तो शुरू किया। आज गलत चीजें तोड़ता है कल ठीक चीजें तोड़ने के लिए हम उसे राजी कर लेंगे। अभागे तो वे युवक थे जिन्होंने कभी कुछ तोड़ा ही नहीं। तोड़ने की सामर्थ्य एक बार पैदा हो जाए तो तोड़ने की शक्ति को दिशा दी जा सकती है। एक बार विध्वंस की

शक्ति आ जाए तो उस शक्ति को सृजनात्मक बनाया जा सकता है। क्योंकि स्मरण र
हे जो लोग तोड़ ही नहीं सकते वे बना भी कैसे सकते हैं। और खयाल रहे सृजन का
पहला सूत्र विध्वंस है। बनाने के पहले तोड़ देना पड़ता है।

एक गांव था। और उस गांव में एक बहुत पुराना चर्च था। वह चर्च इतना पुराना हो
गया था। जैसे कि सभी चर्च पुराने हो गए हैं, सभी मंदिर पुराने हो गए हैं। वह बहु
त पुराना हो गया था। उसकी दीवालें इतनी जीर्ण हो गई थीं कि उस चर्च के भीतर
भी जाना खतरनाक था। वह किसी भी क्षण गिर सकता था। आकाश में बादल आ ज
ाते और आवाज होती तो चर्च कांपता था। हवाएं चलती थीं तो चर्च कांपता था। हमे
शा डर रहता कि चर्च कभी भी गिर सकता है। चर्च में जाना तो दूर, पड़ोस के लोग
ों ने भी पड़ोस में रहना छोड़ दिया था। डर था कि चर्च किसी भी दिन गिर जाएगा
और प्राण ले लेगा। चर्च संरक्षक गांव भर में पूछते कि आप लोग चर्च क्यों नहीं चल
ते हैं? क्या अधार्मिक हो गए हैं? क्या ईश्वर का नहीं मानते हैं? लेकिन कोई भी अ
धार्मिक हो गए हैं? क्या ईश्वर को नहीं मानते हैं? लेकिन कोई भी इस बात को नहीं
पूछता था कि कहीं ऐसा तो नहीं है चर्च बहुत पुराना हो गया है और उसके नीचे
केवल वे ही जा सकते हैं जिनकी कब्र में जाने की तैयारी है, बिलकुल बूढ़ा हो गए हैं
, जिनको अब मरने से कोई डर नहीं है। जवान उस चर्च में नहीं जा सकते जो इतना
गिने के करीब है। आखिर संरक्षक घबरा गए और उन्होंने एक कमेटी बुलायी और
सोचा कि अब अगर कोई आता ही नहीं इस पुराने चर्च में तो उचित होगा कि हम
नया चर्च बना लें। उन्होंने चार प्रस्ताव पास किए उस कमेटी में उन पर जरा गौर क
र लेना क्योंकि उनका बड़ा अर्थ है।

उन्होंने चार प्रस्ताव किए। पहला संकल्प और पहला प्रस्ताव उन्होंने यह किया कि पुरा
ने चर्च को गिरा देना चाहिए। सबने कहा कि यह बिलकुल ठीक है। सब एक मत से
राजी हो गए। दूसरा प्रस्ताव उन्होंने यह किया कि हमें इसकी जगह एक नया चर्च ब
नाना चाहिए लेकिन ठीक उसी जगह जहां पुराना चर्च खड़ा है और ठीक वैसा ही जैस
ा पुराना चर्च है। इस पर भी सभी लोग राजी हो गए। तीसरा प्रस्ताव उन्होंने यह कि
या कि हमें पुराने चर्च में जो जो सामान लगा है उसी सामान से नया चर्च बनाना है।
दरवाजे भी वहीं, ईंटें भी वही। पुराने चर्च के सारे सामान से यह नया चर्च बनाना
है। इस पर भी सब लोग राजी हो गए। और चौथा प्रस्ताव उन्होंने यह पास किया कि
जब तक नया चर्च न बन जाए तब तक पुराना चर्च गिराना नहीं है।

वह चर्च अभी भी खड़ा हुआ है। वह हमेशा खड़ा रहेगा। वह कभी नहीं गिर सकता क
योंकि वे प्रस्ताव पास करने वाले बड़े होशियार थे।

आदमी की जिंदगी पर भी पुराने चर्चों का बहुत भार है। पुरानी परंपराओं का, पुरा
ने मंदिरों का, पुराने शास्त्रों का, पुराने लोगों का। अतीत जकड़े हुए है मनुष्य के भवि
ष्य को। पीछे की तरफ हमारी टांग कसी हुई है किन्हीं जंजीरों से और आगे की तरफ
हम मुक्त हो पाते तो प्राण तड़फड़ा उठते हैं कि तोड़ दो सब। और सब कोई उत्सुक
हो जाता है तोड़ने को तो वह यह भूल जाता है कि हम क्या तोड़ रहे हैं।

युवक तोड़ रहे हैं यह तो खुशी की और स्वागत की बात है, लेकिन गलत चीजें तोड़ रहे हैं यह दुख की बात है। कुछ और जरूरी चीजें हैं जो तोड़नी चाहिए। मुल्क के नेता और मुल्क के अगुवा यही चाहते हैं कि युवक गलत चीजें तोड़ते रहें ताकि उन्हें कहीं ठीक चीजें तोड़ने की खयाल न जाए। वे भी यही चाहते हैं, यद्यपि वे समझाते हैं कि चीजें मत तोड़ो, बस में आग मत लगाओ, मकान मत जलाओ। वे समझाते हैं कि यह बहुत बुरा हो रहा है लेकिन हृदय के बहुत गहरे कोने में वे यही चाहते हैं कि युवकों का मन व्यर्थ की चीजें तोड़ने तक उनका खयाल न चला जाए। इसलिए जब कोई गलत चीजें तोड़ रहा है तो वह न सोचे कि उससे जिंदगी बनेगी। यह लोगों के हाथ में खेल रहा है उसका उसे पता ही नहीं है।

नेता हमेशा मुल्क की चेतना को, देश के मन को गलत चीजों में उलझा देना चाहते हैं। और इस बात के पीछे बहुत गहरी चालाकी है। चालाकी यह है कि अगर लोगों को गलत चीजों में उलझा दिया जाए तो ठीक चीजें तोड़ने से उन्हें रोका जा सकता है। उनकी ताकत व्यर्थ की चीजों को नष्ट करने मग समाप्त हो जाती है। और न केवल ताकत समाप्त हो जाती है बल्कि व्यर्थ चीजें तोड़कर वे खुद पचात्ताप से भर जाते हैं और तब उनकी तोड़ने की हिम्मत क्षीण हो जाती है। उनका अंतःकरण कहने लगता है, यह सब गलत हो रहा है। उनके पास भी यह आत्मबल नहीं होता है कि वे यह कह सकें कि हमने इस बस में आग लगाई है तो कुछ ठीक किया है। उनके पास यह आत्मबल नहीं हो सकता है। गलत चीजें टूटने से कुछ बिगड़ता नहीं, उल्टे तोड़ने वाले का आत्मबल नष्ट होता है और उसकी तोड़ने की क्षमता नष्ट होती है। उसकी तोड़ने की शक्ति व्यर्थ की चीजों में उलझकर समाप्त हो जाती है।

उनसे ज्यादा से ज्यादा खतरा तभी तक होता है जब तक वे विश्वविद्यालय में पढ़ रहे हैं। उसके बाद उनसे कोई खतरा नहीं होता, क्योंकि उनकी पत्नियां, उनके बच्चे उनके सारे खतरे के लिए शाक एब्जार्वर का काम करने लगेंगे। फिर उनसे कोई खतरा नहीं है। एक बार उनकी शादी हो जाए तो उनसे कोई खतरा नहीं है। और मैं आपसे यह भी कह देता हूं, जैसा मैंने आपसे कहा कि युवक शिक्षित हो गया है इसलिए खतरा बढ़ा है, दूसरी बात, शादी की उम्र बड़ी हो गई है, इससे भी खतरा बढ़ा है। क्योंकि शादियां बहुत पुराने दिनों से आदमी के भीतर विद्रोह की क्षमता को तोड़ने का काम करती रही हैं, जो विद्रोही चेतना है उसको नष्ट करने का काम करती रही हैं। पुराने लोग इस मामले में बड़े होशियार थे। दस बारह साल के लड़कियों और लड़कों को विवाहित कर देते थे। उसके बाद उनसे विद्रोह की कोई संभावना नहीं रह जाती थी, वे उसी वक्त से बूढ़े होने शुरू हो जाते थे। असल में वे जवान हो ही नहीं पाते थे।

सारी दुनिया में शिक्षा के साथ दूसरा तत्व यह है कि विवाह की उम्र लंबी हुई है। चौबीस वर्ष और बीस वर्ष के युवक और युवतियां अविवाहित हैं। ये दिन विद्रोह की क्षमता के विकसित होने के क्षण हैं। उनके ऊपर कोई बंध नहीं। ये क्षण हैं, जब विद्रोह को सोच सकते हैं, जब उनकी आत्मा किन्हीं चीजों को गलत कह सकती है।

अमरीका के मनोवैज्ञानिकों ने सलाह दी है कि अमरीका में फिर छोटी उम्र में शादी शुरू कर देनी चाहिए। अगर चीजों को बचाना है कि युवक उन्हें तोड़ न दें, तो उनक ी शादी जल्दी हो जानी चाहिए। क्योंकि तब उनकी सारी ताकत नमक, तेल, लकड़ी जुटाने में समाप्त हो जाती है। फिर उनसे कुछ भी नहीं हो सकता। जवानी में नमक तेल लकड़ी जुटाते हैं, बुढ़ापे में स्वर्ग, पर लोग वगैरह की व्यवस्था के लिए भजन की र्तन करते हैं। फिर उनसे कोई विद्रोह नहीं हो सकता। विद्रोह के क्षण हैं उनके पच्ची स वर्ष से पहले के क्षण।

दुनिया में जो इतनी चीजें टूट रही हैं उसके पीछे ये कारण हैं। लेकिन मेरे मन में इस से दुख नहीं है कि चीजें टूट रही हैं। मैं मानता हूं कि बड़े शुभ लक्षण हैं, ये बड़े शुभ समाचार हैं। दुख इस बात का है कि गलत चीजें टूट रही हैं। बहुत जरूरी चीजें हैं ि जन्हें तोड़ देना चाहिए। और उन जरूरी चीजों में से पहली चीज यह है कि हमें उस दुनिया को जो महत्वाकांक्षा के आधार पर खड़ी है, बदल देना चाहिए। महत्वाकांक्षा के आधार पर खड़ी हुई दुनिया को तोड़ देना चाहिए और एक गैर महत्वाकांक्षा (छव द(उइपजपवने) समाज का निर्माण करना चाहिए। यह क्यों? यह इसलिए कि महत्वा कांक्षा के आधार पर खड़ा हुआ जगत हिंसा, दुख और पीड़ा का ही जगत हो सकता है। उसमें न तो प्रेम हो सकता है, न आनंद हो सकता है, न शांति हो सकती है।

महत्वाकांक्षा का अर्थ क्या होता है? महत्वाकांक्षा का अर्थ होता है दूसरों से आगे नि कल जाने की दौड़। बचपन से हमें यही सिखाया जाता है, पहली कक्षा से यही सिखा या जाता है कि दूसरे से आगे निकल जाओ, प्रथम आ जाओ। प्रथम आना ही एकमा त्र मूल्य है। जो युवक प्रथम आ जाएगा, जो बच्चा पहले आ जाएगा वह पुरस्कृत होग ा, सम्मानित होगा। जो पीछे छूट जाएंगे वे अपमानित हो जाएंगे। यह दुनिया इतनी उ दास कभी नहीं होती, लेकिन हमें पता नहीं है कि हम कैसी मनौविज्ञानिक महत्वाकां क्षा रख रहे हैं मनुष्य के लिए। एक स्कूल में अगर हजार बच्चे पढ़ते हैं तो आखिर ि कतने बच्चे प्रथम आएंगे? दस बच्चे प्रथम आएंगे और नौ सा नब्बे पीछे रह जाएंगे। दुनिया कौन बनाता है? प्रथम होने वाले दुनिया बनाते हैं या हारे हुए, पीछे रह जाने वाले लोग दुनिया बनाते हैं? दुनिया किनसे बनती है? दुनिया के संगठन कौन हैं दुनि या के संगठन हैं पराजित लोग। हारे हुए लोग, दुखी लोग जो प्रथम नहीं आ सके वे लोग। और जब पहली ही कक्षा से बच्चे को निरंतर पीछे रहना पड़ता है तो उसके ज ीवन में आत्मग्लानि, हीनता, दीनता सब पैदा हो जाता है। ये दीनहीन लोग दुनिया के संगठन हैं। उनकी बड़ी संख्या होगी, ये दुनिया को बनाएंगे, जिनको जीवन के कोई सम्मान नहीं दिया, कोई आदर नहीं दिया।

आप कहेंगे कि कौन इन्हें रोकता था, ये भी प्रथम आ सकते थे। ठीक कहते हैं आप। कोई नहीं रोकता है। ये भी प्रथम आ सकते थे। लेकिन तीस लड़कों में कोई भी प्रथम आए, एक ही लड़का प्रथम आएगा। उनतीस हमेशा पीछे रह जाएंगे। उनतीस दुखी होंगे। एक प्रसन्न होगा। कोई भी एक प्रसन्न हो, यह सवाल नहीं है कि कौन एक प्रस न्न होता है। लेकिन उनतीस दुखी होंगे। उनतीस के दुख पर एक व्यक्ति का सुख निर्भ

र होगा और उनतीस बच्चे दुख लेकर जीवन में प्रविष्ट होंगे। हारे हुए लोग, पराजित लोग। महत्वाकांक्षा ने सारी दुनिया को दीनहीन बना दिया है। एक ऐसा समाज और एक ऐसी शिक्षा और एक ऐसी संस्कृति चाहिए जहां प्रथम आने के पागलपन से आदमी का छुटकारा हो गया हो, नहीं तो दुनिया में युद्ध नहीं रुक सकते हैं, क्रोध नहीं रुक सकता। जब कोई आदमी बहुत क्रोध, दुख और विषाद से भर जाता है तो वह सारी दुनिया से बदल लेता है--इस बात का कि मुझे दुख दिया है उस दुनिया ने, मुझे कोई सम्मान नहीं दिया, मुझे कोई पुरस्कार नहीं दिए, मुझे कोई आदर नहीं दिया, मुझे कोई पदवियां नहीं दीं। वह सारी दुनिया के प्रति क्रुद्ध हो उठता है, क्रोध से भर जाता है। यह क्रोध निकल रहा है सब तरफ से बह बहकर।

क्या ऐसा नहीं हो सकता है कि हम एक ऐसी शिक्षा विकसित करें जो व्यक्ति को प्रतिस्पर्धा में नहीं, आत्म परिष्कार में ले जाती हो। इन दोनों बातों में भेद है। इस सूत्रों को ठीक से समझ लेना जरूरी है। एक स्थिति तो यह है कि मैं दूसरे लोगों से आगे निकलने की कोशिश करूं और दूसरी स्थिति यह है कि मैं रोज अपने आपसे आगे निकलने की कोशिश करूं। मैं जहां कल था, आज उससे आगे बढ़ जाऊं। मेरी तुलना मेरे अतीत से हो, किसी पड़ोसी से नहीं। मैं रोज खुद को पार करूं, खुद को अतिक्रमण करूं। कल सूरज ने मुझ जहां छोड़ा था डूबते वक्त, आज का उगता सूरज मुझे वही न पाए। मैं आगे बढ़ जाऊं। कल रात सूरज विदा हुआ था तब खेतों में जो पौधे लगे थे आज सुबह आप उनको वहीं पाएंगे। वे आगे बढ़ गए हैं, लेकिन किस से आगे बढ़ गए हैं? किसी दूसरे से? नहीं, अपने से आगे बढ़ गए हैं। किसी दूसरे से कोई प्रयोजन नहीं है प्रकृति में। सारी प्रकृति किसी दूसरे से प्रतिस्पर्धा में नहीं है सिवाय मनुष्य को छोड़कर।

एक गुलाब का फूल खिल रहा है एक बगिया में। उसे कोई प्रतिस्पर्धा नहीं है कि चमेली का फूल कैसे खिलता है और कमल का फूल कैसे खिला है। गुलाब का फूल खिल रहा है अपनी खुशी में। उसका पुष्पित होना उसकी अपनी आंतरिक बात है। आदमी भरके फूल गड़बड़ हो गए हैं। वह हमेशा दूसरों की तरफ देख रहे हैं कि दूसरे के खिलने से मैं कितना आगे निकलता हूं और वह कितने पीछे रह जाता है। अपनी खुद की सेल्फ फलावरिंग का कोई खयाल ही नहीं है। इससे एक पागलपन पैदा होता है। वह पागलपन ऐसा है कि अगर मैं किसी बगिया में चला जाऊं और गुलाब से कहूं कि पागल क्या तू गुलाब ही होकर नष्ट हो जाएगा? कमल नहीं होना है? कमल का फूल बहुत शानदार होता है, कमल हो जा तो पहली बात यह है कि गुलाब मेरी बात ही नहीं सुनेगा। वह हवाओं में डोलता रहेगा, मेरी बात उसे सुनाई नहीं पड़ेगी, क्योंकि फूल आदमियों जैसे नासमझ नहीं होते कि किसी ने भी बुलाया और सुनने को आ गए। फूल इतने नासमझ नहीं होते कि सुनने को राजी हो जाए। अव्वल तो फूल सुनेंगे नहीं, लेकिन हो भी सकता है, आदमी के साथ रहते रहते उसकी बीमारियां फूलों को भी लग सकती हैं। बीमारियां संक्रामक होती हैं। बीमारियां छूत की होती हैं। हो स

कता है आदमी की बगिया में लगे लगे फूलों में गड़बड़ी आ गई हो और वह भी उपदे
श सुनने लगे हों तो मेरी बात अगर वह फूल मान लेंगे तो फिर क्या होगा?
उस गुलाब के फूल को अगर मेरी बात पकड़ गई, यह ज्वर पकड़ गया कि मुझे कम
ल का फूल हो जाना है या कमल के फूल से आगे निकल जाना है पागल हो जाएगा
वह गुलाब का पौधा। फिर उसमें फूल पैदा नहीं होंगे। क्योंकि गुलाब से गुलाब ही पैदा
होते हैं, कमल पैदा नहीं हो सकता। यह उसकी आंतरिक विवशता है, वह कुछ और
नहीं हो सकता। गुलाब का फूल गुलाब ही हो सकता है। चमेली चमेली ही हो सकत
ी है, चंपा चंपा ही हो सकती है, घास का फूल घास का फूल ही हो सकता है, कमल
का फूल कमल का फूल ही हो सकता है। लेकिन अगर यह पागलपन चढ़ जाए कि
चंपा चमेली होने की कोशिश करे, गुलाब कमल होने की, तो फिर उस बगिया में फू
ल पैदा होने बंद हो, जाएंगे। गुलाब कमल तो हो ही नहीं सकता है, लेकिन कमल हो
ने की कोशिश में गुलाब भी नहीं हो सकता।
आदमी की बगिया में फूल इसीलिए पैदा होने बंद हो गए हैं। कांटे ही कांटे पैदा होते
हैं; वहां फूल पैदा होते ही हनीं। क्योंकि कोई आदमी स्वयं होने की कोशिश में नहीं है
। हर आदमी कोई और होने की कोशिश में है; किसी और को पार करने की चेष्टा
में लगा हुआ है। शिक्षा हर आदमी को खुद होने का खयाल नहीं देती। हमारी शिक्षा
कहती है, देखो वह आदमी आगे निकल गया है, तुमको भी वैसे हो जान है। देखो व
ह आदमी दिल्ली पहुंच गया है, तुमको भी दिल्ली पहुंच जाना है। देखो वह आदमी प
हुंच जा रहा है आगे, तुम कहां पीछे रहे जाते हो। दौड़ों। इस तरह सब तरफ से मह
त्वाकांक्षा पैदा की जाती है। राजनैतिक रूप से महत्वाकांक्षा पैदा करते हैं कि देखो रा
धाकृष्णन स्कूल में शिक्षक थे वे राष्ट्रपति हो जाओ। तुम भी पागल हो जाओ और शि
क्षक दिवस मनाओ कि बड़ी सम्मान को बात हो गई कि एक शिक्षक राष्ट्रपति हो गय
ा।
मुझे भी एक शिक्षक दिवस पर भूल से बोलने के लिए बुला लिया गया। भूल से कोई
बुला लेता है बोलने के लिए। मैंने उन शिक्षकों को कहा कि राष्ट्रपति हो जाए इसमें ि
शक्षकों का कौन सा सम्मान है? जिस दिन कोई राष्ट्रपति कहे कि मैं स्कूल में आकर
शिक्षक होना चाहता हूं उस दिन शिक्षक दिवस मनाना। उस दिन कहना कि हम धन्य
हुए कि एक राष्ट्रपति ने कहा है कि हम शिक्षक होने को तैयार हो। लेकिन एक शि
क्षक राष्ट्रपति होना चाहे इसमें शिक्षक का क्या सम्मान है? इसमें राजनीतिज्ञ का सम्
मान है, पद का सम्मान है, दिल्ली का सम्मान है, राज्य का सम्मान है। इसमें शिक्षक
का कौन सा सम्मान है?
लेकिन हम कहते हैं देखो यह हुआ जा रहा है तुम भी दौड़ो। राजनैतिक रूप से हम
आदमी को ज्वर से भरते हैं। दौड़ो, आगे दौड़ो। दूसरे को पीछे छोड़ो और आगे बढ़
जाओ। ऐसे ही यह हम धार्मिक रूप से, नैतिक रूप से लोगों को सिखलाते हैं कि गांध
ी बन जाओ, बुद्ध बन जाओ, महावीर बन जाओ। ये झूठी बातें हैं। जहर फैला रहे हैं
आदमी के दिमाग में। कोई आदमी कभी गांधी बन सकता है? कोई आदमी कभी बु

द्ध बन सकता है? और बन सके तो भी बनने की जरूरत कहा है? एक आदमी काफ
ी है अपने जैसा। दूसरे आदमी को वैसे होने की जरूरत नहीं है। एक गांव में अगर ए
क ही जैसे बीस हजार गांधी पैदा हो जाए तो उस गांव की मुसीबत समझ सकते हैं।
उस गांव में इतनी ऊब पैदा हो जाएगी, इतनी घबराहट पैदा हो जाएगी कि लोग आ
त्महत्या कर लेंगे। जीना मुश्किल हो जाएगा। एक गांधी बहुत प्यारे हैं। एक बुद्ध बहु
त अदभुत हैं। एक राम बहुत शानदार हैं। एक कृष्ण बमुकाबला हैं, कोई मुकाबला न
हीं है उनका। बड़े खूबी के लोग हैं, लेकिन अगर एक ही गांव में एक ही जैसे राम ह
ी राम धनुषबाण लिए हुए खड़े हों तो हो गई कठिनाई। रामलीला करनी हो तक ठी
क है लेकिन अगर असली मामला हो तो बहुत गड़बड़ है।
कोई आदमी दोबारा दोहराए जाने की जरूरत नहीं है। पुनरावृत्ति (तमचमजपजपवद)
की कोई जरूरत नहीं है। हर आदमी खुद होने को पैदा होता है, कोई और होने को
पैदा हनीं होता। लेकिन अब तक हम शिक्षक को इस बात के लिए राजी नहीं कर प
ाए कि वे बच्चों से कह सकें कि तुम कुछ और होने की कोशिश मत करना, तुम खुद
हो जाना।
जीवन में जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात है वह है स्वयं होने की क्षमता को उपलब्ध हो
जाना। और जो आदमी दूसरे जैसे होने की कोशिश करेगा उस आदमी का पागल हो
ना सुनिश्चित है। क्योंकि दूसरे जैसा वह हो नहीं सकता। इसलिए दुनिया में जितनी य
ह शिक्षा बढ़ती है, आदर्श बढ़ते हैं उतना ही पागलपन बढ़ता है। इसमें किसी और का
कसूर नहीं। शिक्षा बुनियादी रूप से गलत है। जितना आदमी शिक्षित होता है उतना
दूसरे होने की दौड़ में लग जाता है कि मैं कोई और हो जाऊं, कोई बन जाऊं, मैं
कुछ और हो जाऊं। खुद से, स्वयं से उसकी कोई तृप्ति नहीं होती। वह कोई और हो
ना चाहता है। जब भी कोई आदमी कोई और होना चाहता है तब आदमी अपने होने
से च्युत हो जाता है। वह मार्ग से भटक जाता है, वह कुछ और होने की दौड़ में जो
हो सकता था वह भी हनीं हो पाता है और तब जीवन में दुख और पीड़ा पैदा होती
है।
अगर कोई पूछें कि पागलपन की क्या परिभाषा है, विक्षिप्त होने का क्या मतलब है
तो मेरी दृष्टि में पागल होने की एक परिभाषा है जो आदमी स्वयं से भिन्न हो जाता
है वह आदमी पागल है। और जो आदमी स्वयं हो जाता है वह आदमी स्वस्थ है। स्वयं
हो जाना स्वस्थ होना है। बस और कोई स्वास्थ्य का मतलब नहीं होता है। हिंदी का
शब्द है स्वास्थ्य, वह तो शब्द ही बहुत अदभुत है। स्वास्थ्य का मतलब है स्वयं में स्थि
त, जो स्वयं में खड़ा हो गया वह स्वस्थ है। और वह अस्वस्थ है जो स्वयं से भटक ग
या है, यहां-वहां चला गया है। हम सारे लोग स्वयं से भटकाए जा रहे हैं। हम स्वयं
में स्थित होने के लिए दीक्षित नहीं किए जा रहे हैं। इससे एक विक्षिप्तता पैदा हो रह
ी है, पागलपन पैदा हो रहा है।
नेहरू जब तक जिंदा थे, हिंदुस्तान में दस पच्चीस लोग थे जिनको यह खयाल पैदा हो
गया था कि हम नेहरू हैं। मेरे छोटे से गांव में एक आदमी था। उसको यह वहम पै

दा हो गया था कि वे जवाहरलाल नेहरू हैं। नेहरू एक पागलों की जुल देखने गए थे। एक पागल वहां स्वस्थ हो गया था, ऐसा मुश्किल से ही होता है। स्वस्थ तो अक्सर पागल होते हैं मगर पागल कम ही स्वस्थ होते देखे जाते हैं। लेकिन ऐसी दुर्घटना वहां घट गई थी, ऐक्सीडेंट हो गया था। एक पागल ठीक हो गया था और नेहरू उसको देखने गए थे, पागलखाने में। पागलखाने के अधिकारियों ने सोचा कि नेहरू के हाथ से ही उसको पागलखाने से छुटकारा और मुक्ति दिलवाई जाए। नेहरू भी बहुत खुश थे कि एक आदमी ठीक हो गया है। उससे मिलकर नेहरू ने पूछा कि क्या तुम ठीक हो गए हो? तो उसने कहा, मैं बिलकुल ठीक हो गया हूं। तीन साल पहले मैं बिलकुल पागल था। लेकिन आप कौन हैं महाशय? नेहरू ने कहा, मुझे नहीं जानते? मैं जवाहर लाल नेहरू हूं। वह आदमी यह सुन कर खूब हंसने लगा। उसने कहा : तीन साल आप भी यहां रह जाए तो ठीक हो जाएंगे। तीन साल आप भी यहां रह जाए तो ठीक हो जाएंगे। तीन साल पहले मुझे भी यही खयाल पैदा हो गया था कि मैं जवाहरलाल ने हरू हूं। तीन साल में मैं बिलकुल ठीक हो गया हूं। तीन साल आप भी यहां रह जाएं।

जब भी किसी आदमी को खयाल पैदा हो जाता है कि मैं कोई और हूं तो समझ लेना कि वह पागल हो गया है। और जब भी कोई आदमी इस कोशिश में लग जाता है ि क मैं कोई और हो जाऊं तो समझ लेना कि पागलपन की यात्रा शुरू हो गई है। इस शिक्षा ने मैनकाइंड को मैडकाइंड में बदल दिया है। आदमियत एक बड़ा पागलखाना हो गई है। सारी जमीन पर पागलों का बड़ा समूह पैदा हो गया है फिर अगर ये पाग ल आग लगा दें, मकान तोड़ दें तो नाराज मत होइए। इनको हमने पागल बनाया है। हमने इन्हें इनकी आत्मस्थिति से च्युत किया है। यह जो हो सकते थे वह होने के लि ए हमने इन्हें तैयार नहीं किया और जो नहीं हो सकते थे उसकी तरफ हमने इनको दौड़ाया है।

आदमी का मस्तिष्क इतने सूक्ष्म तंतुओं से बना है, आदमी का मन इतना नाजुक है ि क उसमें जरा भी गड़बड़ करें तो सब नुकसान हो जाता है। आदमी का मन बहुत को मल है। आदमी की छोटी सी खोपड़ी में करोड़ों रेशे हैं। अगर आदमी की खोपड़ी के रेशों को निकालकर हम कतार में फैला दें तो पूरी पृथ्वी का चक्कर लगा लेंगे। एक आदमी की खोपड़ी में इतने रेशे हैं। इतने बारीक सेल, इतने बारीक स्नायु और यह छोटा सा मस्तिष्क उन्हीं करोड़ों स्नायुओं से मिलकर बना है। सारी मशीन बहुत डेलि केट है और इसमें जरा भी गड़बड़ी हो जाती है।

आश्चर्य है यह कि अब तक सारे मनुष्य पागल क्यों नहीं हो गए। आश्चर्य यह नहीं है कि कुछ लोग पागल हो जाए। आदमी के साथ जो किया जा रहा है, आदमी के सा थ जो अनाचार हो रहा है, आदमी के साथ जो व्यभिचार हो रहा है, जो बलात्कार ह ो रहा है, आदमी के मन के साथ जो किया जा रहा है उससे सारे लोग पागल हो जा ए तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। क्योंकि आदमी को आत्म विज्ञान में दीक्षित नह

ीं किया जा रहा है और पराए जैसे होने की दौड़ में, दूसरे को पार करने के पागलपन की दिशा में धक्के दिए जा रहे हैं। इन सारे धक्कों से यह उपद्रव पैदा हो गया है। युवकों को शिक्षा देने से कुछ भी नहीं होगा। शिक्षा को आमूल ही बदल देना जरूरी है। एक पूरी तरह क्रांतिकारी कदम उठाना जरूरी है कि हम मनुष्य की महत्वाकांक्षा को ही हनीं बल्कि मनुष्य के भीतर जो छिपी हुई संभावनाएं हैं उनके परिष्कार को ध्यान में रखें। मनुष्य कहां पहुंचे यह सवाल नहीं है। मनुष्य जो है वह कैसे प्रकट हो जाए यह सवाल है। मनुष्य किसी मंजिल को छू ले यह सवाल नहीं है। मनुष्य के भीतर कुछ संभावना रूप में (ढवजमदजपंससल) छिपा हुआ है, जैसे वीज के भीतर पौधा छिपा हुआ होता है। बीज को हम बो देते हैं बगीचे में। माली बीज में से पौधे को खींच खींचकर निकालता नहीं है और अगर कोई माली खींच खींच कर पौधे को निकाल लेगा तो समझ लेना कि उस पौधे की क्या हालत होने वाली है। पौधा निकलता है। माली तो सिर्फ अवसर जुटा देता है। पानी डाल देता है। बीज डाल देता है, खाद डाल देता है, बागुड़ लगा देता है और फिर चुपचाप प्रतीक्षा करता है कि पौधा निकले। पौधा वह कभी निकालता नहीं है। लेकिन हम आदमी में से पौधे निकाल रहे हैं। उनको हम विश्वविद्यालय कहते हैं, विद्यालय कहते हैं, जिनमें आदमी के बीच में से हम जवर्दस्ती पौधा खींच रहे हैं। कोई पौधा बाप की मर्जी से खींचा जा रहा है। कोई पौधा मां की मर्जी से खींचा जा रहा है, कोई गुरु की मर्जी से खींचा जा रहा है। इनको इंजीनियर बनाओ, इनको कवि बनाओ, इनको डाक्टर बनाओ। कोई यह कुछ ही नहीं है कि इसके भीतर छिपा क्या है? यह क्या होने को पैदा हुआ है?

मैं एक घर में ठहरा हुआ था। एक लड़के ने कहा, मुझसे बचाइए । मैं पागल हो जाऊंगा। मैंने कहा, क्या मामला है। उसने कहा, मेरी मां कहती है इंजीनियर बनो। मेरे बाप कहते हैं डाक्टर बनो। और दोनों इस तरह खींच रहे हैं मुझे, कि न मैं इंजीनियर बन पाऊंगा, न मैं डाक्टर बन पाऊंगा और मैं जो बन जाऊंगा उसका जिम्मा किसी पर भी नहीं होगा। क्योंकि वे दोनों मुझे दो बनाना चाहते हैं। बच्चे खींचे जा रहे हैं, जबरदस्ती खींचे जा रहे हैं। बच्चों में कोई वृद्धि, कोई विकास नहीं होता। बच्चे को जबरदस्ती तनाव देकर हम उनमें से कुछ पैदा करने की कोशिश कर रहे हैं। इसके पहले कि उनके भीतर कुछ पैदा हो, हम जबरदस्ती खींच तानकर उन्हें तैयार करते हैं। फिर अगर वे कुरूप हो जाते हैं, उनका जीवन एक कुरूपता बन जाता है, उनका जीवन सौंदर्य खो देता है और आनंद खो देता है तो हम पीड़ित और परेशान होते हैं और पूछते हैं कलियुग आ गया है क्या? लोग खराब हो गए हैं क्या? फिर हम अपने पुरानी किताबों में खोजते हैं जिनमें लिखा हुआ है कि हां, ऐसा वक्त आएगा जब लोग खराब हो जाएंगे। तब हम निश्चित हो जाते हैं। तो ठीक है, भविष्य वाणी ठीक हो गई है। ऋषि महात्मा बिलकुल ठीक ही कहते थे कि जमाना खराब हो जाएगा। यह खराब का जमाना आ गया है। नहीं, यह खयाल जमाना लाया गया है, यह आया नहीं है। और इसे हम रोज ला रहे हैं। असल में आसमान से कुछ भी नहीं टपकता है, हम जो लाते हैं वह आता है। हम यह स्थिति लाए हैं और इस सारी स्थिति के पीछे म

नुष्य के सहज विकास का कोई ध्यान नहीं है। खींचने का ध्यान है। खिंचो और आदमी को कुछ बनाओ। इसको तोड़ डालो।

हम इनकार कर दें उस दिशा से जो आदमी के साथ जबरदस्ती कर रही है और कर दें कि चाहे हम अशिक्षित रह जाएंगे वह बेहतर है, लेकिन हम जबरदस्ती आत्मा के खींचे जाने को बरदाश्त नहीं करेंगे। अशिक्षित होने से कुछ भी नहीं बिगड़ता है। हजारों साल तक आदमी अशिक्षित रहा, क्या बिगड़ गया? वैसे कई लिहाज से फायदा था। अशिक्षित आदमी हमसे ज्यादा सौंदर्य में जीया हमसे ज्यादा शांति में जीया, हमसे ज्यादा आनंद में जीया। अशिक्षित आदमी हमसे ज्यादा स्वस्थ जीया तो शिक्षित होने से क्या हो जाने वाला है? लेकिन अगर ठीक से शिक्षा मिले तो बहुत कुछ कुछ हो सकता है। अगर तीन चुनाव हों आदमी के सामने—गलत शिक्षा, ठीक शिक्षा और अशिक्षा—तो मैं कहता हूं अगर गलत शिक्षा और अशिक्षा में से चुनना हो तो अशिक्षा चुननी चाहिए। अशिक्षित रह जाना बुरा नहीं है लेकिन अगर ठीक शिक्षा हो सके तो जरूर बड़ा सौभाग्य है। और शिक्षा ठीक हो सकती है।

पहली बात शिक्षा को महत्वाकांक्षा और प्रतिस्पर्धा के केंद्र से हटा देना चाहिए। उसकी जगह आत्मपरिष्कार और आत्म उन्नति और स्वयं के सहज विकास पर बल देना चाहिए और इसकी फिकर छोड़ देनी चाहिए कि हर आदमी इंजीनियर बने, हर आदमी डाक्टर बने। हो सकता है कोई आदमी अच्छा चमार बनने को पैदा हुआ हो। और अगर अच्छा चमार डाक्टर बन गया तो बड़े खतरे हैं। वह आदमी के साथ आपरेशन तो करेगा लेकिन वैसे जैसे जूते के साथ करता है। और हो सकता था वह अच्छा बढ़ई बनता। जरूरत है बढ़ई की भी, चमार की भी। लेकिन हमने जैसी गलत समाज व्यवस्था बनाई है उसमें हम डाक्टर को बहुत ऊंचा पद देते हैं। बढ़ई को कोई पद नहीं देते। तो बढ़ई को भी पागलपन शुरू होता है कि डाक्टर बनो। लेकिन बढ़ई की अपनी जरूरत है। उसकी जरूरत किसी डाक्टर से कम नहीं है। और चमार की अपनी जरूरत है। उसकी जरूरत किसी प्राइम मिनिस्टर से कम नहीं है। और शिक्षक की अपनी जरूरत है और वह किसी राष्ट्रपति से कम नहीं है। जिंदगी बहुत लोगों का एक सम्मिलित चित्र है। जिंदगी सम्यक संगीत है।

लिंकन जब प्रेसिडेंट हुआ अमरीका का, यह तो आपको पता हो गा कि उसका बाप एक चमार था। जूते सीता था। लिंकन प्रेसिडेंट हो गया तो कई लोगों को बहुत अखरा कि चमार का लड़का प्रेसिडेंट हो गया। पहले दिन जब सीनेट में लिंकन बोलने खड़ा हुआ तो एक आदमी ने खड़े होकर यह याद दिला देना जरूरी समझा कि इस बात को कोई भूल न जाए कि वे चमार के बेटे हैं। एक आदमी ने खड़े होकर कहा कि महाशय लिंकन, यह मत भूल जाना कि आप एक चमार के लड़के हैं। तालियां बज गई होंगी संसद में, लोग बहुत खुश हुए हों कि ठीक वक्त पर याद दिला दिया। लिंकन ने खड़े होकर कहा, मेरे पिता की याद दिला कर तुमने बहुत अच्छा किया। मैं बड़ी खुशी से भर गया हूं क्योंकि मैं यह भी तुम्हें कह देना चाहता हूं कि मेरे पिता जितने अच्छे चमार थे उतना अच्छा राष्ट्रपति मैं नहीं हो सकूंगा। और जिन सज्जन ने यह कहा

था, लिंकन ने उनसे कहा कि महाशय, जहां तक मुझे याद आता है आपके पिता भी मेरे पिता से ही जूते बनवाते थे और जहां तक मेरा खयाल है, आपके पिता ने कभी भी शिकायत नहीं की है, लेकिन आपको कैसे याद आ गई बात। मेरे पिता के जूतों से कोई शिकायत है आपको? मेरे पिता के चमार होने से कोई शिकायत है आपको? यह याद दिलाने का खयाल कैसे आ गया? मैं धन्यभागी हूं कि मेरे पिता एक अदभु त चमार थे। वे कुशल कारीगर थे।

यह दृष्टि जो है जीवन को देनी जरूरी है। महत्वाकांक्षा की दृष्टि ने पद पैदा कर दिए । जीवन में पद पैदा कर दिए हैं कि कौन ऊंचा और कौन नीचा। यह महत्वाकांक्षा क ी शिक्षा का परिणाम (ईल-चतवकनबज) है, कि फलां आदमी चूंकि ज्यादा शिक्षा लेत ा है इसलिए ज्यादा ऊंचा है, कम शिक्षा लेता है इसलिए कम ऊंचा है। जो अनस्किल्ड है वह बिलकुल किसी स्थान पर ही नहीं है। जीवन बहुत चीजों का जोड़ है। जीवन बहुत चीजों का संगीत है। एक ऐसी दुनिया बनानी है जहां सब जरूरी है, सब महत्व पूर्ण है, सब गौरवान्वित है इस दुनिया को मिटा देना है, जहां थोड़े से लोगों के गौरव के लिए सारे लोगों का गौरव छीन लिया जाता है।

यह वैसी दुनिया है जैसे कोई गांव हो और उस गांव में लोग यह तय कर लें कि दस पांच आदमियों की आंखें बचा लो। बाकी सबकी आंखें फोड़ दो। क्योंकि बाकी कंधे लोगों के बीच में आंख वाला होना बड़ा आनंदपूर्ण होगा। सब अंधे होंगे। हमारे पास आंखें होंगी तो बड़ा अच्छा होगा। और दस लोग मिलकर कुछ भी कर सकते हैं। क्योंि क दस लोग जहां मिल जाते हैं वहीं राजनीति शुरू हो जाती है। दस गुंडे मिलकर कु छ भी कर सकते हैं और यही आज तक दुनिया का दुर्भाग्य रहा है। अच्छे आदमी मि लकर यह तक कर लें कि नगर के सारे लोगों की आंखें फोड़ दो ताकि कुछ लोगों क ो आंख वाले होने का बड़ा आनंद उपलब्ध हो। जरूर तुमको आनंद ज्यादा उपलब्ध हो गा। क्योंकि अंधों की बस्ती में आंख वाला होना बड़ा आनंद पूर्ण, बड़े अहंकार की तृप्ि त करता है। कुछ लोगों ने यही किया हुआ है कि कुछ लोगों को पद दे दो। सारे लो गों के पद की सारी व्यवस्थाएं छीन लो ताकि पद का होना बहुत आनंदपूर्ण हो जाता। इन दुष्टों ने, इन हिंसक लोगों ने एक पृथ्वी बना दी है जो नर्क हो गई है। अगर तो. डना है तो इस सबको तोड़ देना जरूरी है। और एक समाज, एक जीवन, एक संस्कृि त निर्मित करनी है जहां हर आदमी को गौरवन्वित होने का मौका हो। जहां हर आद मी को स्वयं होने का मौका और अवसर हो। जहां पर आदमी जो भी होना चाहे सम्म ानित और गौरव से हो सके। जहां गुलाब के फूल भी आदृत हों और घास के फूल भी सम्मानित हों। क्योंकि घास और गुलाब के फूल में परमात्मा का कोई फासला, कोई भेद नहीं है।

जब आकाश में सूरज निकलता है तो सूरज गुलाब के फूल देखकर यह नहीं कहता है कि मैं मुझे ज्यादा रोशनी दूंगा। घास के फूल से यह नहीं कहता कि घास के फूल, ह ट, बीच में शूद्र तू कहां यहां आ गया, तुझे रोशनी नहीं दी जा सकती। उस घास के फूल को भी सूरज उतनी ही रोशनी देता है जितनी गुलाब के फूल को। जब आकाश

में बादल घिरते हैं तो गुलाब के फूल पर ही पानी नहीं गिरता है, घास के फूल पर भी पानी गिरता है। और घास के फूल पर गिरा हुआ पानी दुख अनुभव नहीं करता है कि कहां मेरा दुर्भाग्य कि घास के फूल पर गिर रहा हूं। और घास का फूल जब ि खलता है, छोटा सा फूल जब हवाओं में नाचता है तो उसकी खुशी किसी गुलाब के फूल से कम नहीं होती। असल में सवाल घास के फूल का और गुलाब के फूल का न हीं है। सवाल पूरी तरह खिल जाने का है। चाहे गुलाब का फूल पूरी तरह खिल जाए , चाहे घास का फूल पूरी तरह खिल जाए। जो पूरी तरह खिल जाता है वह आनंद को उपलब्ध हो जाता है, वह परमात्मा को उपलब्ध हो जाता है।

महायुद्ध या महाक्रांति

मनुष्य की आज तक की सारी ताकत जीने में नहीं, मरने और मारने में लगी है। पि छले महायुद्ध में पांच करोड़ की हत्या हुई । पहले महायुद्ध में कोई साढ़े तीन करोड़ लोग मारे गए। थोड़े से ही बरसों में साढ़े आठ करोड़ लोग हमने मारे हैं। लेकिन शाय द मनुष्य को इससे कोई सोच विचार पैदा नहीं हुआ। हर युद्ध के बाद और नये युद्ध के लिए हमने तैयारियां की हैं। इससे यह साफ है कि कोई भी युद्ध हमें यह दिखाने में समर्थ नहीं हो पाया है कि युद्ध व्यर्थ हैं। पांच हजार वर्षों में सारी जमीन पर पंद्रह हजार युद्ध लड़े गए हैं। पांच हजार वर्षों में पंद्रह हजार युद्ध बहुत बड़ी संख्या है या नी तीन प्रति वर्ष हम करीब-करीब लड़ते ही रहे हैं। कोई अगर पांच हजार वर्षों का हिसाब लगाए तो मुश्किल से तीन सौ वर्ष ऐसे हैं जब लड़ाई नहीं हुई। यह भी इकट्ठे नहीं, एक-एक, दो-दो दिन जोड़कर। तीन सौ वर्ष छोड़कर हम पूरे वक्त लड़ते रहे हैं । या तो मनुष्य का मस्तिष्क विकृत है या युद्ध हमारा बहुत बड़ा आनंद है अन्यथा वि नाश के लिए ऐसी विकृत है या युद्ध हमारा बहुत बड़ा आनंद है अन्यथा विनाश के ि लए ऐसी आतुरता और मृत्यु के लिए ऐसी गहरी आकांक्षा को समझना कठिन है। ज रूर कुछ गड़बड़ हो गई है। लेकिन आज कुछ गलत हो गया ऐसा समझने का कोई क ारण नहीं है। सदा से कुछ बड़बड़ है। कोई यह कहता हो कि पहले आदमी बहुत अच छा था तो भूल भरी बातें कहता है।

आदमी सदा से ऐसा है। ताकत इतनी उसके हाथ में नहीं थी इसलिए इतने विकराल रूप में वह प्रकट नहीं हो सका था। आज उसे मौका मिला है। विज्ञान ने शक्ति दे दी है हाथ में। अब पूर्ण विनाश ;वजंस कमेजतनबजपवद) हो सकता है, अब हम पूरी तरह विनाश कर सकते हैं। इरादे तो हमारे बहुत दिन से थे कि हम पूरी तरह विना श करें लेकिन थोड़े बहुत आदमियों को मार कर रुक जाते थे। हमारे साधन कमजोर थे। हिंसा करने का मन तो सदा से था लेकिन हिंसा करने की ताकत सीमित थी। आज तक हमारी असीमित है। आज हम सब कुछ कर सकते हैं। कोई पचास हजार उदजन बम तैयार है और यह आंकड़ा पुराना है—१९६० का। इस बीच आदमी ने बहु त विकास किया है। गंगा में बहुत पानी बह गया है। उदजन बमों की संख्या और बड़ ी हो गयी होगी। वैसे पचास हजार उदजन बम जरूरत से ज्यादा हैं इस पूरी पृथ्वी को

नष्ट करने के लिए, बहुत ज्यादा हैं। अगर इस तरह की सात जमीनें नष्ट करनी हों तो भी काफी हैं। तीन अरब आदमियों को मारने के लिए पचास हजार उदजन बम बहुत ज्यादा हैं। बीस अरब आदमी मारने हों तो भी उनसे मारे जा सकते हैं या यह भी हो सकता है कि एक आदमी को सात-सात दफा मारने का मन हो तो मारा जा सके। हमने अंतिम तैयारी पूर कर ली। कोई धोखा धड़ी न हो जाए, कोई भूल-चूक न हो जाए, एकाध दफा मारें और आदमी न मर पाए तो ऐसे व्यवस्था कर ली गयी है कि एक बार, दो बार, सात बार मारा जाए ताकि कोई भी नहीं बच पाए। वैसे अ ादमी को दो बार नहीं मारना पड़ता। लेकिन फिर भी समय और वक्त को खयाल में रखकर हमने इतना इंतजाम किया है कि हम हर आदमी को सात बार मार सकते हैं।

किसलिए यह तैयारी है? किसलिए यह आयोजन है? जरूर आदमी के मन में कोई पा गलपन है, कोई विक्षिप्तता (टदेंदपजल) है। असल में आदमी विक्षिप्त न हो तो मिटा ने की आकांक्षा पैदा नहीं होती। पागल का मन तोड़ने का होता है, स्वस्थ मन निर्मित करना चाहता है, सृजन करना चाहता है, कुछ बनाना चाहता है, जीवन को विकसि त करना चाहता है। पागल का मन तोड़ना चाहता है, मिटाना चाहता है। क्यों? पाग ल होता है भीतर दुखी। अपने दुख का बदला वह सबसे लेना चाहता है। भीतर आद मी दुखी होता है तो वह दूसरे को दुखी करना चाहता है। वह दुख में हैं तो वह किस ी को भी सुख में देखने में असमर्थ है। वह दुख में है, तो वह जो भी करेगा उससे पि रणाम में दूसरे को दुख मिलेगा क्योंकि जो मेरे पास है, वही मैं दे सकता हूं। जो मेरे पास नहीं है उसे मैं नहीं दे सकता। चाहे मैं कहूं कि मैं सेवक हूं, मैं समाज का सुधा रक हूं लेकिन अगर मैं भीतर दुखी हूं तो मेरी सेवा आपके गले में बोझ हो जाएगी अ ौर अगर मैं दुखी हूं तो मेरा सुधारा खतरनाक सिद्ध होगा। चाहे मैं यह कहूं मैं विश्व शांति के लिए कोशिश करता हूं लेकिन अगर मैं दुखी हूं तो मेरी शांति की सारी क ोशिश युद्ध लाएगी।

सारे राजनीतिज्ञ मिलकर दुनिया में युद्ध लाते हैं लेकिन कहते हैं हम शांति के लिए लड़ रहे हैं। आज तक जमीन पर कोई राजनीतिज्ञ ऐसा नहीं हुआ जिनसे यह कहा कि हम युद्ध के लिए युद्ध करते हैं। सभी राजनीतिज्ञ यह कहते हैं कि शांति के लिए यु द्ध करते हैं। सभी यह कहते हैं कि आदमी अच्छा हो सके, जीवन सुखी हो सके इसि लए हम लड़ते हैं। असल में जो भीतर दुखी है, वह जो भी करेगा उसका परिणाम शु भ और मंगलदायी नहीं हो सकता। है। हम सब दुखी हैं और हम सब पीड़ित हैं। दुखी आदमी एक ही सुख जानता है—दूसरे को दुख देने का सुख, और कोई सुख नहीं जा नता। हम जिन सुखों को सोचते हैं कि इनसे तो किसी के दुख का कोई संबंध नहीं, वे भी किसी के दुख पर खड़े होते हैं।

मेरे एक मित्र हैं। एक गांव में उन्होंने मकान बनाया है। उन गांव में सबसे बड़ा मका न उन्हीं का था। वे बड़े सुखी थे अपने मकान को लेकर। फिर अभी कोई एक और अ ादमी ने आकर उनके पड़ोस में ही और बड़ा मकान बना दिया और वे दुखी हो गए।

उनका मकान उतना का उतना है। मैं इस बार उनके घर में मेहमान था तो वे दुखी थे और कह रहे थे कि मुझे बड़ा मकान बनाना अब जरूरी है। मैंने कहा, आपका मकान उतना का उतना है, आप अप्रसन्न क्या हैं? आपके मकान को तो पड़ोसी की छाया भी नहीं है? लेकिन पड़ोस में एक बड़ा मकान हो गया तो वह दुखी हो गए। तो मैंने उनसे कहा कि अब समझ लें कि जब आप सुखी थे तो आप अपने मकान के कारण सुखी नहीं थे, पास में जो झोपड़े हैं, उनके कारण सुखी रहे हैं।

वह जो झोपड़े वाले को हमने दुख दिए हैं, बड़ा मकान बनाकर, वह है हमारा सुख। बड़ा मकान हमें कोई सुख नहीं दे रहा है क्योंकि उससे बड़ा मकान खड़ा हो जाता है हम सुखी हो जाते हैं। एक छोटा सा बच्चा भी अपनी कक्षा में प्रथम आ जाता है तो कोई यह न सोचे कि उसे प्रथम आने में सुख मिला है। तीस लोगों को पीछे छोड़ देने का जो दुख दिया है, उसका सुख आता है और कोई सुख नहीं। अगर वह अकेला हो अपनी कक्षा में तो पहला नंबर पास होगा लेकिन वह सुखी नहीं होगा लेकिन तीस बच्चों को जब वह पीछे छोड़ देता है तो सुखी हो जाता है।

हमारा सारा जीवन, चूंकि हम दुखी हैं इसलिए ईर्ष्या के सिवाय और हम कोई सुख नहीं जानते हैं। और अगर सारी जमीन पर सारे लोग दूसरे को दुखी करने में ही सुख जानते हों तो यह जमीन अगर नर्क हो जाए तो इसमें आश्चर्य क्या है। यह जमीन नर्क हो गयी है। सब कुछ है हमारे पास कि हम स्वर्ग बना सकते थे। लेकिन आदमी हमारा रुग्ण है इसलिए हमने नर्क बना लिया है। आज जितना हमारे पास है, मनुष्य के पास कभी नहीं था। आज जितनी शक्ति और संपदा हमारे पास है, आदमी के पास कभी भी नहीं थी लेकिन आदमी है रुग्ण इसलिए जो कुछ हमारे पास है वही हमारा शत्रु सिद्ध हो रहा है। और यह संभावना है कि हो सकता है दस पांच वर्षों से ज्यादा हमारे जीवन की उम्र भी न हो। एक भी राजनीतिज्ञ का दिमाग खराब हो जाए तो सारी दुनिया के नष्ट होने के करीब हम खड़े हैं। और राजनीतिज्ञ के दिमाग खराब होने में अड़चन नहीं है क्योंकि जिसका दिमाग खराब नहीं होता है वह कभी राजनीति में जाता ही नहीं। किसी भी एक का दिमाग खराब हो जाए तो आज उस एक आदमी के हाथ में इतना खतरा है कि यह सारी दुनिया मनुष्य जाति को डूबा दे। मनुष्य जाति को ही नहीं, सारे कीड़े मकौड़ो को, पशु पक्षियों को, पौधा को, सबको नष्ट कर दे।

हमारे पास जो ताकत है, आप उसकी कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। उदजन बमों के विस्फोट से इतनी गर्मी पैदा होगी जितनी सूरज पर है। सूरज जमीन पर उतर आए तो क्या होगा? सौ डिग्री पर पानी उबलता है और आपको उसमें डाल दें तो कैसा जी होगा? लेकिन सौ डिग्री कोई गर्मी है? १५०० डिग्री गर्मी पर लोहा पिघलकर पानी हो जाता है। आपको १५०० डिग्री गर्मी में डाल दिया जाए आप बचेंगे? २५०० डिग्री पर लोहा भी भाप बनकर उड़ने लगता है लेकिन २५०० डिग्री भी कोई गर्मी नहीं है। उदजन बम के विस्फोट से जो गर्मी पैदा होती है, वह होती है, दस करोड़ डिग्री। उस दस करोड़ डिग्री की गर्मी में क्या बचेगा? जीवन के बचने की कोई भी संभावन

ा नहीं है। किसी प्रकार का जीवन नहीं बचेगा। यह हमारे हाथ में है और चित्त हमार
ा दुखी, बेचैन और परेशान है और हम जो भी करते हैं उससे यह बेचैनी कम नहीं ह
ोती। यह बढ़ती चली जा रही है। हम जो भी कर रहे हैं उससे हमारा दुख भी कम
नहीं होता है, वह भी बढ़ता चला जा रहा है। शायद हमें यह दिखायी ही नहीं पड़ता
है कि दुख के पीछे क्या है? शायद हमें यह भी नहीं दिखायी पड़ता है कि कौन से
मूल कारण है जो हमें इस पीड़ा में दौड़ाए चले जा रहे हैं। शायद हमें खयाल में भी
न हो कि इस सबके पीछे किन बातों का हाथ है।

और अगर वे बातें दिखायी न पड़े तो हम जो भी करेंगे, हम चाहे सेवा करें, चाहे स्
कूल खोलें, चाहे मरीजों के लिए अस्पताल खोलें, सब बेकार हैं, क्योंकि दूसरी तरफ
हम जो कर रहे हैं, उससे हमारे अस्पताल रखे रह जाएंगे, हमारी सेवाएं रखी रह जा
एंगी। हिरोशिमा में जिस दिन एटम गिरा, एक छोटा सा बच्चा अपने स्कूल का बस्ता
लेकर पढ़ने के लिए घर की सीढ़ियां चढ़ रहा था। होम वर्क करना होगा उसे और ए
टम बम गिर गया। वह वहीं सूख कर दीवाल में चिपक गया। अपने बस्ते और किताब
ों के साथ राख हो गया। मुझे किसी मित्र ने तस्वीर भेजी उसकी। हमारे बच्चे जिनके
लिए हम स्कूल खड़े कर रहे हैं, हमारे बीमार जिनके लिए हम अस्पताल बना रहे हैं,
हमारे करीब जिनके लिए हम गरीबी दूर करने की कोशिश में लगे हुए हैं, हमारे खे
त जिनकी हम उत्पादकता बढ़ा रहे हैं, हमारी फैक्टरियां, जिनमें हम आदमियों के लि
ए सामान बना रहे हैं, सब बेकार हैं क्योंकि दूसरी तरफ आदमी तैयारी कर रहा है ि
क इन सबको वह खाक कर दे, राख कर दे, और ये दोनों काम हम कर रहे हैं। बड़े
स्वविरोध (एमसि बवदजतंकपबजपवद) में हम हैं। एक आदमी घर में बगिया भी ल
गा रहा है और दूसरी तरफ से आगे भी लगा रहा हो और यह भी खयाल करता हो
कि बगिया को सींचूं और फूल आएंगे और एक तरफ से आग भी लगा रहा हो उसी
मकान में तो उस आदमी को हम पागल नहीं तो और क्या कहेंगे? उससे कहेंगे कि ब
गिया में बेकार मेहनत कर रहे हो जब कि दूसरी तरफ से आग भी लगाए जा रहे हो
।

लेकिन हम सारे लोग भी यही कर रहे हैं और हमको दिखायी नहीं पड़ता है और हम
को दिखायी भी नहीं पड़ेगा क्योंकि हमने कुछ ऐसी जड़ताएं पाल ली हैं अपने मन में
कि दिखायी नहीं पड़ कसता। ये इतने झंडे लगे हुए हैं। हमारा झंडा सबसे ऊपर है। य
ह पागलपन का लक्षण है, यह युद्ध का कारण है। हमने अभी प्रार्थना की है कि हम
अपने झंडे को सब राष्ट्रों में ऊपर रखेंगे। सब राष्ट्र यही प्रार्थनाएं कर रहे होंगे। फिर
क्या होगा अगर हम अपने झंडे को ऊंचा रखना चाहते हैं और दूसरा भी अपने झंडे
को ऊंचा रखना चाहता है और तीसरा भी? यह हमारा अहंकार नहीं तो और क्या है
कि हमारा झंडा ऊंचा रहे। व्यक्ति का अहंकार होता है, कौन का अहंकार होता है,
राष्ट्र का अहंकार होता है कि मेरा राष्ट्र ऊंचा रहे। क्यों रहे आपका राष्ट्र का अहंकार
होता है कि मेरा राष्ट्र ऊंचा रहे। क्यों रहे आपका और दुनिया का जिस दिन राजनी
तिज्ञों से छुटकारा हो जाएगा उस दिन वहां कोई राष्ट्र भी नहीं होगा। राजनीतिज्ञ बड़

ी बीमारी है, उसी की बाई प्रोडक्ट राष्ट्र है, वह उसी से पैदा हुई बीमारी है। जब ए
क राष्ट्र कहेगा कि मैं हूं ऊपर, और दूसरा राष्ट्र कहेगा मैं हूं ऊपर, मैं बड़ा हूं, मैं ज
गत का गुरु हूं और यही जमीन है जहां भगवान जन्म लेते हैं और यही जमीन है जह
ां सबसे ऊंचे लोग पैदा होते हैं अगर ये ही बेवकूफिया जारी रहेगी तो मनुष्य युद्ध से
बच नहीं सकता है। यह सारा पागलपन है।

व्यक्ति का अहंकार तो हमें दिखायी पड़ता रहा है और हम एक एक आदमी से कहते
हैं कि अहंकारी मत बनो, विनम्र बनो। लेकिन राष्ट्रीय अहंकार हमें आज तक भी दि
खाई नहीं पड़ता और जब तक राष्ट्रीय अहंकार हमें दिखायी नहीं पड़ेगा, तब तक ह
म युद्धों से बच नहीं सकेंगे। आज तक जमीन इसीलिए युद्धों से परेशान रही है कि अ
ब तक हम राष्ट्रीय अहंकार से बचने में समर्थ नहीं हुए हैं। वह हमको दिखायी भी न
हीं पड़ता। दिखायी नहीं पड़ने का भी कारण है। अगर कोई आदमी कहे कि मैं सबसे
बड़ा आदमी हूं तो बाकी बस के अहंकार को चोट लगेगी और सब उसके खिलाफ ख.
डे हो जाएंगे कि यह बड़ा गड़बड़ आदमी है, बीमार या पागल है—कहता है कि सब
से बड़ा मैं हूं। लेकिन हम सब कहते हैं कि हमारा राष्ट्र सबसे बड़ा है तो किसी के अ
हंकार को चोट नहीं लगती है क्योंकि हम सब एक राष्ट्र के लोग हैं। दूसरे राष्ट्र के ल
ोगों को लगती होगी चोट वह हमारे सामने नहीं हैं। वह तो हमारे सामने तभी आते
हैं जब युद्ध होता है। दो राष्ट्र आमने सामने युद्ध में खड़े होते हैं और कभी खड़े नहीं
होते। हम सब के सामूहिक अहंकार को जो जो उत्तेजना दी जाती है उससे हम सब
सहमत होते हैं, बड़े प्रसन्न होते हैं। बिलकुल ठीक कह रहे हैं कि भारत सबसे महान
राष्ट्र है। हम सब खुश होते हैं क्योंकि हम सब के अहंकार को सामूहिक तृप्ति दी जा
रही है। एक आदमी कह दे कि मैं बड़ा हूं तो हम झगड़ने को खड़े हो जाते हैं। वैसे
हर आदमी अपने मन में कहता रहता है कि मैं बड़ा हूं।

गांधी इंग्लैंड गए थे गोलमेज काफ्रेंस में। उनके एक सेक्रेटरी ने बर्नार्ड शा से जाकर पू
छा कि आप गांधी जी को महात्मा मानते हैं या नहीं? महात्माओं के शिष्यों को यह
बड़ी फिकर होती है कि दूसरे लोग भी उनके महात्मा को महात्मा मानते हैं कि नहीं।
तो बर्नार्ड शा से उनके सेक्रेटरी ने पूछा कि आप गांधी को महात्मा मानते हैं कि नह
ीं? बर्नार्ड शा ने कहा कि महात्मा वे जरूर हैं लेकिन नंबर दो हैं क्योंकि नंबर एक म
हात्मा तो मैं हूं। दुनिया में दो ही महात्मा हैं, एक मैं और एक गांधी, लेकिन गांधी
नंबर दो हैं, नंबर एक मैं हूं।

वह बड़े दुखी हुए होंगे क्योंकि शिष्य बड़े दुखी होते हैं इन बातों से क्योंकि शिष्यों के
अहंकार की तृप्ति इसी में होती है कि उनका महात्मा नंबर एक हो। उनका महात्मा
नंबर दो हो तो शिष्य में महात्मा नंबर दो के शिष्य हो जाते हैं। वह दुखी वापस लौटे
और उन्होंने महात्मा गांधी को कहा कि यह बर्नार्ड शा बड़ा अहंकारी मालूम होता है
और बड़ा दंभी मालूम होता है। अपने ही मुंह से कहता है कि मैं नंबर एक हूं, आप
नंबर दो हैं। गांधी ने कहा, वह बड़ा सीधा और सरल आदमी मालूम होता है। दिल

में तो सभी के ऐसा होता है कि मैं नंबर एक हूं। कुछ लोग कह देते हैं, कुछ लोग क
हते नहीं हैं। वह सीधा आदमी है।
हम सब के मन में यह होता रहता है कि मैं नंबर एक हूं और इस बात को सिद्ध क
रने के लिए जीवन में हजार उपाय करते हैं। बड़ा मकान बनाते हैं इसलिए ताकि बि
ना कहे लोग जान लें कि हम नंबर एक हैं। शानदार कपड़े पहनकर खड़े हो जाते हैं
ताकि कहना न पड़े और दूसरे जान लें कि मैं नंबर एक हूं। हम जीवन भर यह कोशि
श करते हैं कि बिना कहे पता चल जाए कि मैं नंबर एक हूं क्योंकि कहने से तो झग.
डा खड़ा हो जाता है। बिना कहे सबको पता चल जाए, जीवन की सारी दौड़ यही है।
नंबर एक होने का सबका खयाल है। एक मजाक अरब में प्रचलित है। अरब में कहा
जाता है कि भगवान जब आदमियों को बनाता है और बना कर उनको जब दुनिया
में भेजने लगता है तो हर आदमी से आकर कान में कह देता है, तुमसे अच्छा आदम
ी मैंने कभी बनाया ही नहीं। भगवान मजाक कर देता है हर आदमी के साथ, फिर ह
र आदमी जिंदगी भर मन ही मन में यह सोचता रहता है कि मुझ से कुछ अच्छा आ
दमी तो कोई है ही नहीं।
एक व्यक्ति का अहंकार रोग है, यह तो हमें दिखायी पड़ता है क्योंकि वह हमारे संघ
र्ष में आ जाता है लेकिन राष्ट्रीय अहंकार भी रोग है, सांप्रदायिक अहंकार भी रोग है
, जातीय अहंकार भी रो है, यह हमें दिखायी नहीं पड़ता है क्योंकि समूह में हम होते
हैं और हमारी टक्कर नहीं होती। अगर एक जगह सभी लोग एक ही बीमारी से परे
शान हो जाए तो वह बीमारी दिखायी पड़नी बंद हो जाएगी। पागलखानों में पागलों क
ो ऐसा नहीं मालूम पड़ता कि दूसरा आदमी पागल है या मैं पागल हूं। वह बिलकुल ठ
ीक मालूम पड़ते हैं, वे सभी एक ही बीमारी से जो ग्रस्त हैं।
एक बार ऐसा हुआ कि किसी गांव में एक जादूगर आया और उसने एक कुएं में एक
पुड़िया डाल दी और कहा कि जो भी इसका पानी पीएगा वह पागल हो जाएगा। उ
स गांव में दो ही कुएं थे। एक गांव का कुआं था, एक राजा का कुआं था। राजा के
कुएं से राजा पानी पीता था, उसका वजीर पानी पीता था, उसकी रानियां पानी पीती
थीं। गांव के कुएं से पूरा गांव पानी पीता था। पागल हों या कुछ भी हों, पानी बिना
पीए तो कोई रह भी नहीं सकता। थोड़ी देर रुके लेकिन सांझ होते होते सबको पानी
पीना पड़ा। गांव भर पागल हो गया। सिर्फ राजा, वजीर और रानियां पागल नहीं हु
ए। लेकिन, गांव में यह खबर फैलने लगी कि ऐसा मालूम होता है कि राजा का दिमा
ग खराब हो गया है। स्वाभाविक था। गांव सारा पागल हो गया था। जो पागल नहीं
था वह पागल दिखायी पड़ने लगा। रात होते होते गांव में एक सभा हुई और गांव के
सारे लोगों ने सोचा कि कुछ गड़बड़ हो गयी है, राजा और वजीर पागल मालूम हो
ते हैं। उनको बदले बिना ठीक न होगा। उनको बदल देना चाहिए। कोई और राजा ब
नाना चाहिए। उसके सिपाही भी पागल हो गए थे, उसके सैनिक भी, उसके पहरेदार
भी, सभी पागल हो गए थे। उसके बचाव का भी कोई उपाय नहीं था। उसने अपने व
जीर को कहा कि अब क्या किया जाए? वजीर ने कहा, एक ही रास्ता है, हम भी उ

सी कुएं का पानी पी लें। और राजा और वजीर भागे कहीं समय न चूक जाए। और उन्होंने जाकर उस कुएं का पानी पी लिया। उस रात उस गांव में जलसे मनाए गए, उन्होंने खुशियां बनायी, भगवान को धन्यवाद दिया कि राजा का दिमाग ठीक हो गया है।

सामूहिक से लोग पागल हो जाए तो किसी को दिखायी नहीं पड़ता। राष्ट्रीय अहंकार सामूहिक पागलपन है इसलिए हमें दिखायी नहीं पड़ता। हम सभी उसी के बीमार हो गए हैं। जब कोई कहता है, महान देश है यह भारत वर्ष तो हमारे मन में यह यह खयाल ही नहीं उठता है कि यह बड़ी पागलपन की बात कह रहा है। जब कोई कहत ा है, दुनिया का गुरु है हमारा देश तो हमें खयाल ही नहीं उठता कि यह पागलपन की बात कह रहा है। जब कोई कहता है कि भगवान इसी भूमि को पवित्र मानते हैं तो हम बड़े प्रसन्न होते हैं कि यह बहुत ही अच्छी बात क्योंकि हम भी इसी भूमि में पैदा हुए हैं। और यह पागलपन सारी दुनिया के सभी लोगों को है। जमीन पर ऐसी क ोई कौम नहीं है जिसको यह खयाल न हो कि वह विशिष्ट है। जमीन पर कोई ऐसी कौन नहीं जिसे यह खयाल न हो कि वह जो भी करती है, जो भी उसका जीवन है, वही श्रेष्ठ है।

पहले महायुद्ध में फ्रांस हारता चला जाता था। एक फ्रेंच जनरल ने एक अंग्रेज जनरल से पूछा कि क्या मामला है, हम हारते चले जाते हैं जर्मनी में? तुम किस भांति लड़ ते हो, तुम्हारे लड़ने के ढंग क्या है? उस अंग्रेज जनरल ने कहा कि ढंग की तो बात छोड़ दो, जहां तक मैं समझता हूं भगवान हमारे पक्ष में हैं इसलिए हम जीतते हैं। उ स फ्रेंच ने पूछा क्या भगवान हमारे पक्ष में नहीं हैं? उस अंग्रेज ने कहा कि आज तक तुम्हें पता है कभी अंग्रेजों को छोड़कर भगवान किसी और के पक्ष में रहा है? लेकि न फिर भी तुम ठीक से प्रार्थना करो तो शायद वह दयावान हो जाए और दयावान ह ोने का एक कारण यह भी है कि तुम हमारे मित्र राष्ट्र हो। उस फ्रेंच ने कहा कि प्रा र्थना तो हम हमेशा करते हैं। हमारी सैनिक टुकड़ियां भी युद्ध में जाने के पहले प्रार्थन ा करती हैं। उस अंग्रेज जनरल ने पूछा, किसी भाषा में प्रार्थना करते हो? भगवान अं ग्रेजी के सिवाय कोई भाषा नहीं समझाता।

हिंदुस्तानियों को भी यह भ्रम है कि संस्कृत जो है, देववाणी है। भगवान सिर्फ संस्कृत ही समझता है, लेकिन इस पर कभी आप हंसे थे जिंदगी में कि संस्कृत देववाणी है ले किन कोई अंग्रेज कहे कि अंग्रेजी देववाणी है तो हमको हंसी आ जाती है। हमको है ि क कैसी बेवकूफी है--अंग्रेजी और देववाणी! लेकिन संस्कृत देववाणी है, इस पर कभी हंसे थे? नहीं, संस्कृत तो देववाणी है ही, उस पर हंसने की जरूरत क्या है? कौमें ए क दूसरे के पागलपन पर हंसती हैं लेकिन अपने पागलपन पर नहीं हंसती। वह वक्त आ गया है कि हमें यह खोजना होगा, पहचानना होगा कि राष्ट्रीय अहंकार कहीं रो तो नहीं है। यह रोग है।

अगर यह बात स्पष्ट दिखायी दे सके कि यह राष्ट्रीयता (छंजपवदंसपजल) रोग है, झं डे को ऊंचा रखने का खयाल नासमझी है, अहंकार है, तो शायद हम एक नयी दुनिय

ा के बनाने में समर्थ हो सकते हैं। शायद एक ऐसी दुनिया को बना सकें जहां कि राष्ट्रीय अहंकार न हो, तो ही हम युद्ध के बाहर हो सकेंगे। और हमें क्यों इतना सुख मिलता है यह कहने में कि मैं बड़ा हूं आपसे, कभी इस पर भी सोचा है? चाहे व्यक्ति कहे, चाहे राष्ट्र कहे, सुख क्या है इसमें कि मैं आप से बड़ा हूं? जो आदमी दुखी होता है, वह इसी तरह की थोथी बातें कहकर सुख अनुभव करता है। एक भिखमंगा सडक के किनारे बैठकर कहता है कि मेरे बाप बादशाह थे, नवाब थे। वह भीख मांगता है। इस बात को कह कर कि उसके पिता बादशाह थे, वह अपने भीख मांगने के दुख को छिपा लेता है।

अहंकार दुख को छिपाने की कोशिश है। जो आदमी दुखी नहीं होता वह अहंकारी भी नहीं होता। जो आदमी आनंदित होता है, वह यह नहीं कहता है कि मैं बड़ा हूं, मैं वह हूं। वह सिर्फ आनंदित होता है। उसे खयाल भी नहीं आता है कि ये बातें कहने की हैं। यह सिर्फ दुखी और पीड़ित चित्त को खयाल आते हैं कि मैं यह हूं। तो जो कौम जितनी नीचे गिरती जाती है, वह उतनी अपने अहंकार में फूल-फूलकर समझाने की कोशिश करने लगते हैं। जितनी ज्यादा हीनता (टदमितपवतपजल) का खयाल होता है उतना अहंकार की घोषणा करने की प्रवृत्ति आती है। अहंकार हीनता के भाव को छिपाने का उपाय है।

नादिरशाह आता था मुल्क जीतने के लिए। किसी ज्योतिषी से उसने पूछा, में जीतने को जा रहा हूं। मेरे हाथ देखो, लक्षण देखो कि मैं आदमी कैसा हूं, मैं जीत सकूंगा या नहीं? उस ज्योतिषी ने कहा, तुम आदमी जरूर छोटे होगे क्योंकि जितने का खयाल छोटे लोगों को ही पैदा होता है। उस ज्योतिषी को नादिर ने मरवा डाला। लेकिन यह बात इतनी सच्ची है कि किसी ज्योतिषी को मारने से मिट नहीं सकती। छोटे लोगों को जीतने का खयाल पैदा होता है ताकि वह यह सिद्ध कर सकें अपने और दूसरों के सामने कि मैं छोटा नहीं हूं। तैमूरलंग चीन के जीतने गया। तैमूर लंगड़ा था। रास्ते में उसने एक मुल्क जीता। उस मुल्क के राजा को उसने हथकड़ियों में बंधवाकर बुलवाया। जब वह राजा हथकड़ियों में बंध कर सामने आया तो तैमूरलंग हंसने लगा। अपने सिंहासन पर बैठा हुआ था। उस राजा ने कहा, तैमूर हंसते हो तो बड़ी गलती करते हो। इस भूल में मत रहना कि तुमने आज मुझे जित लिया तो हमेशा जीतते चले जाएंगे, किसी दिन हारोगे भी। जो जीतता है वह किसी दिन हारता भी है। हंसो मत, क्योंकि जो किसी की हार पर हंसता है, एक दिन उसे अपनी हार पर आंसू बहाने पड़ते हैं। तैमूर ने कहा, मैं हंसा ही नहीं इस कारण से। मैं तो किसी और बात से हंसा। तैमूर लंगड़ा था। एक पैर उसका लंगड़ा था और जिस राजा को उसने जीता था वह काना था। उसकी एक ही आंख थी। उसने कहा, मैं तो इसलिए इंसा कि यह भगवान भी बड़ा अजीब है कि लंगड़े और काने को भी बादशाहत दे देता है। मैं इसलिए नहीं हंसा कि तुम हार गए। मैं तो इसलिए हंसा कि मैं हूं लंगड़ा और तुम हो काने। बड़ी अजीब बात है, लंगड़े और काने बादशाह हो जाते हैं। बात वहीं खत्म हो गयी लेकिन अगर मैं वहां मौजूद होता तो मैं तैमूर से कहता कि इसमें भगवान का को

ई भी कसूर नहीं है। लंगड़ों और कानों के सिवाय बादशाहत कोई मांगता ही नहीं। इ
समें भगवान का क्या कसूर?
यह हमारे भीतर जो लंगड़ापन और कानापन होता है, जो हीनता होती है, वह हमार
ी जिंदगी में एक बल बन जाती है, भागने का, दौड़ने का। हमें अपने को सिद्ध करना
 है दूसरों के सामने कि मैं लंगड़ा नहीं हूं, मैं काना नहीं हूं, मैं कुछ हूं। तो जितना लं
गड़ा काना आदमी होता है, उतनी ज्यादा यह दौड़ तेज हो जाती है। जितनी हीन वृ
त्त होती है उतनी महत्वाकांक्षा हो जाती है। फिर यह व्यक्तियों के तल पर भी होती
 है, राष्ट्रों के तल पर भी होती है। इसे थोड़ा समझना और इसको विदा करना जरूर
ी है।
राष्ट्रों का अहंकार जाना चाहिए और यह तभी जा सकती है, जब हमें दिखायी पड़ ज
ाए कि यह रोग हैं। हम तो इसे महिमा समझते हैं इस लिए यह टिका हुआ है। हम
तो इसे गौर समझते हैं इसलिए टिका हुआ है। मैं तो कहूंगा, ऐसी प्रार्थना करें जो म
नुष्य के लिए हों, राष्ट्रों के लिए नहीं। राष्ट्रों ने मनुष्यता को नष्ट किया है। आने वा
ला दिन राष्ट्रों का दिन नहीं हो सकता है। आने वाला दिन सारी मनुष्य जाति का इ
कट्ठा दिन होगा। वे लोग जो सोचते विचारते हैं, उन्हें ऐसी प्रार्थनाएं बंद कर देनी चा
हिए जो टुकड़े के लिए हों। उन्हें तो पूरी अखंड मनुष्यता के लिए कोई चिंता करनी च
ाहिए। लेकिन हम सोचते भी नहीं हैं।
हम खड़े हुए हैं विश्व शांति के लिए और हमको पता नहीं है कि यदि प्रार्थना हम राष
्ट्र के लिए करते हैं तो विश्व शांति कैसे होगी? ये दोनों बातें विरोधी हैं। राष्ट्रों को
जो मानता है वह विश्व शांति के पक्ष में नहीं हो सकता है। विश्व शांति की जिसकी
आकांक्षा होती है उसे राष्ट्रों को मानने की गुंजाइश नहीं है। पांच हजार वर्ष की कथा
 देखिए। उसमें आदमी की कथा क्या है? राष्ट्रों की कथा क्या है? क्या हुआ? अब भ
ी हम उससे चिपके रहेंगे तो खतरा होगा, लेकिन शायद हमें बोध नहीं है, हमें खयाल
 नहीं है। चीजें चलती जाती हैं, हम उनका अनुभव नहीं करते हैं। चले जाते हैं, न ह
म सोचते हैं, न हम विचारते हैं। सारी दुनिया खंडित खड़ी है। खंडित जहां भी होंगे
वहां युद्ध होना बहुत आसान है।
हम हिंदुस्तान में युद्ध के लिए संग्राम शब्द का प्रयोग करते हैं। शायद आपको अभी ख
याल न हो कि संग्राम का अर्थ क्या है। संग्राम का अर्थ होता है, दो ग्रामों की सीमा।
ग्राम का अर्थ गांव होता है संग्राम का अर्थ दो गांवों की सीमा होता है। बड़ी अजीब
बात है कि जिसका अर्थ है दो गांवों की सीमा,उसका अर्थ युद्ध भी है। असल में जहां
 सीमा बटती है वही से युद्ध शुरू हो जाता है। जहां रेखा है वहां युद्ध है, जहां सीमा
एं हैं, वहां युद्ध हैं और राष्ट्र सीमा बनाते हैं। सीमा युद्ध लाती है। सीमा युद्ध लाएगी
। तो अगर चाहनी हो शांति, तो सीमा से ऊपर उठना होगा। असीम को स्वीकार कर
ना होगा तो शांति आ सकती है।
जो सीमा को स्वीकार करता है वह कभी शांत नहीं हो सकता है। और हम सब तरह
 से सीमाओं को स्वीकार किए हुए हैं। हजार हजार तरह की सीमाएं हमने स्वीकार क

ी हैं, राष्ट्रों की सीमाएं, जातियों की सीमाएं, रंगों की सीमाएं, वर्णों की। आदमी की इतनी सीमाएं हमने बांध दी हैं कि आदमी करीब-करीब कारागृह में है। उसकी कोई स्वतंत्रता नहीं है। कारागृह में जो आदमी खड़ा है, वह ऐसी दुनिया नहीं बना सकता है जो कि शांत हो। इस आदमी को मुक्त करना होगा। इसका सारी सीमाओं को तोड़ना होगा। इसे थोड़ा असीम की तरफ ले चलना होगा। स्मरण रहे अहंकार सबसे खतरनाक सीमा है, तो जो असीम होने की तरफ जाता है, उसे अहंकार भी छोड़ देना होगा। एक छोटी सी कहानी मेरी बात को स्पष्ट कर देगी।

एक राजा का जन्मदिन था। कहते हैं उसने सारी जमीन जीत ली थी। अब उसके उसके पास जीतने को कुछ भी नहीं बचा था। उसने अपनी राजधानी के सौ ब्राह्मणों को भोजन पर आमंत्रित किया। वे उसके राज्य के सबसे विचारशील पंडित थे। जन्मदिन के उत्सव में उन्होंने भोजन किया और पीछे उस राजा ने कहा, मैं तुम्हें जन्मदिन की खुशी में कुछ भेंट करना चाहता हूं। लेकिन मैं कुछ भी भेंट करूं, तुम्हारी आकांक्षा से भेंट छोटी पड़ जाएगी। तुम न मालूम क्या सोचकर आए होगे कि राजा क्या भेंट करेगा। तो मैं जो भी भेंट करूंगा, हो सकता है, वह छोटी पड़ जाए इसलिए मैं तुम्हारे मन पर ही छोड़ देता हूं तुम्हारी भेंट। मेरे भवन के पीछे दूर-दूर तक श्रेष्ठतम जमीन है राज्य की। तुम्हें जितनी जमीन उसमें से चाहिए, वह ले लो। एक ही शर्त है, तुम्हें जितनी जमीन चाहिए, उतनी पहले तुम दीवाल बनाकर घेर लो, वह तुम्हारी हो जाएगी। जो जितनी जमीन घेरे लेगा, वह उसकी हो जाएगी।

ऐसा मौका कभी न मिला था और वह भी ब्राह्मणों को। वे ब्राह्मण तो खुशी से पागल हो उठे। उन्होंने अपने मकान बेच दिए, अपनी धन संपत्ति बेच दी, सब बेचकर वे बड़ी दीवाल बनाने में लग गए। जो जितना उधार ले सकता था, मित्रों से मांग सकता था, सब ले आए थे। यह मौका अदभुत था। जमीन मुफ्त मिलती थी। राज्य की सबसे अच्छी जमीन थी। सिर्फ रेखा खींचनी थी, दीवाल बनानी थी। बड़ी बड़ी दीवालें उन्होंने बनाकर जो जितनी जमीन घेर सकता था घेर ली। एक ही कीमत पर मिलती थी जमीन कि सिर्फ घेर लोग और जमीन मिल जाएगी। तीन महीनों के बाद जबकि वह जमीन करीब-करीब घिरने के निकट पहुंच गयी थी, राजा घोषणा की कि मैं एक खबर और कर देता हूं जो सबसे ज्यादा जमीन घेरेगा उसे मैं राजगुरु के पद पर भी नियुक्त कर दूंगा। अब तो पागलपन और तेज हो गया। अब जिसके पास जो भी था, कपड़े लत्ते भी बेच दिए। उन ब्राह्मणों ने अपनी लंगोटियां लगा लीं क्योंकि कपड़े लते बेच कर भी चार ईंट आती थी तो थोड़ी जमीन और घिरती थी। वे करीब-करीब नंगे और फकीर हो गए। वे जमीन घेरने में पागल हो गए। आखिर समय पूरा हो गया। जमीन उन्होंने घेर ली। दिन आ गया और राजा वहां गया और उसने कहा कि मैं जांच कर लूं और राजगुरु का पद दे दूं। तो तुममें से जिसने ज्यादा जमीन घेरी हो, वह बताए। जो दावा करेगा उसकी जांच कर ली जाएगी। एक ब्राह्मण खड़ा हुआ। उसको देखकर बाकी ब्राह्मण हैरान रह गए। वह तो सबसे ज्यादा गरीब ब्राह्मण था। उसने एक थोड़ा सा जमीन का टुकड़ा घेरा था, शायद सबसे कम उसी की जमीन थी और वह

पागल सबसे पहले खड़ा हो गया और उसने कहा, मेरी जमीन का निरीक्षण कर लिया जाए, मैंने सबसे ज्यादा जमीन घेरी है। मैं राजगुरु के पद पर अपने को घोषित करता हूं। राजा ने कहा, ठहरो! लेकिन उसने कहा, ठहरने की कोई जरूरत नहीं, मैं घोषित करता हूं। बाद में तुम भी घोषणा कर देना। चलो जमीन देख लो।

जब उसने दावा किया था तो निरीक्षण होना जरूरी था। सारे ब्राह्मण और राजा उसकी जमीन पर गए और देखकर ब्राह्मण हंसने लगे। पहले तो उसने थोड़ी सी दीवाल बनायी थी। मालूम होता था, रात में उसने दीवाल तोड़ दी थी, रात दीवाल भी न रही। राजा ने कहा, कहां है तुम्हारी दीवाल? उस ब्राह्मण ने कहा, मैंने दीवाल बनायी थी फिर मैंने सोचा, दीवाल कितनी ही बनाऊं जो भी घिरेगा वह छोटा ही होगा। फिर मैंने सोचा दीवाल गिरा दूं क्योंकि दीवाल कितनी ही बड़ी जमीन को घेरे भी जमीन आखिर छोटी ही होगी। घिरी होगी तो छोटी ही होगी। तो मैंने दीवाल गिरा दी है। मैं सबसे बड़ी जमीन का मालिक हूं। मेरी जमीन की कोई दीवाल नहीं है इसीलिए मैं कहता हूं कि मैं राजगुरु की जगह खड़ा हूं।

राजा उसके पैर पर गिर पड़ा। उसने कहा, मुझे पहली दफा खयाल में आया है कि जो दीवाल गिरा देता है वह सबका हो जाता है, सबको मालिक हो जाता है। और जो दीवाल बनाता है वह कितनी ही बड़ी दीवाल बनाए तो भी जमीन छोटी ही घिर जाती है।

मनुष्य के चित्त पर बहुत दीवालें हैं, इनके कारण मनुष्य छोटा हो गया है। मनुष्य छोटा है इसलिए युद्ध है, अहंकार है। मनुष्य को बड़ा करना है तो उसकी सारी दीवालें गिरा देनी जरूरी है और जो लोग भी इन दीवालों को गिराने में लगे हैं वे ही लोग मनुष्यता की सेवा कर रहे हैं। आप स्कूल बनाए, अस्पताल खोलें इसमें कोई बहुत मतलब नहीं है; क्योंकि आप एटम बम भी बना रहे हैं। मनुष्यता की एक ही सेवा हो सकती है कि आप मनुष्य को दीवालों से मुक्त करें। हिंदू की, मुसलमान की, भारतीय की, पाकिस्तानी की, काले गोरे की दीवालों से जो मुक्त कर रहा है हर आदमी को, वही आज के क्षणों में मनुष्यता की सेवा कर रहा है। अगर ऐसे आदमी को जन्म दे सकें जिसके मन पर कोई दीवाल न हो तो शायद मनुष्यता के इतिहास में एक नए युग का प्रारंभ हो सकता है। आज तक मनुष्यता दुख, युद्ध और पीड़ा में रही है; अब या तो हम समाप्त होंगे या हमको बदलना होगा। या तो महायुद्ध होगा और हम समाप्त हो जाएंगे, या एक महाक्रांति आएगी और हमारे जीवन को बदल देगी।

आज दो ही तरह के लोग हैं जमीन पर—वे लोग जो आगे वाले महायुद्ध को लाने की तैयारी में लगे हैं, साथ दे रहे हैं या वे लोग जो आने वाली महाक्रांति के लिए श्रमरत हैं और सहयोग कर रहे हैं। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं, महायुद्ध में साथी मत बनना। उस महाक्रांति में जो मनुष्य के चित्त को दीवालों से मुक्त कर दें, अगर अपने सहयोग दिया तो ही मनुष्यता की सेवा हो सकेगी। आज एक ऐसी सेवा की जरूरत आ गई है जो कभी भी न थी। छोटी छोटी सेवाओं से कुछ भी न होगा। पूरा आकाश ही टूटने को आ गया है और आप अगर छोटे छोटे थेगड़े घर में लगाएंगे तो उससे कुछ

भी होने को नहीं है। उस महान क्रांति की दिशा में चिंतन पैदा हुए बिना कुछ भी न हीं हो सकता है।

शिक्षा में क्रांति

शिक्षक और समाज के संबंध में थोड़ी सी बातें जो मुझे दिखायी पड़ती है मैं आपसे क हूं। शायद जिस भांति आप सोचते रहे होंगे उससे मेरी बात का कोई मेल न हो। यह भी हो सकता है कि शिक्षा शास्त्र जिस तरफ की बातें करता है उस तरह की बातों से मेरा विरोध भी हो। न तो मैं कोई शिक्षा शास्त्री हूं और न ही समाज शास्त्री। इ सलिए सौभाग्य है कि मैं शिक्षा और समाज में संबंध में थोड़ी सी कुछ बुनियादी बातें कह सकता हूं। क्योंकि जो शास्त्र से बंध जाते हैं उनका चिंतन समाप्त हो जाता है। जो शिक्षाशास्त्री हैं उन्हें शिक्षा के संबंध में कोई सत्य प्रकट होगा, इसकी संभावना अ ब करीब करीब समाप्त मान लेनी चाहिए। क्योंकि पांच हजार वर्षों से वे चिंतन करते हैं लेकिन शिक्षा की जो स्थिति है, शिक्षा जो ढांचा है, उस शिक्षा से पैदा होने वाली मनुष्यों की जो रूपरेखा है वह इतनी गलत है कि यह स्वाभाविक है कि शिक्षा शास्त्र ों से अस्वस्थ और भ्रांत नेता पैदा हो जाए। समाजशास्त्र भी, जो समाज के संबंध में ि चतन करता है वह भी अत्यंत रुग्ण और अस्वस्थ है, अन्यथा मनुष्य जाति, उसका जी वन, उसका विचार, बहुत अलग और अन्यथा हो सकता था। मैं दोनों में से कोई भी नहीं हूं इसलिए संभव है कि आपसे कुछ ऐसी बात कह सकूं जो सीधी समस्याओं को देखने से पैदा होती हैं।

जिन लोगों के लिए शास्त्र महत्वपूर्ण हो जाते हैं उन लोगों के लिए समाधान महत्वपूर्ण हो जाते हैं और समस्याएं कम महत्व की हो जाती हैं। मुझे चूंकि कोई पता नहीं शि क्षाशास्त्र का इसलिए मैं सीधी समस्याओं पर आपसे बात करना चाहूंगा। सबसे पहली बात और जिस आधार पर आगे मैं आपसे कुछ कहूं, वह यह है कि शिक्षक का और समाज का संबंध अब तक अत्यंत खतरनाक सिद्ध हुआ है। संबंध क्या है, शिक्षक और समाज के बीज आज तक? संबंध यह है कि शिक्षक गुलाम हैं और समाज मालिक है। शिक्षक से काम समाज कौन सा लेता है? शिक्षक से समाज काम यह लेता है कि पुरानी ईर्ष्याएं, उसके पुराने द्वेष, उसके पुराने विचार वह सब जो हजारों वर्ष से ला दे हैं मनुष्यों के मन पर, शिक्षक उन्हें नए बच्चों के मन में प्रविष्ट करा दे। मरे हुए लोग, मरने जाने वाले लोग जो वसीयत छोड़े गए हैं, चाहे वह ठीक हो गया गलत, उसे वह नए बच्चों के मन में प्रवेश करा दे। समाज शिक्षक से यह काम लेता रहा है और शिक्षक इस काम को करता रहा है, यह आश्चर्य की बात है। इसका अर्थ यह हुआ कि शिक्षक के ऊपर बहुत बड़ी लांछना है। बहुत बड़ी लांछना यह कि हर सदी ि जन बीमारियां से पीड़ित होती है उन बीमारियां को आनेवाली सदी में शिक्षक संक्रमि त कर देता है, जैसा कि समाज कहता है।

समाज का ढांचा और समाज के ढांचे से जुड़ गया स्वयं स्वार्थ अंधविश्वास को कोई भ ी मारना नहीं चाहते हैं, कोई भी समाप्त करना नहीं चाहते। इस कारण समाज शिक्ष

क का आदर भी करता है, आदर करने की प्रवृत्ति भी दिखाता है। क्योंकि बिना शिक्ष
क की खुशामद किए, बिना शिक्षक को आदर दिए शिक्षक से कोई काम लेना असंभव
है। इसलिए कहा जाता है कि शिक्षक गुरु है आदरणीय है, उसकी बातें मानने योग्य
हैं, उसका सम्मान किया जाने योग्य है क्यों? क्योंकि जो समाज अपने बच्चों में अपने
मन की सारी धारणाओं को छोड़ जाना चाहता है, इसके सिवाय उसको कोई मार्ग न
हीं। जैसे हिंदू बाप अपने को भी हिंदू बनाकर ही मरना चाहता है, मुसलमान बाप अप
ने बच्चे को मुसलमान बनाकर मरना चाहता है। हिंदू बाप का मुसलमान से जो झगड़ा
था वह भी अपने बच्चे को दे जाना चाहता है। यह कौन देगा? वह कौन संक्रमित क
रेगा? यह शिक्षक करेगा।

पुरानी पीड़ा की जो अंध श्रद्धाएं हैं वह पुरानी पीढ़ी पर नयी पीढ़ी थोप देना चाहती
है। अपने शास्त्र, अपने गुरु सब थोप देना चाहती है। यह कौन करेगा? यह काम वह
शिक्षक से लेता है और इसका परिणाम क्या होगा? इसका परिणाम यह होता है कि
दुनिया में भौतिक समृद्धि तो विकसित होती जाती है लेकिन मानसिक समृद्धि विकसि
त नहीं हो रही है। मानसिक शक्ति विकसित हो ही नहीं सकती जब तक कि हम अ
तीत के भार और विचार से बच्चों को मुक्त न करें। एक छोटे से बच्चे के मस्तिष्क
पर पांच दस हजार साल के संस्कारों का भार है। उस भार के नीचे उसके प्राण दबे
जाते हैं। उस भार में उसकी चेतना की ज्योति, उसके खुदा का व्यक्तित्व उठना असं
भव है।

दुनिया में भौतिक समृद्धि बढ़ती है, क्योंकि भौतिक समृद्धि को जहां हमारे मां बाप छ
ोड़ते हैं, उसे बच्चे आगे ले जाते हैं, लेकिन मानसिक समृद्धि नहीं बढ़ती है क्योंकि मा
नसिक समृद्धि में हम अपने मां बाप से आगे जाने को तैयार नहीं। आपके पिता जो म
कान बना गए थे, लड़का उसको दो मंजला बनाने में संकोच अनुभव नहीं करता, बलि
क खुश होगा। और बाप भी खुश होगा कि उसके लड़के ने उसके मकान को दो मंज
ला किया, तीन मंजला किया। लेकिन महावीर, बुद्ध, राम और कृष्ण जो वसीयत छो.
ड गए हैं उनके मानने वाले इस बातें में बड़ी मुश्किल में पड़ जाएंगे कि किसी व्यक्ति
ने गीता से आगे विचार किया, कि गीता के एक मंजली झोपड़े को दो मंजला मका
न बनाया है। मन के तल पर जो मकान बाप छोड़ गए हैं उसके भीतर ही रहना जरू
री है। उससे बड़ा मकान नहीं बनाया जा सकता है।

और इस बात की हजारों साल से चेष्टा चलती है कि कोई बच्चा बाप से आगे न नि
कल जाए। इसकी कई एक तरकीब हैं, कई व्यवस्था हैं। इसलिए दुनिया में समृद्धि ब.
ढती है भौतिक, लेकिन मानसिक दीनता बढ़ती चली जाती है। और जब मन छोटा ह
ो भौतिक समृद्धि ज्यादा हो तो खतरे पैदा होते हैं। जिस भांति हम भौतिक जगत में
अपने मां बाप से आगे बढ़ते हैं, जरूरी है कि बच्चे मानसिक और आध्यात्मिक विकास
में भी मां बाप को पीछे छोड़ दें। इसमें मां बाप का अपमान नहीं, बल्कि इसी में सम्
मान है। ठीक ठीक पिता वही है, ठीक ठीक पीता का प्रेम वही है कि वह चाहे कि उ
सका बच्चा हर दृष्टि में उसे पीछे छोड़ दे, लेकिन अगर किसी भी तल पर बाप की

यह इच्छा है कि बच्चा उसके आगे न निकल जाए तो यह इच्छा खतरनाक है और शिक्षक अब तक उसमें सहयोगी रहा है।

इसमें हम अपमान समझेंगे कि अगर हम कृष्ण से आगे विचार करें या महावीर से आगे विचार करें या मोहम्मद से आगे विचार करें। इसमें मोहम्मद का अपमान है, महावीर का अपमान है। कितने पागलपन का खयाल है यह। इस कारण सारी शिक्षा अतीत की ओर उन्मुख है, जब कि शिक्षा भविष्य की ओर उन्मुख होना चाहिए। विकासशील कोई भी सृजनात्मक प्रक्रिया भविष्य की ओर उन्मुख होती है, अतीत की ओर नहीं। लेकिन हमारी सारी शिक्षा अतीत की ओर उन्मुख है। हमारे सारे सिद्धांत हमारी सारी धारणाएं, हमारे सारे आदर्श अतीत से लिए जाते हैं। अतीत का मतलब है जो मर गया, जो बीत गया। हजार हजार वर्ष जिसे बीते हो गए हैं वह सारी धारणाएं हम उस बच्चे के मन पर थोपना चाहते हैं। न केवल थोपना चाहते हैं, बल्कि उसी बच्चे को हम आदर्श कहेंगे जो उस धारणाओं के अनुकूल अपने को सिद्ध कर लेता है। यह कौन करता रहा है? यह काम शिक्षक से लिया जाता रहा है और इस भांति शिक्षक का शोषण समाज के ठेकेदारों ने किया है, धर्म के ठेकेदारों ने भी किया है और राज्य के ठेकेदारों ने भी किया है और शिक्षक को यह भुलावा दिया गया है कि वह ज्ञान का प्रसारक है।

वह ज्ञान का प्रसारक नहीं है। जैसी उसकी स्थिति है वह उस ज्ञान को स्थापित और स्थापी रखने वाला है जो उत्पन्न हो चुका है, और जो ही सकता है उसमें बाधा देने वाला है। वह हमेशा अतीत के घेरे से बाहर नहीं उठने देना चाहता है और इसका परिणाम यह होता है कि हजार हजार साल तक न मालूम किस किस तरह की नासमझियां, न मालूम किस किस तरह के अज्ञान चलते चले जाते हैं। उनको मरने नहीं दिया जाता, उनको मरने का मौका नहीं दिया जाता राजनीतिज्ञ भी यह समझ गया है इसलिए शिक्षक को शोषण राजनीतिज्ञ भी करता है। और सबसे आश्चर्य की बात है कि इसका शिक्षक को कोई बोध नहीं है कि उसका शोषण होता है। सेवा के नाम पर कि वह समाज की सेवा करता है, उसका शोषण होता है। और भी कई तरह से उसका शोषण होता है।

अभी कुछ दिन पहले शिक्षकों की एक विराट सभा में बोलने में गया था। शिक्षक दिवस था। तो मैंने उनसे कहा कि एक शिक्षक यदि राष्ट्रपति हो जाए तो इसमें शिक्षक का सम्मान क्या है? इसमें कौन से शिक्षक का सम्मान है? मेरी समझ में, एक राष्ट्रपति शिक्षक हो जाए तब तो शिक्षक का सम्मान समझ में आता है लेकिन एक शिक्षक राष्ट्रपति हो जाए इसमें शिक्षक का सम्मान कौन सा है? एक राष्ट्रपति शिक्षक हो जाए और कह दे कि यह व्यर्थ है और मैं शिक्षक होना चाहता हूं क्योंकि शिक्षक होना आनंद है तब ताक हम समझेंगे कि शिक्षक का सम्मान हो रहा है। लेकिन एक शिक्षक राष्ट्रपति हो जाए इसमें शिक्षक का सम्मान नहीं है, राजनीतिज्ञ का सम्मान है। इसमें राजनेता का सम्मान है। और जब एक शिक्षक सम्मानित होता है राष्ट्रपति होकर तो

फिर बाकी शिक्षक भी हेडमास्तर होना चाहें, स्कूल के इंस्पेक्टर होना चाहें, एजुकेशन मिनिस्टर होना चाहें तो कोई गलती है?

सम्मान तो वहां है जहां पद है, और पद वहां है जहां राज्य है। लेकिन सारा ढांचा इस चिंतन का ऐसा है कि सब पीछे हैं, सबके ऊपर राज्य, सबके ऊपर राजनीतिज्ञ है। राजनीतिज्ञ जाने अनजाने शिक्षक के द्वार अपने विचार की स्थिति को, अपनी धारणाओं को बच्चों में प्रवेश कराता रहा है। धार्मिक भी यही करता रहा है। धर्म शिक्षा के नाम पर यही चलता रहा है कि हर धर्म यह कोशिश करते हैं कि बच्चों के मन में अपनी धारणाओं को प्रवेश करा दें, चाहे वह सत्य हों, चाहे असत्य हों। और उस उम्र में प्रवेश करवा दें जब कि बच्चों में कोई सोच विचार नहीं होता है। इसके घातक अपराध मनुष्य जाति मैं कोई दूसरा नहीं है और न हो सकता है। एक अबोध और अनजान बालक के मन में भाव पैदा कर देना कि पुराना में जो है सत्य है या गीता में जो सत्य है या भगवान जो हैं वह मोहम्मद है या भगवान हैं तो महावीर हैं, कृष्ण हैं। ये सारी बातें अबोध, निर्दोष, अनजान बच्चे के मन में प्रवेश करा देने से बढ़कर घातक अपराध कोई नहीं हो सकता। लेकिन इसी भांति राजनीतिज्ञ भी कोशिश करता है।

अभी हिंदुस्तान का मामला था। आजादी की लड़ाई थी तो हिंदुस्तान के राजनीतिज्ञ कहते थे शिक्षक और विद्यार्थी दोनों राजनीति में भाग लें, क्योंकि देश की आजादी का सवाल है। फिर वे ही राजनीतिज्ञ सत्ता पर आ गए तो कहते हैं कि शिक्षक और विद्यार्थी राजनीति और सत्ता से दूर रहें। कम्युनिस्ट और सोशलिस्ट कहते हैं कि नहीं, विद्यार्थी को दूर रहने की कोई जरूरत नहीं है। उन्हें राजनीति में भाग लेना चाहिए। शिक्षक और विद्यार्थी राजनीति में भाग लें। कल कम्युनिस्ट आ जाए हुकूमत में, तो वे कहेंगे कि अब तुम्हें इस राजनीति में भाग लेने की कोई जरूरत नहीं। क्योंकि जब जिस मौके पर जो जिस राजनीतिज्ञ के हित में है वही सत्य हो जाता है, और शिक्षक और विद्यार्थी को यही सत्य है, यह समझाने की कोशिश की जाती है।

मेरी दृष्टि में कोई भी व्यक्ति ठीक अर्थों में शिक्षक तभी हो सकता है जब उसमें विद्रोह की एक ज्वलंत अग्नि हो। जिस शिक्षक के भीतर विद्रोह की अग्नि नहीं है, वह किसी न किसी नीति, किसी न किसी स्वार्थ का एजेन्ट होगा। स्वार्थ चाहे सामाजिक, चाहे धार्मिक चाहे राजनीतिक हो। शिक्षक के भीतर एक ज्वलंत अग्नि होनी चाहिए--विद्रोह की, चिंतन, की, सोचने की। लेकिन क्या हममें सोचने की अग्नि है और अगर नहीं है तो क्या आप भी एक दूकानदारी नहीं हैं? शिक्षक होना बड़ी बात है। शिक्षक होने का मतलब क्या है? हम क्या सोचते हैं?

आप बच्चों को सिखाते होंगे, सारी दुनिया में बच्चों को सिखाया जाता है कि प्रेम करो। लेकिन कभी आपने विचार किया है कि आपकी पूरी शिक्षा की व्यवस्था प्रेम पर नहीं, प्रतियोगिता पर आधारित है। किताब में सिखाते हैं कि प्रेम करो और आपकी पूरी व्यवस्था, पूरा इंतजाम प्रतियोगिता का है। जहां प्रतियोगिता है वहां प्रेम कैसे हो स

कता है? जहां कम्पिटीश है, प्रतिस्पर्धा है वहां प्रेम कैसे हो सकता है? प्रतिस्पर्धा तो ईर्ष्या का रूप है, जलन का रूप है।

पूरी व्यवस्था तो जलन सिखाती है। एक बच्चा जो प्रथम आ जाता है तक दूसरे बच्चे से कहते हैं कि देखो तुम पीछे रह गए और वह पहले आ गया। आप क्या सिखा रहे हैं? आप कह रहे हैं कि विनीत बनो और किताबों में आप समझा रहे हैं कि प्रेम क रो, और आपकी पूरन व्यवस्था सिखा रही है कि घृणा करो, ईर्ष्या करो और आगे नि कलो, दूसरे के पीछे हटाओ। और आपकी व्यवस्था उसे पुरस्कृत कर रही है, जो आगे आ रहे है, उनको गोल्ड मेडल दे रही है, उनको सर्टिफिकेट दे रही है, उनके गले में मालाएं पहना रही है, उनके फोटो छाप रही है, और जो पीछे खड़े हैं उनको अपमानित कर रही है।

जब आप पीछे खड़े आदमी को अपमानित करते है तो क्या आप उसके अहंकार को चोट नहीं पहुंचाते कि वह आगे हो जाए? और आगे खड़े आदमी को आप सम्मानित करते हैं तो उसके अहंकार को प्रबल नहीं करते हैं? क्या आप उसके अहंकार को नहीं फुसलाते और बड़ा करते? और जब ये बच्चे इस भांति अहंकार में ईर्ष्या में, प्रतिस्पर्धा में पाले जाते हैं तो यह कैसे प्रेम कर सकते हैं? प्रेम का हमेशा मतलब होता है कि जिसे हम प्रेम करते हैं उसे आगे जाने दें। प्रेम का हमेशा मतलब है पीछे खड़ा हो जाना। एक छोटी सी कहानी कहूं, उससे मेरी बात खयाल में आ जाए। तीन सूफी फकीरों को फांसी दी जा रही थी। दुनिया में हमेशा धार्मिक आदमी संतों के खिलाफ रहे हैं। तो धार्मिक लोग उन फकीरों को फांसी दे रहे थे। तीन फकीर बैठे थे में। जल्लाद एक-एक का नाम बुलाएगा और उनको काट देगा। उसने चिल्लाया कि नूरी कौन है, उठकर आ जाए। लेकिन नूरी नाम का आदमी तो नहीं उठा। एक दूसरा युवक उठा और बोला कि मैं तैयार हूं, मुझे काट दो। जल्लाद ने कहा कि तेरा नाम यह नहीं है। इतनी मरने की क्या जल्दी? उसने कहा कि मैंने प्रेम किया है और जाना कि जब मरना हो तो आगे हो जाओ और जब जीना हो तो पीछे हो जाओ। मेरा मित्र मरे, उसके पहले मुझे मर जाना चाहिए और अगर जीने का साल हो तो मेरा मित्र जिए उसके पीछे मुझे जीना चाहिए।

प्रेम तो यही कहता है, लेकिन प्रतियोगिता क्या कहती है? प्रतियोगिता कहती है कि मरने वाले के पीछे हो जाना और जीने वाले के आगे हो जाना और हमारी शिक्षा क्या सिखाती है? प्रेम सिखाती है या प्रतियोगिता सिखाती है? और जब हर बच्चा हर बच्चे को पीछे छोड़ने के लिए उत्सुक हो तो बीस साल की शिक्षा के बाद वह जिंदगी में क्या करना? यही करेगा, जो सीखेगा वही करेगा।

नीचे के चपरासी से लेकर ऊपर के राष्ट्रपति तक हर आदमी एक दूसरे को खींच रहा है कि पीछे आ जाओ और इस खींचतान में कोई चपरासी राष्ट्रपति हो जाता है तो हम कहते हैं कि बड़ी गौरव की बात हो गई। हालांकि किसी को पीछे करके आगे होने से बड़ा हिंसा का कोई काम नहीं है। लेकिन यह हिंसा (वायलेंस) हम सिखा रहे हैं और इसको हम कहते हैं कि यह शिक्षा है। अगर इस शिक्षा वा आधारित दुनिया में

रोज लड़ाई होती हो, रोज हत्या होती हो तो आश्चर्य कैसा? अगर इस शिक्षा पर आधारित दुनिया में झोपड़ों के करीब बड़े महल खड़े होते हों और उन झोपड़ों में मर ते लोगों के करीब लोग अपने महलों में खुश रहते हों तो आश्चर्य कैसा? इस दुनिया में भूखे लोग हैं और ऐसे लोग है जिनके पास इतना है कि क्या करें, उनकी समझ में नहीं आता, यह इसी शिक्षा की बदौलत है। इसी शिक्षा का परिणाम है। यह दुनिया इसी शिक्षा से पैदा हो रही है और शिक्षक इसके लिए जिम्मेवार है। वह शोषण का ह थियार बना हुआ है। वह हजार तरह के स्वार्थों में हथियार बना हुआ है इस नाम पर कि वह शिक्षा दे रहा है, बच्चों को शिक्षा दे रहा है।

यही शिक्षा है तो भगवान करे कि सारी शिक्षा बंद हो जाए तो भी आदमी इससे बेह तर हो सकता है। जंगली आदमी शिक्षित आदमी से बेहतर है और उसमें ज्यादा प्रेम है तथा कम प्रतिस्पर्धा है। उसमें ज्यादा हृदय है और कम मस्तिष्क है। लेकिन हमसे ज यादा वह आदमी है। और हम इसको शिक्षा कह रहे हैं, और हम करीब करीब जिन जिन बातों को कह रहे हैं कि तुम यह करना, सिखाते हैं उनसे उल्टी बातें। पूरा सरं जाम हमारी उल्टी बातें सिखाता है। आप सिखाते हैं? आप सिखाते हैं उदारता, सहानु भूति लेकिन, प्रतियोगी मन, काम्पिटीटिव माइंड कैसे उदार हो सकता है, कैसे सहानु भूतिपूर्ण हो सकता है? अगर प्रतियोगी मन सहानुभूतिपूर्ण हो तो प्रतियोगिता कैसे च लेगी? प्रतियोगी मन कठोर होगा, हिंसक होगा, अनुदार होगा। होना ही पड़ेगा उसे।अ ौर हमारी अवस्था ऐसी है कि हमें पता भी नहीं चलेगा, हमें खयाल भी नहीं आएगा कि यह हिंसक आदमी है जो सारी भीड़ को हटाकर आगे जा रहा है। यह क्या है? य ह हिंसक आदमी है और हम इससे सिखाए जा रहे हैं, तैयार किए जा रहे हैं। फेक्टरि यां बढ़ती जा रही हैं इस तरह की शिक्षा की। उनको हम स्कूल कहते हैं, विद्यालय कहते हैं, सरासर झूठ है यह, वे सब फैक्टरियां हैं जिनमें बीमार आदमी तैयार किया जा रहा है। और वह बीमार आदमी सारी दुनिया को गड्ढे में लिए जा रहा है।

हिंसा बढ़ती जाती है, प्रतिस्पर्धा बढ़ती जाती है। एक दूसरे के गले पर एक दूसरे का हाथ है। आप यहां बैठे हैं, कहेंगे कि हमारा किसके गले पर हाथ है? लेकिन जरा गौ र से देखें हर आदमी का हाथ दूसरे आदमी के गले पर है और एक गले पर हजार ह जार हाथ हैं। और हर आदमी का हाथ हर दूसरे आदमी की जेब में और एक जेब में हजार हाथ हैं। और यह बढ़ता जा रहा है। यह कहां जाएगा, कहां टूटेगा, यह कब तक चल सकता है? यह एटम और हाइड्रोजन बम कहां से पैदा हो रहे हैं? प्रतियोगि ता से। प्रतिस्पर्धा से। वह प्रतिस्पर्धा चाहे दो आदमियों की हो, चाहे दो राष्ट्रों की हो, कोई फर्क थोड़े ही है। वह रूस की हो या अमरीका की हो कोई फर्क थोड़ी ही है। प्र तिस्पर्धा है, आगे होना है। अगर तुम एटम बम बनाते हो तो हम हाइड्रोजन बम मना ते हैं और यदि तुम हाइड्रोजन बनाओगे तो हम कुछ और बनाएंगे, सुपर हाइड्रोजन ब म बनाएंगे। लेकिन पीछे हम नहीं रह सकते। पीछे रहना हमें कभी सिखाया नहीं गया है। हमें आगे होना है। अगर तुम दस मारते हो तो हम बीस मारेंगे। अगर तुम एक मुल्क मिटाते हो तो हम दो मिटा देंगे। हम इस तक के लिए राजी हो सकते हैं क्यों

क हम पीछे रह सकते। यह कौन पैदा कर रहा है? यह सारी बात शिक्षा से आ रही है।

लेकिन हम अंधे हैं और हम यह देखते नहीं कि मामला क्या है। बच्चों को हम क्या सिखते हैं? उनको सिखाते हैं कि लोभी मत बनो, भयभीत मत बनो, लेकिन करते क्या है? हम पूरे वक्त लोभ सिखाते हैं, पूरे वक्त भय सिखाते हैं। पुराने जमाने में नर्क के भय थे, स्वर्ग के पुरस्कार का प्रलोभन था। वह हजारों साल तक सिखाया गया। पूरे प्राण ढीले कर दिए गए आदमी के। भय और लोभ के सिवाय उसमें कुछ नहीं बचा। भय है कि नर्क न चला जाऊं और लोभ है कि किसी भांति स्वर्ग चला जाऊं। हम भी यही करते हैं? हम बच्चों को या तो दंड देते हैं या पुरस्कार। हमारा सिखाने का रास्ता है भय या लाभ। या तो मारो और सिखाओ या फिर प्रलोभन दो कि हम देंगे— गोल्डमेडल देंगे, इज्जत देंगे, नौकरी देंगे, समाज में स्थान मिलेगा, ऊंचा पद देंगे, नवाब बना देंगे, तहसीलदार बना देंगे, तुम राष्ट्रपति हो जाओगे। ये प्रलोभन हैं और ये प्रलोभन हम छोटे छोटे बच्चों के मन में जगाते हैं। हमने कभी उनको सिखाया क्या कि तुम ऐसा जीवन बसर करना कि तुम शांत रहो, आनंदित रहो? नहीं, हमने सिखाया है कि तुम ऐसा जीवन बसर करना कि तुम ऊंची से ऊंची कुर्सी पर पहुंच जाओ। तुम्हारी तनख्वाह बहुत बड़ी हो जाए, तुम्हारे कपड़े अच्छे से अच्छे हो जाए। हमने उन्हें यही सिखाया है कि तुम लोभ को आगे से आगे खींचना, क्योंकि वही सफलता है और जो सफल है उसके लिए ही कोई स्थान है।

इस पूरी शिक्षा में असफल के लिए कोई स्थान नहीं है, असफल के लिए कोई जगह नहीं है। केवल सफलता की धुन और ज्वर हम पैदा करते हैं तो फिर स्वाभाविक है कि सारी दुनिया में जो सफल होना चाहता है वह जो बन सकता है, करता है। और सफलता आखिर में सब छिपा देती है। एक आदमी किस भांति चपरासी से राष्ट्रपति बनता है, एक दफा राष्ट्रपति बन जाए तो फिर कुछ पता नहीं चलता कि वह कैसे राष्ट्रपति बना, कौन सी तिकड़म से, कौन सी शरारत से, कौन सी बेईमानी से, कौन से झूठ से, किस भांति से पूछेगा, न पूछने का सवाल उठेगा। एक दफा सफलता आ जाए तो सब पाप छिप जाते हैं और समाप्त हो जाते हैं। सफलता एकमात्र सूत्र है। तो जब सफलता एकमात्र सूत्र है तो मैं झूठ बोलकर क्यों न सफल हो जाऊं? बेईमानी करके क्यों न सफल हो जाऊं? अगर सत्य बोलता हूं और असफल होता हूं, तो क्या करूं? तो हम एक तरफ सफलता को केंद्र बनाए हैं और जब झूठ बढ़ता है बेईमानी ब. ढती है तो परेशान होते हैं कि यह क्या मामला है।

जब तक सफलता एकमात्र केंद्र है, सारी कसौटी का एक मात्र मापदंड है, तब तक दुनिया में झूठ रहेगा, बेईमानी रहेगी, चोरी रहेगी, यह नहीं हट सकती। क्योंकि अगर चोरी सफलता मिलती है तो क्या किया जाए? अगर बेईमानी से सफलता मिलती है तो किया जाए? बेईमानी से बचा जाए कि सफलता छोड़ी जाए, क्या किया जाए? जब सफलता एकमात्र माप है, एकमात्र मूल्य है, एकमात्र वैल्यू है कि वह आदमी महान है जो सफल हो गया तो फिर बाकी सब बातें अपने आप गौण हो जाती हैं। फिर

रोते हैं हम, चिल्लाते हैं कि बेईमानी बढ़ रही है, यह हो रहा है, वह हो रहा है। यह सब बढ़ेगी, बढ़नी चाहिए। आप जो सिखा रहे हैं यह फल है उसका, पांच हजार साल से जो सिखा रहे हैं यह फल है उसका। सफलता कोई मूल्य नहीं है। सफल आदमी होना कोई बड़ी सम्मान की बात नहीं है। सफल नहीं सुफल होना चाहिए आदमी को, सफल नहीं सुफल। एक आदमी बुरे काम में सफल जो जाए, इससे बेहतर है कि एक आदमी भले काम में सफल हो जाए, इससे बेहतर है कि एक आदमी भले काम में असफल हो जाए। समन काम से होना चाहिए, सफलता से नहीं। लेकिन सफलता मूल्य है और सारा जीवन उसके केंद्र पर घूम रहा है।

एजुकेशन कमीशन बैठा था अभी। उसके चैयरमैन ने कहा कि हम अपने बच्चों को कहते हैं कि तुम सत्य बोला। सब तरह समझाते हैं लेकिन फिर कभी वे झूठ बोलते हैं। मैंने उनसे कहा कि क्या आप पसंद करेंगे कि आपका लड़का सड़क पर भंगी हो जाए, बोहारी लगाए या एक स्कूल में चपरासी हो जाए? पसंद करेंगे? या कि आपका दिल है कि लड़का भी आपकी तरह एजुकेशन कमीशन का चेयरमैन हो? हिंदुस्तान के बाहर राजदूत (अंबेसेडर) हो, धीरे धीरे चढ़े सीढ़ियां और ऊपर बैठ जाए और आखिर में भगवान हो जाए? क्या आप राजी हैं इस बात के लिए कि आपका लड़का सड़क पर बोहारी लगाए और आपको कोई तकलीफ न हो। उन्होंने कहा कि नहीं, तकलीफ तो होगी। तो मैंने कहा कि अगर तकलीफ होगी तो फिर आप लड़के से चाहते नहीं है कि वह सत्य बोले, ईमानदार हो।

जब तक चपरासी अपमानित है और राष्ट्रपति सम्मानित है तब तक दुनिया में ईमानदारी नहीं हो सकती क्योंकि चपरासी कैसे बैठा रहे चपरासी की जगह पर, और जिंदगी इतनी बड़ी नहीं है कि सत्य का सहारा लिए बैठा रहे। और असत्य सफलता लाता हो तो कौन पागल हो जो उसे छोड़ दे? और न केवल आप मानते हैं बल्कि मामले कुछ ऐसे हैं कि आपने जिसे भगवान को बनाया है, जिस स्वर्ग को, वह भी इन सफल लोगों को मानता है। चपरासी मरता है तो नर्क जाने की संभावना है, राष्ट्रपति कभी नर्क नहीं जाते सीधे स्वर्ग जाते हैं। यहां भी सिक्के यह लगाकर रखे हुए हैं कि वहां भी जो सफल है वही प्रवेश पाएगा। तो फिर क्या होगा?

सफलता का केंद्र खत्म करना होगा। अगर बच्चे से आपको प्रेम है और मनुष्य जाति के लिए आप कुछ करना चाहते हैं तो बच्चों के लिए सफलता के केंद्र को हटाइए, सुफलता के केंद्र को पैदा करिए। अगर मनुष्य जाति के लिए कोई भी आपके हृदय में प्रेम है और आप सच में चाहते हैं कि एक नयी दुनिया, एक नयी संस्कृति और एक नया आदमी पैदा हो जाए तो सारी पुरानी बेवकूफी छोड़नी पड़ेगी, जलानी पड़ेगी, और नष्ट करनी पड़ेगी और विचार करना पड़ेगा कि विद्रोह कैसे हो सकता है इसके भीतर से। सब गलत है इस लिए गलत आदमी पैदा होता है।

शिक्षक बुनियादी रूप से इस जगत में सबसे बड़ा विद्रोही व्यक्ति होना चाहिए तब वह पीढ़ियों को आगे ले जाएगा। लेकिन अभी तो शिक्षक सबसे बड़ा दकियानूस है, सबसे बड़ा ट्रेडिशनलिस्ट वही है, वही दोहराए जाता है पुराने कचड़े को। क्रांति शिक्षक में

होती नहीं है। आपने सुना है कि कोई शिक्षक क्रांति पूर्वक हो? शिक्षक सबसे ज्यादा द कियानूस, सबसे ज्यादा आर्थोडाक्स है, इसलिए शिक्षक सबसे खतरनाक है। समाज उस से हित नहीं पाता है, अहित पाता है। शिक्षक को होना चाहिए विद्रोही। कौन सा विद्र ोही? मकान में आग लगा दें आप, या कुछ और कर दें, या जाकर ट्रेन उल्टा दें या बसो में आग लगा दें आप, नहीं, मैं उनको विद्रोही नहीं कह रहा हूं, गलती से वैसा न समझ लें। मैं कह रहा हूं कि तुम्हारे जो मूल्य हैं, हमारे जो वैल्यूज हैं, उनके बाब त विद्रोह का रुख, विचार का रुख होना चाहिए कि वह यह मामला क्या है।

जब आप एक बच्चे को कहते हैं कि तुम गधे हो, तुम नासमझ हो, तुम बुद्धिहीन हो, देखो उस दूसरे को वह कितना आगे है, तब आप विचार करें कि यह कितने दूर त क ठीक है और कितने दूर तक सच है। क्या दुनिया में दो आदमी एक जैसे हो सकते हैं? क्या यह संभव हैं? क्या यह संभव है कि जिसको आप गधा कह रहे हैं वह वैसा हो जाएगा जैसा कि आगे खड़े है? क्या यह आज तक संभव हुआ है? हर आदमी जै सा है, अपने जैसा है, दूसरे आदमी से तुलना (कम्पेरीजन) का कोई सवाल ही नहीं है । किसी दूसरे आदमी से उसका कोई कम्पेरीजन नहीं, उसकी कोई तुलना नहीं। एक छोटा कंकड़ है वह छोटा कंकड़ है, एक बड़ा कंकड़ है वह बड़ा कंकड़ है। एक छोटा पौधा है वह छोटा पौधा है। एक बड़ा पौधा है वह बड़ा पौधा है। एक घास का फूल है वह घास का फूल है। एक गुलाब का फूल है वह गुलाब का फूल है।

प्रकृति का जहां तक संबंध है, घास के फूल पर प्रकृति नाराज नहीं है और गुलाब के फूल पर प्रसन्न नहीं है। घास के फूल को भी प्राण देती है उतनी ही खुशी से जितनी गुलाब के फूल को देती है। और मनुष्य को हटा दे तो घास के फूल और गुलाब के फूल में कौन छोटा है, कौन बड़ा है, कोई छोटा और बड़ा नहीं है। घास का तिनका और बड़े भारी चीड़ के दरख्त में दरख्त महान होता और यह घास का तिनका छोटा होता तो परमात्मा कभी का घास के तिनके को समाप्त कर देता चीड़ की ही चीड़ के दरख्त रह जाते दुनिया में। नहीं, लेकिन आदमी की वैल्यूज गलत हैं। जब तक दु निया में हम एक आदमी को दूसरे आदमी से तुलना (कम्पेयर) करेंगे तब तक हम ग लत रास्ते पर चलते रहेंगे। वह गलत रास्ता यह है कि हम हर आदमी में दूसरे आद मी जैसा बनने की इच्छा पैदा करते हैं। जब कि कोई आदमी न तो दूसरे जैसा बना है और न बन सकता है।

राम को मरे कितने दिन होगे, या क्राइस्ट को मरे कितने दिन हो गए? दूसरा क्राइस्ट क्यों नहीं बन पाता जबकि हजारों क्रिश्चियन कोशिश में चौबीस घंटे लगे हैं कि क्राइ स्ट बन जाए? हजारों राम बनने की कोशिश में हैं, हजारा महावीर, बुद्ध बनने की क ोशिश में हैं लेकिन एकाध दूसरा क्राइस्ट और दूसरा महावीर क्यों नहीं पैदा होता? क या इससे आंख नहीं खुल सकती आपकी? मैं रामलीला के रामों की बात नहीं कह र हा हूं जो रामलीला में बनते हैं राम। न, आप यह न समझ लें कि मैं उनकी चर्चा क र रहा हूं। वैसे तो कई लोग राम बन जाते हैं, कई लोग बुद्ध जैसे कपड़े लपेट लेते हैं और बुद्ध बन जाते हैं। कई लोग महावीर जैसे नंगे हो जाते हैं और महावीर बन जा

ते हैं। मैं उनकी बात नहीं कर रहा। वे सब रामलीला के राम हैं, उनको छोड़कर दूस
रा कोई राम पैदा क्यों नहीं होता है? यह आपको जिंदगी में भी पता चलता है कि ठ
ीक एक आदमी जैसा दूसरा आदमी नहीं हो सकता है। एक कंकड़ जैसा दूसरा कंकड़
भी पूरी पृथ्वी पर खोजना कठिन है--यहां हर चीज यूनीक है और हर चीज अद्वितीय
है। और जब तक हम प्रत्येक की अद्वितीय प्रतिभा को सम्मान नहीं देंगे तब तक दुनि
या में प्रतियोगिता रहेगी, प्रतिस्पर्धा रहेगी। तब तक दुनिया में मारकाट रहेगी, तब त
क दुनिया में हिंसा रहेगी, तक तक दुनिया में सब बेईमानी के उपाय से आदमी आगे
होना चाहेगा, दूसरे जैसा होना चाहेगा।
जब हर आदमी दूसरे जैसा होना चाहता है तो क्या फल होता है? फल यह होता है,
अगर एक बगीचे में सब फूलों का दिमाग फिर जाए या बड़े-बड़े आदर्शवादी नेता व
हां पहुंच जाए या बड़े-बड़े शिक्षा वहां पहुंच जाए और उनको समझाएं कि देखो, चमे
ली का फूल चंपा जैसा हो जाए, और चंपा का फूल जूही जैसा, क्योंकि देखो जुही कि
तनी सुंदर है और सब फूलों में पागलपन आ जाए, हालांकि, आ नहीं सकता। क्योंकि
आदमी जैसे पागल फूल नहीं है। आदमी से ज्यादा जड़ता उनमें नहीं है कि वे चक्कर
में पड़ जाए शिक्षकों के, उपदेशकों के, संन्यासियों के, आदर्शवादियों के साधुओं के;
इनके चक्कर में कोई फूल नहीं पड़ेगा। लेकिन फिर भी समझ लें और कल्पना कर लें
कि कोई आदमी जाए और समझाए उनको और वे चक्कर में आ जाए और चमेली
का फूल, चंपा का फूल होने की कोशिश में लग जाए तो क्या होगा उस बगिया में?
उस बगिया में फूल फिर पैदा नहीं हो सकते। उस बगिया में फिर पौधे मुरझा जाएंगे
मर जाएंगे। क्यों? क्योंकि चंपा लाख उपाय करे तो चमेली नहीं हो सकती, वह उसके
स्वभाव में नहीं है, वह उसके व्यक्तित्व में नहीं है, वह उसकी प्रकृति में नहीं है। च
मेली तो चंपा हो ही नहीं सकती। लेकिन क्या होगा, चमेली चंपा होने की कोशिश में
चमेली भी हो पाएगी। वह जो हो सकती थी उससे भी भी वंचित हो जाएगी। मनुष्य
के साथ यही दुर्भाग्य हुआ है। सबसे बड़ा दुर्भाग्य और अभिशाप जो मनुष्य के साथ हु
आ है वह यह कि हर आदमी किसी और जैसा होना चाह रहा है। लेकिन कौन सिखा
रहा है यह? यह षड्यंत्र कौन कर रहा है? यह हजार हजार साल से शिक्षा कर रह
ी है। वह कह रही है राम जैसे बनो, बुद्ध जैसे बनो। यह पुरानी तस्वीर अगर फीकी
पड़ गयी तो गांधी जैसे बनो, विनोबा जैसे बनो। किसी न किसी जैसा बनो लेकिन अप
ने जैसा बनने की भूल कभी न करना क्योंकि तुम तो बेकार पैदा हुए हो! असल में
तो गांधी ही मतलब से पैदा हुए और भगवान ने भूल की कि जो आपको पैदा किया!
अगर भगवान समझदार होता तो राम और बुद्ध जैसे कोई दस पंद्रह आदमी के टाइ
प पैदा कर देता दुनिया में। या कि बहुत ही समझदार होता, जैसा कि सभी धर्मों के
लोग बहुत ही समझदार होते हैं तो फिर एक ही टाइप पैदा कर देता। फिर क्या होत
ा? अगर दुनिया में समझ लें कि तीन अरब राम ही राम हैं तो कितनी देर चलेगी दु
निया? १५ मिनट में सारी दुनिया आत्मघात कर लेगी, इतनी बोरडम पैदा होगी। क
भी सोचा है कि सारी दुनिया में गुलाब ही गुलाब के फूल हो जाए और सारे पौधे गुल

ाब के फूल पैदा करने लगें तो क्या होगा? फूल देखने लायक भी नहीं रह जाएंगे। उन की तरफ आंख करने की भी जरूरत नहीं रह जाएगी।
यह व्यर्थ नहीं है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व होता है। यह गौरवशाली बात है कि आप किसी दूसरे जैसे नहीं हैं। यह कम्पेरीजन कि कोई ऊंचा है कोई नीचा है, नासमझी की बात है। कोई ऊंचा और नीचा नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति अपनी जगह है और प्रत्येक दूसरा व्यक्ति अपनी जगह। नीचे ऊंचे की बात गलत है। सब तरह का वैल्युएशन गलत है। लेकिन हम यह सिखाते रहे हैं। विद्रोह से मेरा मतलब है इस तरह की सारी बातों पर विचार, इस तरह की सारी बातों पर विवेक, इस तरह की एक एक बात को देखना कि मैं क्या सिखा रहा हूं इन बच्चों को। जहर तो नहीं पिला रहा हूं? बड़े प्रेम से भी जहर पिलाया जा सकता है और बड़े प्रेम से मां बाप और शिक्षक जहर पिलाते रहे हैं, लेकिन अब यह टूटना चाहिए।
दुनिया में अब तक धार्मिक क्रांतियां हुई। एक धर्म के लोग दूसरे धर्म के हो गए। कभी समझाने बुझाने से हुए कभी तलवार छाती पर रखने से हो गए लेकिन कोई फर्क नहीं पड़ा। हिंदू मुसलमान हो जाए तो वैसे का वैसा आदमी रहता है, मुसलमान ईसाई हो जाए तो वैसे का वैसा आदमी रहता है, कोई फर्क नहीं पड़ा धार्मिक क्रांतियों से। राजनैतिक क्रांतियां हुई हैं। एक सत्ताधारी बदल गया, दूसरा बैठ गया। कोई जो दूसरे की जमीन पर रहता था, वह बदल गया; जो पास की जमीन पर रहता था, वह बैठ गया। किसी की चमड़ी गोरी थी, वह हट गया। किसी की चमड़ी काली थी वह बैठ गया। भीतर का सत्ताधारी वही का वही है। आर्थिक क्रांतियां हो गयी है दुनिया में। मजदूर बैठ गए, पूंजीपति हट गए, लेकिन बैठने से मजदूर पूंजीपति हो गया। पूंजीपति चला गया तो उसकी जगह मैनेजर्स (व्यवस्थापक) आ गए। वह भी उतने ही दुष्ट और खतरनाक हो गए, कोई फर्क नहीं पड़ा। वर्ग बने रहे। पहले वर्ग थे—जिसके धन वितरित किया जाता है एक वह, और जो दूसरा है सत्ताहीन, वह जो सत्ता में नहीं है। नए गए बन गए लेकिन वर्ग भेद कायम रहा।
इन चार पांच हजार वर्षों में जितने प्रयोग हुए हैं मनुष्य के कल्याण के लिए वे सब असफल हो गए। अभी तक एक ही प्रयोग नहीं हुआ है और वह है शिक्षा में क्रांति। यह प्रयोग शिक्षक के ऊपर है कि वह करे और मुझे लगता है यही सबसे बड़ी क्रांति हो सकती है राजनीति, आर्थिक या धार्मिक कोई क्रांति का इतना मूल्य नहीं जितना शिक्षा में क्रांति का मूल्य है। लेकिन शिक्षा में क्रांति कौन करेगा? वे विद्रोही लोग कर सकते हैं जो सोचें, विचार करें कि हम यह क्या कर रहे हैं, और इतना तय समझें कि जो भी अभी आप कर रहे हैं वह जरूर गलत है क्योंकि उसका परिणाम गलत है। यह जो मनुष्य पैदा हो रहा है, यह जो समाज बन रहा है, यह जो युद्ध हो रहे हैं, यह जो सारी हिंसा चल रही है यह जो इतनी पीड़ा, दीनता और दरिद्रता है, यह सब कहां से आ रहे हैं? जरूर हम जो शिक्षा दे रहे हैं उसमें कुछ बुनियादी भूल है। तो इस पर विचार करें और जागे लेकिन आप तो कुछ और हिसाब में पड़े रहते होंगे। शिक्षकों के सम्मेलन होते हैं तो वे विचार करते हैं कि विद्यार्थी बड़े अनुशासनहीन हो

गए, इनको डिस्सीप्लिन में कैसे लाया जाए। कृपा करें, इनको पूरी तरह अनुशासनहीन हो जाने दें, क्योंकि आपकी डिस्सीप्लिन का परिणाम क्या हुआ है, पांच हजार साल में? हजारों साल से तो डिस्सीप्लिन में थे, क्या हुआ उससे?

और अनुशासन सिखाने का मतलब क्या है? मतलब है कि हम जो कहें उसको ठीक मानो। हम ऊपर बैठे तो तुम नीचे बैठो, हम जब निकलें तो दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करो या और ज्यादा डिस्सीप्लिन हो तो पैर छुआ और हम जो कहें उस पर शक मत करो। या हम जिधर कहें उधर जाओ, हम कहें बैठो तो बैठ जाओ, हम कहें उठो तो उठ जाओ। यह डिस्सीप्लिन है या डिस्पीप्लिन के नाम पर आदमियों को मारने की करतूत है! कोशिश है कि उसके भीतर कोई चैतन्य न रह जाए, उसके भीतर कोई होश न रह जाए, उसके भीतर कोई विवेक और विचार न रह जाए।

मिलिट्री में क्या करते हैं? एक आदमी को तीन चार साल तक कवायद करवाते हैं, लेफ्ट राइट करवाते हैं। कितने बेवकूफी की बातें हैं कि एक आदमी से कहो घूमो, दाएं घूमो। घुमाते रहो तीन चार साल तक, उसकी बुद्धि नष्ट हो जाएगी। एक आदमी को दाएं बाएं घुमाओगे तो क्या होगा? कितनी देर तक उसकी बुद्धि स्थिर रहेगी। उससे कहो बैठो, उससे कहो खड़े रहो, दौड़ो और जरा इनकार करे तो मारो। तीन चार साल में उसकी बुद्धि क्षीण हो जाएंगी, उसकी मनुष्यता मर जाएगी, उससे कहो राइट टर्न तो वह मशीन की तरह घूमता है, कहो बंदूक चलाओ तो वह मशीन की तरह बंदूक चलाता है। उससे कहो मारो तो वह आदमी को मारता है। वह आदमी नहीं रह गया, वह मशीन हो गया। यह डिस्सीप्लिन है और यह हम चाहते हैं कि बच्चों में भी हो। बच्चों में मिल्ट्रीलाइजेशन हो, उनको एन. सी. सी. सिखाओ, मार डालो दुनिया को! सैनिक शिक्षा दो, बंदूक पकड़वाओ, लेफ्ट राइट करवाओ, मारो दुनिया को। पांच हजार साल में मैं नहीं समझता कि आदमी को कोई समझ आयी हो कि इन चीजों के मतलब क्या हैं। डिस्सीप्लिन से आदमी डैड (मृत) होता है। जितना अनुशासित आदमी होगा उतना मुर्दा होगा।

तो क्या मैं यह कह रहा हूं कि लड़कों से कहो कि विद्रोह करो, दौड़ो कूदो क्लास में, पढ़ाने मत दो? नहीं, यह नहीं कह रहा हूं। यह कह रहा हूं कि आप प्रेम करा बच्चों से, बच्चों के हित, भविष्य की मंगलकामना करो। उस प्रेम से, उस मंगलकामना अनुशासन आना शुरू होता है। फिर वह थोपा हुआ नहीं है, वह बच्चों के विवेक से पैदा होता है। एक बच्चे को प्रेम करो और देखो कि वह प्रेम उसमें अनुशासन लाता है। अनुशासन फिर उसकी आत्मा से जगता है, दिल की ध्वनि से जगता है, थोपा नहीं जाता है, उसके भीतर से आता है। उसके विवेक को जगाओ, उसके विचार को जगाओ, उसे बुद्धिहीन मत बनाओ। उससे यह यह मत कहो कि हम जो कहते हैं वही सत्य है। सत्य का पता है आपको? लेकिन आदमी कहता है कि मैं जो कहता हूं वह सत्य है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है कि आप तीन साल पहले पैदा हुए और वह तीस साल पीछे तो इससे आप सत्य के जानकार हो गए और वह सत्य का जानकार न रहा। जितना अज्ञान आपमें हो उससे शायद कम अज्ञान में वह हो क्योंकि अभी वह कुछ

भी नहीं जानता है और आप न मालूम कौन कौन सी नासमझी, न मालूम क्या क्या नानसेंस जानते हज, लेकिन आप ज्ञानी हैं क्योंकि आपकी तीस साल उम्र ज्यादा है! आपके हाथ में डंडा है इसलिए आप उसको डिस्सीप्लिन करना चाहते हैं। डिस्सीप्लिन न कोई इसी को करे तो दुनिया बेहतर हो सकती है। प्रेम करें, प्रेम आपको सहायक है। आप प्रेमपूर्ण जीवन जिए। आप मंगलकामना करें उसके हित की, सोचें उसके हित के लिए कि क्या हो सकता है और वह प्रेम, वह मंगलकामना असंभव है कि उसके भीतर अनुशासन न ला दे, आदर न लादे। फर्क होगा। अभी जो जितना चैतन्य बच्चा है वह उतना ही ज्यादा इनडिस्सीप्लिन में होगा जो जितना ईडियट है, जड़ बुद्धि है वह उतना डिस्सीप्लिन में होगा। जिस बात को मैं कह रहा हूं अगर प्रेम के माध्यम से अनुशासन आए तो जितने ईडियट हैं उनमें कोई अनुशासन पैदा नहीं होगा। लेकिन जो जितना चैतन्य है उसमें उतना ही ज्यादा अनुशासन पैदा होगा। अभी अनुशासन में वह है जो डल है, जिसमें कोई जीवन हनीं है, स्फुरणा नहीं है। अभी वह अनुशासनह ीन है जिसमें चैतन्य है, विचार है। अगर प्रेम हो तो वह अनुशासन बुद्ध होगा जिसमें विचार है और चैतन्य है और वह अनुशासन होगा जो जड़ है। जड़ता के अनुशासन क ा कोई मूल्य नहीं है। चैतन्य पूर्वक जो अनुशासन है उसका मूल्य है क्योंकि चैतन्य पूर्व क अनुशासन का अर्थ यह होता है कि वह विचारपूर्ण अनुशासन में है और आप गलत अनुशासन की मांग करेंगे तो वह इनकार कर देगा।

अगर हिंदुस्तान पाकिस्तान के युवक विवेकपूर्वक अनुशासन में हो तो क्या यह संभव है कि पाकिस्तान की हुकूमत उनसे कहे कि जाओ हिंदुस्तान के लोगों को मारो तो वे बंदूकें उठा लें और युद्ध के मैदान पर चले जाए? या हिंदुस्तान के युवक, अगर अनुश ासन में विवेकपूर्वक हो तो क्या यह संभव हैं कि कोई राजनीतिज्ञ उनसे कहे कि जाअ ो और पाकिस्तान के लोगों को मरो? वह कहेंगे कि यह बेवकूफी की बातें बंद करो।ह म समझते हैं कि क्या विवेकपूर्वक है, यह हम नहीं कर सकते। लेकिन अभी तो जड़बु द्धि को अनुशासन सिखाया गया है। उनसे कहो मारो फिर वे बिलकुल ही नहीं देखते, क्योंकि उनके लिए अनुशासन ही सत्य है, वे उसको ही मानते हैं। दुनिया में राजनीि तज्ञों ने धर्म के पुरोहितों ने खूब शिक्षा दी है कि अनुशासन होना चाहिए। क्योंकि अनु शासित आदमी में कोई विवेक नहीं होता, कोई विद्रोह नहीं होता, कोई विचार नहीं होता। उनकी तो पूरी कोशिश है कि सारी दुनिया मिल्ट्री कैम्प हो जाए। कोई आदमी कोई गड़बड़ न करे, यह कोशिश चल रही है हजार हजार ढंग से।

शायद आपको पता न हो। अब बहुत से रास्ते अख्यिार किए गए हैं। अब रूसवालों ने माइंड वाश निकाल लिया है, एक मशीन बना ली है। जिस आदमी के दिमाग में विद्रो ह होगा, विचार होगा उसके दिमाग को वह मशीन द्वारा साफ कर देंगे, उसके विचार को खत्म कर देंगे। क्योंकि विद्रोही आदमी खतरनाक है, वह हुकूमत के खिलाफ बो ल सकता है, लोगों को भड़का सकता है कि यह गलत है, यह जो व्यवस्था है गलत है। इसलिए उसके दिमाग को ठंडा ही कर देंगे। पहले अनुशासन की तरकीब चलती थी, वह पूरी तरह कारगर न हुई। फिर भी कुछ विद्रोह पैदा हो जाते थे। अब उन्होंने

नई तरकीब निकाली है कि जिस बच्चे के दिमाग में भी शक शुबहा हो वह उसके ि दमाग को ठीक कर देगी। ये बड़े खतरनाक मामले हैं जो सारी दुनिया में चल रहे हैं। एटम बम और हाइड्रोजन बम से भी ज्यादा खतरनाक ईजाद यह है।
लेकिन क्या शिक्षक इसमें सहयोगी होगा? मैं इस प्रश्न पर ही चर्चा को आप पर छोड़ ना चाहूंगा कि क्या आप इस दुनिया से सहमत हैं? इस मनुष्य से सहमत हैं जैसा आ ज आदमी है? इस युद्धों से, हिंसा से, बेईमानी से सहमत हैं? यदि नहीं तो पुनर्विचार करिए, आपकी शिक्षा में कहीं कोई बुनियादी भूल हैं। आप जो देर हे हैं वह गलत है । शिक्षक ज्यादा विद्रोही हो विवेक और विचारपूर्ण उसकी जीवनदृष्टि हो तो वह समा ज के लिए हितकर है, भविष्य में नये से नये समाज पैदा होने में सहयोगी है। और अ गर वह यह नहीं है तो वह केवल पुराने मुर्दों को नए बच्चों के दिमाग में भरने के क ाम के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर रहा है। इसी काम को वह पहले से करता चला आया है। लेकिन अब एक क्रांति होनी चाहिए, एक बड़ी क्रांति होनी चाहिए कि शि क्षा का मामूली ढांचा तोड़ दिया जाए और एक नया ढांचा पैदा किया जाए और उस नये ढांचे के मूल्य अलग हों। सफलता उसका मूल्य न हो, महत्वाकांक्षा उसका मूल्य न हो, आगे और पीछे होना सम्मान-अपमान की बात न हो। एक व्यक्ति की दूसरे व्य क्ति से कोई तुलना न हो। प्रेम हो, प्रेम से बच्चों के विकास की चेष्टा हो। यह हो स के तो एक नई, बिलकुल सुवास से भरी अदभुत दुनिया पैदा की जा सकती है।
यह थोड़ी सी बातें मैंने आपसे कहीं इस खयाल से कि कहीं कोई नींद में हो तो थोड़ा बहुतों जागे। लेकिन कई लोगों की नींद इतनी गहरी होती है कि वह केवल यही स मझ रहे होंगे कि मैं क्या गड़बड़ कर रहा हूं, नींद सब खराब किए दे रहा हूं, लेकिन अगर थोड़ा बहुत भी जागें, थोड़ा बहुत भी आंख खोलकर देखें तो जो मैंने कहा है शायद उसमें से कोई बात उपयोगी और ठीक लगे।
यह मैं नहीं कहता हूं कि मैंने जो कहा है वह सच है, और ठीक है क्योंकि वह तो पु राना शिक्षक कहता है। यह तो आप कहते हैं। मैं तो यह कह रहा हूं कि मैंने अपनी दृष्टि आपको बतायी, वह बिलकुल ही गलत भी हो सकती है। हो सकता है उसमें क ण मात्र भी सत्य न हो; इसलिए यह नहीं कह रहा हूं कि मैंने जो कहा है उस पर ि वश्वास कर लें। मैं कहता हूं, उस पर विचार करना है। थोड़ा सा विचार करना और उसमें से कुछ ठीक तो वह मेरी बात नहीं होगी, आपका अपना विचार होगा, उस कारण आप मेरे अनुयायी नहीं बन जाएंगे। उस कारण अपने मेरी बात स्वीकार की ऐ सा समझने की कोई जरूरत नहीं क्योंकि वह आप अपने विवेक से जाने और पहचाने हैं वह बात आपकी बन गयी है।
यह थोड़ी सी बातें कहीं ताकि आप कुछ विचार करें। दुनिया में इस वक्त बहुत धक्क ा देने की जरूरत है ताकि कुछ विचार पैदा हो सकें। क्योंकि हम करीब करीब सो ग ए हैं, करीब करीब मर ही गए हैं और सब चला जा रहा है। भगवा करे थोड़ा धक्का कई तरफ से लगे और आप आंख खोलें और थोड़ा बहुत सोचें। शिक्षक के सबसे बड़ ी जिम्मेवारी है। राजनीतिज्ञों से बचें, राष्ट्रपतियों से, प्रधान मंत्रियों से बचें। इस नास

मझी की वजह से तो इस दुनिया में सारी परेशानी है, इसी पोलिटीसिशन की वजह से सारे उपद्रव हैं। इससे बचें और बच्चों में पोलिटीशियन पैदा न होने दें। लेकिन अभी आप एम्बीशन के द्वारा वह पैदा कर रहे हैं। नंबर एक आओ। फिर आगे क्या होगा? आगे कहां जाइएगा? फिर नंबर एक तो पालिटिक्स में ही आ सकते हैं और कोई तो आता नहीं। और किसी के तो अखबार में फोटो नहीं छापते। नंबर एक तो वहीं आ सकते हैं और वह वहीं आएंगे।

तो कृपा करें और बच्चों में प्रतिस्पर्धा पैदा न होने दें। प्रेम जगाए जीवन के प्रति आनंद जगाए--प्रतियोगिता नहीं, प्रतिस्पर्धा नहीं। क्योंकि जो दूसरे से जूझता है वह धीरे धीरे जूझने में ही समाप्त हो जाता है। और जो अपने आनंद को खोजता है, दूसरे से प्रतियोगिता को नहीं, उसका जीवन एक अदभुत फूल की भांति जो जाता है, जिसमें सुवास होती है, सौंदर्य होता है। परमात्मा करे, यह बुद्धि आप में आए, परमात्मा करे यह विद्रोह आपमें आए।

नारी और क्रांति

मनुष्य के इतिहास में नारी जाति के साथ जो अत्याचार और अनाचार हुआ है उसके परिणाम में पूरी मनुष्य जाति के जो अहित हैं, उस संबंध में थोड़ी बात कहना चाहता हूं।

मनुष्य की पूरी जाति, मनुष्य का पूरा जीवन, मनुष्य की पूरी सभ्यता और संस्कृति अधूरी है क्योंकि नारी ने उस संस्कृति के निर्माण में कोई भी दान, कोई भी कंट्रीब्यूशन नहीं किया। नारी कर भी नहीं सकती थी। पुरुष ने उसे करने का कोई मौका भी नहीं दिया। हजारों वर्षों तक स्त्री पुरुष से नीची, छोटी और हीन समझी जाती रही है। कुछ और देश ऐसे थे जैसे चीन में हजारों वर्ष तक यह माना जाता रहा कि स्त्रियों के भीतर कोई आत्मा नहीं होती। इतना ही नहीं, स्त्रियों की गिनती जड़ पदार्थों के साथ की जाती थी। आज से सौ बरस पहले चीजन में अपनी पत्नी की हत्या कर किसी पुरुष को, किसी पति को कोई भी दंड नहीं दिया जाता था क्योंकि पत्नी उसकी संपदा थी। वह उसे जीवित रखे या मार डाले, इससे कानून का और राज्य का कोई संबंध नहीं।

भारत में भी स्त्री को पुरुष के सम्मान में, पुरुषों की समानता में कोई अवसर और जीने का मौका नहीं मिला। पश्चिम में भी वही बात थी। चूंकि सारे शास्त्र, सारी सभ्यता और सारी शिक्षा पुरुषों ने निर्मित की है इसलिए पुरुषों ने अपने आप को बिना किसी से पूछे श्रेष्ठ मान लिया है। स्वभावतः : इसके घातक परिणाम हुए। सबसे बड़ा घातक परिणाम तो यह हुआ कि स्त्रियों के जो गुण थे वे सभ्यता के विकास में सहयोगी न हो सके। सभ्यता अकेले पुरुषों ने विकसित की। और अकेले पुरुष के हाथ से जो सभ्यता विकसित होगी उसका अंतिम परिणाम युद्ध के सिवाय और कुछ भी नहीं हो सकता। अकेले पुरुष के गुणों पर जो जीवन निर्मित होगा वह जीवन हिंसा के अतिरिक्त और कहीं नहीं ले जा सकता। पुरुषों की प्रवृत्ति में, पुरुष के चित्त में ही हिंसा का, क्रोध का, युद्ध का कोई अनिवार्य हिस्सा है।

नीत्से आज से कुछ ही बीसी पहले यह घोषणा की कि बुद्धि और क्राइस्ट स्त्रैण रहे हों गे क्योंकि उन्होंने करुणा और प्रेम की इतनी बातें कही हैं, वे बातों पुरुषों के गुण नह ीं हैं। नीत्से ने क्राइस्ट को और बुद्ध को स्त्रैण, स्त्रियों जैसा कहा है। एक अर्थ में शाय द उसने ठीक ही बात ही है वह इस अर्थ में कि जीवन में जो भी गुण है, जीवन में जो भी माधुर्य से भरे सौंदर्य, शिव की कल्पना और भावना है वह स्त्री का अनिवार्य स्वभाव है। मनुष्य की सभ्यता माधुर्य, प्रेम और सौंदर्य से नहीं भर सकी। वह क्रूर और पुरुष हो गयी, कठोर और हिंसक हो गयी और अंतिम परिणामों में केवल युद्ध लाती रही।

इसके पीछे दो बात का ही हाथ है। एक तो स्त्री के गुणों को कोई समन नहीं दिया ग या और दूसरी स्त्री ने कभी अपने गुणों को विकसित करने की कोई चेष्टा और कोई सक्रिय उपाय नहीं किया। यह जानकर आपको हैरानी होगी, अगर कोई स्त्री पुरुषों के गुणों में आगे हो जाए तो उसे जोन आफ आर्क या रानी लक्ष्मी बाई कहते हैं और सारे जगत में प्रशंसा होती है कि वह रानी लक्ष्मी बाई जैसी बहुत बहादुर, सम्मान यो ग्य स्त्री है। लेकिन क्या कभी आपने यह सुना है कि कोई पुरुष स्त्रियों के गुणों में वि कसित हो जाए तो उसका कभी कोई सम्मान हुआ हो? अगर कोई पुरुष स्त्रियों जैसा प्रतीत हो तो उसका अपमान होगा और कोई स्त्री पुरुष जैसी प्रतीत हो तो उसका सम्मान होगा और चोर रास्तों के ऊपर उसकी मूर्तियां खड़ी की जाएंगी। पुरुषों ने अप ने गुणों को अनिवार्य रूप से स्वीकार कर लिया है और स्त्रियों ने भी इस पर स्वीकृति दे दी, यह बहुत आश्चर्य की बात है। स्त्रियों ने कभी सोचा भी नहीं कि उनके व्यक्ति तत्व की भी अपनी कोई गरिमा, अपना कोई स्थान, अपनी कोई प्रतिष्ठा है। इस तीन चार हजार बरस की गुलामी के बाद एक विद्रोह, एक प्रतिक्रिया, एक रीएक्शन पैदा होना शुरू हुआ और स्त्रियों ने यह घोषणा करनी शुरू कर दी कि हम पुरुषों के समा न हैं और बराबर है हैसियत और अधिकार मांगती हैं। लेकिन फिर दोबारा भूल हुई जा रही है जिसका आपको शायद पता न हो। उस भूल के संबंध में भी समझ लेना जरूरी है।

मैं कहना चाहता हूं कि स्त्रियां न तो पुरुषों से हीन हैं और न समान हैं। स्त्रियां पुरुषों से भिन्न हैं, वे बिलकुल भिन्न हैं। न उनके नीचे होने का सवाल है, न उनके समान होने का सवाल हैं, स्त्रियां पुरुषों से बिलकुल भिन्न हैं और जब तक स्त्रियां अपनी भि न्नता की भाषा में, अपने अलग व्यक्ति की भाषा में सोचना शुरू नहीं करेंगी तब तक तो वे पुरुष की दास होंगी या पुरुष की अनुयायी होंगी और दोनों स्थितियां खतरना क हैं। पश्चिम में स्त्रियों ने एक बगावत की है, एक विद्रोह किया है और परिणाम य ह हुआ है कि स्त्रियां पुरुषों जैसे होने को दौड़ में, होड़ में पड़ गयी। जो पुरुष करते हैं और जैसे पुरुष हैं वैसे ही स्त्रियों को भी होना जाना चाहिए। जो शिक्षा पुरुषों को मि लती है वही स्त्रियों को भी मिलनी चाहिए। अगर पुरुष युद्ध के मैदान में लड़ने जाते हैं तो स्त्रियों को भी युद्ध के ऊपर सैनिक बनकर उपस्थित होना चाहिए। इस बात क ी कल्पना भी नहीं है आपको कि पुरुषों की नकल में स्त्रियां हमेशा द्वितीय कोटि की

होंगी, प्रथम कोटि की कभी भी नहीं हो सकता। क्योंकि जिन गुणों मग वे प्रतिस्पर्धा करने जा रही हैं वे पुरुषों के लिए सहज गुण हैं और स्त्रियों के लिए असहज धर्म। ऐसे स्थिति में स्त्रियां एकदम कुरूप, अपने स्वभाव से च्युत, जो हो सकती थीं उससे वंचित हो जाएगी और परिणाम बड़े घातक होंगे जिनके हमें कोई धारणा नहीं, कोई सपना भी नहीं।

जो शिक्षा पुरुषों को मिलती है वही शिक्षा स्त्रियों को देना अत्यंत खतरनाक है, एकदम गलत है। उचित है कि पुरुष गणित सीखे, विज्ञान सीखे लेकिन बहुत उचित होगा कि स्त्री कुछ और सीखे जो पुरुष नहीं सीखता। उसे जीवन में कुछ और करना है। उसके ऊपर जीवन ने कोई और दायित्व दिया है, कोई दूसरी रिस्पोंसबिलिटी है उसके ऊपर। उसके ऊपर प्रेम का, सृजन का कोई दूसरा भार है। गणित सीख लेने से दूकानें चल सकती होंगी, बच्चे नहीं बड़े किए जा सकते। साइंस से फैक्टरी चलती होगी लेकिन परिवार नहीं चल सकते और परिणाम यह हुआ है कि स्त्री को पुरुष जैसी दीक्षा, शिक्षा और समानता के भाव ने स्त्रियों से जो भी उनका महत्वपूर्ण गुण था। वह सब छीन लिया है। उनके जीवन में जो भी गौरवपूर्ण गुण था वह सब छीन लिया है। उनके जीवन में जो भी गौरवपूर्ण मातृत्व और पत्नीत्व था वह सब छीन लिया है। उनके भीतर जो भी स्त्रैण था। वह सब नष्ट किया जा रहा है। वे करीब करीब पुरुष की शकल में निर्मित की जा रही हैं और इससे वे बहुत प्रसन्न भी मालूम होती हैं। इस प्रसन्नता के लिए हजार हजार आंसू जा आज नहीं कल स्त्रियों को बहाने ही पड़ेंगी।

शायद हमें इस बात का खयाल नहीं कि स्त्री और पुरुष के चित्त में बुनियादी भेद और भिन्नता है और यह भिन्नता अर्थपूर्ण है। पुरुष और स्त्री का सारा आकर्षण उसी भिन्नता पर निर्भर है। वे जितने भिन्न हों, वे जितने दूर हों, उनके भीतर पोलेरिटी हो, उत्तर और दक्षिण ध्रुवों की तरह उनमें जितनी भिन्नता हो उतनी ही उनके बीच कशिश और आकर्षण (ग्रेविटेशन) होगा। उतना ही उनके बीच प्रेम का जन्म होगा। जितना उनका फासला हो, उनकी भिन्नता हो, जितने उनके व्यक्ति अनूठे और अलग हों, जितने वे एक दूसरे जैसा नहीं बल्कि एक दूसरे के परिपूर्वक (कम्प्लीमेंटरी हों। अगर पुरुष गणित जानता हो और स्त्री भी गणित जानती हो तो ये दोनों बातें उन्हें निकट नहीं लातीं। ये बातें उन्हें दूर ले जाएंगी। अगर पुरुष गणित जानता हो और स्त्री काव्य जानती हो, संगीत जानती हो, नृत्य जानती हो, तो वे ज्यादा निकट आएंगे, वे जीवन में ज्यादा गहरे साथी बन सकते हैं और जब एक स्त्री पुरुषों जैसी दीक्षित हो जाती है तो ज्यादा से ज्यादा वह पुरुष को स्त्री होने का साथ भर दे सकती है लेकिन उसके हृदय के उस अभाव को, जो स्त्री के लिए प्यास और प्रेम से भरा होता है, पूरा नहीं कर सकती।

पश्चिम में परिवार टूट रहा है, भारत में भी परिवार टूटेगा और परिवार टूटने के पीछे आर्थिक कारण उतने नहीं हैं जितना स्त्रियों का पुरुषों जैसा शिक्षित किया जाना है। पुरुष की भांति शिक्षित होकर स्त्री एक नकली पुरुष बन जाती है असली स्त्री नहीं बन पाती। लेकिन हमें भिन्नता का कोई खयाल नहीं है और भिन्न शिक्षा दीक्षा का हमें

कोई विचार नहीं है। यह बात जगत की सारी स्त्रियों को कह देने जैसी है—उन्हें अप
ने स्त्री होने को बचाना है। कल तक पुरुषों ने उन्हें हीन समझा था, नाचा समझा था
और इसलिए नुकसान पहुंचा था। आज अगर पुरुष राजी हो जाएगा कि तुम हमारे स
मान हो, तुम हमारी दौड़ में सम्मिलित हो जाओ तो इस दौड़ में स्त्रियां कहां पहुंचेगी
? सवाल यही नहीं है कि स्त्रियों को नुकसान होगा, सवाल यह है कि पूरा जीवन नष्
ट होगा।

पश्चिम के एक विचारक सी. एम. जोड़ ने एक बड़ी अदभुत बात लिखी। उसने लिखा
कि जब मैं पैदा हुआ था तो मेरे देश में घर थे, होम्स थे लेकिन अब जब मैं बूढ़ा हो
कर मर रहा हूं तो मेरे देश में हो जैसी कोई चीज नहीं है, घर जैसी कोई चीज नहीं
है, केवल मकान, केवल हाउसेस रह गए हैं। होम और हाउस में कुछ फर्क है? घर
और मकान में कोई भेद है? होटल में और घर में कोई फर्क है? अगर कोई भी फर्क
है तो वह सारा फर्क स्त्री के ऊपर निर्भर है और किसी पर निर्भर है और किसी पर
निर्भर नहीं है। हाउस होम बन सकता है, एक मकान घर बन जाता है अगर उसके
बीच में केंद्र पर कोई स्त्री हो। लेकिन स्त्री अगर पुरुष जैसी हो जाती है तो घर में म
कान रह जाता है, घर निर्मित नहीं हो पाता। दो साथ रहनेवाले होते हैं लेकिन पति
और पत्नी नहीं होते। बच्चे पैदा होते हैं लेकिन नर्स और बच्चे का संबंध होता है, मां
और बेटे का संबंध नहीं होता। क्योंकि वह स्त्री थी, जो मां बन सकती थी उसके वि
कास के लिए हमने कुछ भी नहीं किया है।

हमारे स्कूल और कालेज क्या सिखाते हैं? स्त्रियों के लिए क्या दे रहे हैं? वे ही उपा
धियां दे रहे हैं जो बरसों से दी जा रही हैं। वे उन्हीं परीक्षाओं में से उन्हें निकाल रहे
हैं जिनमें से पुरुषों को निकाला जा रहा है। वे उसी भांति की कवायद, उसी भांति के
खेल खिला रहे हैं स्त्रियों को जो पुरुष खेल रहे हैं। और बड़े आश्चर्य की बात है इस
सदी में, जब कि हम मनुष्य के शरीरशास्त्र,फिजियोलाजी के संबंध में बहुत कुछ जा
नते हैं, हमें इतना भी पता नहीं है कि एक ही कवायद, एक ही कसरत (एक्सरसाइ
ज) पुरुष और स्त्री दोनों को नहीं करवायी जा सकती है। स्त्री के शरीर के नियम, स्
त्री के शरीर की बनावट बहुत भिन्न है। उसे अगर वही कवायद करवायी जाती है औ
र उसे भी एन. सी. सी. में वही लेफ्ट-राइट करवाया जाता है जो पुरुष सैनिक सीख
रहे हैं तो हम स्त्री के भीतर किसी बुनियादी तत्व को तोड़ देंगे जिसका हमें कोई पत
ा नहीं, जिसका हमें खयाल ही नहीं है।

अतीत के लोग नासमझ नहीं थे। पुरुषों के लिए उन्होंने व्यायाम खोजे, स्त्रियों के लिए
नृत्य खोजा। कोई अर्थ था, कोई कारण था। नृत्य में एक रिदम है, नृत्य में एक ल
ययुक्तता है जो स्त्रियों के शरीर के हार्मोन्स को, उनके शरीर के रासायनिक तत्वों क
ो एक और तरह की गतिमयता और संगीत से भरते हैं। कवायद बात दूसरी है। कवा
यद के अर्थ और प्रयोजन भिन्न हैं। कवायद मनुष्य के भीतर जो क्रोध है उसे सजग क
रती है, मनुष्य के भीतर जो लड़ने की प्रवृत्ति है उसे तीव्र करती है। मनुष्य के भीतर
जो दूसरे के साथ हिंसा होने का भाव है उसे मजबूत करती है, बलवान करती है।

कवायद अगर स्त्रियों को सिखायी गयी तो घर नष्ट हो जाने वाले हैं इसका हमें कोई खयाल ही नहीं। हम उनके पूरे शरीर को नुकसान पहुंचा रहे हैं। यहां तक आप हैरान होंगी, जिन मुल्कों में स्त्रियों को पुरुषों जैसा सौंदर्य शिक्षा दी जा रही है वहां जवान लड़कियों को भी होंठों पर मूंछ आनी शुरू हो जाती है। यह बहुत आसान है, कठिन नहीं है। अगर ठीक पुरुषों जैसी कवायद करवायी जाए बच्चियों को तो उनके होंठों पर मूंछों के बाल आने शुरू हो जाएंगे। शरीर के हार्मोन्स अलग तरह के काम करना शुरू करते हैं और शरीर की जो व्यवस्था है वह अलग तरह के काम करती है। छोटी-छोटी बात से फर्क पड़ता है। स्त्रियों के शरीर को भी हम पुरुषों के जैसे ढालने की कोशिश कर रहे हैं और अब तो हम पुरुषों जैसे कपड़े पहनाने की भी सारी दुनिया में व्यवस्था कर रहे हैं। शायद हमें इस बात का कोई भी विचार नहीं है कि जीवन की छोटी-छोटी बात सारे जीवन को प्रभावित करती है।

पूर्व के लोग ढीले कपड़े पहनते रहे हैं, पश्चिम के लोग चुस्त कपड़े पहनते रहे हैं। चुस्त कपड़े आदमी को लड़ने को तत्पर बनाते हैं, ढीले कपड़े आदमी को शांत करते हैं, मौन करते हैं। आज तक दुनिया में किन्हीं साधुओं की किसी भी परंपरा ने चुस्त कपड़े नहीं पहने। यह ऐसे ही व्यर्थ नहीं था। ढीला कपड़ा व्यक्तित्व को एक शिथिलता और शांति देता है, कसे हुए कपड़े व्यक्तित्व को एक तेजी और चुस्ती देते हैं। इसलिए हम सैनिकों और नौकरों को चुस्त कपड़े पहनाते हैं लेकिन मालिक दुनिया में कभी चुस्त कपड़े नहीं पहनते हैं। अगर आप चुस्त कपड़े पहनी हुई सीढ़ियां चढ़ती हों तो आप दो सीढ़ियां एक साथ छलांग लगा जाएंगी। आपको पता भी नहीं चलेगा कि कपड़े आपको दो सीढ़ी इकट्ठे चढ़वा रहे हैं। अगर आप ढीले कपड़े पहनी हुई हैं तो आप एक गरिमा से, एक डिग्निटी से सीढ़ियों को पार करेंगी और चढ़ेंगी। स्त्रियों के कपड़े पुरुषों जैसे कभी भी नहीं होने चाहिए।

स्त्रियों के जीवन में हम कुछ और अपेक्षा किए हुए हैं। उनसे घर में भी एक शांत वातावरण की अपेक्षा है। उनसे घर में एक प्रेमपूर्ण झरने की, एक शांत झील बन जाने की अपेक्षा है। उन्हें चुस्त कपड़े नहीं पहनाए जा सकते और अगर पहनती हों तो वे भूल में पड़ गयी हैं और उस भूल के लिए बहुत महंगी कीमत चुकानी पड़ेगी।

जब कपड़े तक प्रभावित करते हैं, शिक्षा तो प्रभावित करेगी ही। हम जो मन की ट्रेनिंग सीखते हैं वह हमारे सारे व्यक्तित्व को निर्मित करती है। हम जो सोचते हैं वह हमारे पूरे जीवन को प्रभावित करता है। हम जो विचारते हैं, हम वैसे हो जाते हैं। हमें क्या सिखाया जा रहा है और क्या विचार करने के लिए हमें सामग्री दी जा रही है? स्त्रियों को कौन सी बातें सिखायी जा रही हैं? गणित में जो आदमी दीक्षित होता है, विज्ञान में जो आदमी दीक्षित होता है उसकी जीवन के प्रति पकड़ दूसरी होती है। संगीत में और काव्य में जो आदमी दीक्षित होता है उसकी जीवन के प्रति पकड़ दूसरी होती है और छोटी सी पकड़ से सब कुछ भिन्न हो जाता है।

गांधी जी के आश्रम में एक आदमी आना शुरू हुआ है। कुछ लोगों ने शिकायत की गांधी से कि यह आदमी अच्छा नहीं है। इस आदमी को आश्रम आने देना उचित नहीं

है, इस आदमी का चरित्र ठीक नहीं है। इसके गलत जीवन के बाबत बहुत गलत खब रें आश्रम में सुनी जा चुकी हैं। गांधी ने कहा, अगर आश्रम में बुरे आदमी नहीं आ स केंगे तो आश्रम किसके लिए निर्मित किया गया है? बुरे आदमी आते हैं हम उनका स्वागत करेंगे। लेकिन एक दिन तो बात बहुत आगे बढ़ गयी और कुछ लोगों ने आकर गांधी को कहा कि अब तो सीमा के बाहर बात चली गयी। जिस व्यक्ति को हम रोकने को कहते थे वह आज शराब घर में बैठा हुआ शराब पी रहा है, हम आंखों से देखकर आए हैं और आप चलकर देख सकते हैं। खादी पहने हुए वह आदमी शराबखाने में बैठा हो तो बड़ा अपमानजनम है यह आश्रम के लिए। गांधी की आंखों में खुशी के आंसू आ गए और गांधी ने कहा कि अगर में उस आदमी को वहां शराबखाने मग देखता तो हृदय आनंद से भर जाता। मैं इसलिए आनंदित हो उठता कि अच्छे दिन, मालूम होते हैं, आने शुरू हो गए। शराब पीनेवाले लोगों ने भी खादी पहननी शुरू कर दी है। वे लोग जो खबर लाए थे, कि खादी पहने हुए आदमी शराब पी रहा है यह बहुत बुरी खबर है। लेकिन गांधी ने कहा, मेरा हृदय खुशी से भर जाएगा अगर में यह पता चल जाए कि शराब पीने वाले लोगों ने भी खादी पहननी शुरू कर दी है।

इस जीवन को दो तरफ से देखना है। जिन मित्रों ने गांधी को आकर कहा था उनकी जीवन को देखने की जो दृष्टि है वह एक अदालत की दृष्टि है, वह एक वकील की दृष्टि है। गांधी ने जिस तरफ से देखा वह एक मां की दृष्टि है, वह एक स्त्री की दृष्टि है। वह एक वकील की, वह एक अदालत की, एक कानून की दृष्टि नहीं है। क्या फर्क है दोनों दृष्टियों में? पहली दृष्टि में तिरस्कार (कंडमनेशन) है उस आदमी का, उस आदमी की निंदा है, उस आदमी को छोड़ देने का आग्रह है, उस आदमी ने अलग हट जाने की बात है। दूसरी दृष्टि में उस आदमी के भीतर किसी शुभ के दर्शन की कोशिश है, उन आदमी के भीतर सुंदर को खोजने का खयाल है, उस आदमी के संबंध में भी आशा है अभी। दूसरे विचार में वह आदमी समाप्त नहीं हो गया है, उसके बदल जाने की गुंजाइश हो सकती है। मां का एक बेटा बिगड़ता चला जाए और सारी दुनिया आकर उसको कहे कि लड़का छोड़ देने जैसा हो गया है, यह लड़का बिगड़ गया है, यह घर में घुसने जैसा नहीं है लेकिन मां कहेगी अभी बहुत आशा है।
मैं एक छोटे से स्टेशन पर रुका हुआ था। मेरी गाड़ी आने में देर थी, वह एक छोटे से देहात का स्टेशन था और एक बूढ़ी स्त्री को कुछ लोग ले जा रहे थे। उसके सिर पर पट्टियां बंधी थीं। शायद किसी ने उसको लकड़ियों से चोट की थी। दो तीन स्त्रियां भी उसके साथ थीं। वे बाहर बड़े नगर में अस्पताल में उसे ले जाने को लाए हैं। मैंने पूछा, इस स्त्री को किसने मार दिया है? उसके साथ की स्त्रियों ने कहा कि इसका एक ही लड़का है और उसी लड़के ने इसको लकड़ी से चोट पहुंचाई है, इसके सिर में लहूलुहान कर दिया। यह बेहोश हो गयी थी, अभी अभी होश में आयी है। हम इसे अस्पताल ले जा रहे हैं। दूसरी स्त्री ने जो उसी के साथ थी, कहा कि ऐसे लड़के तो पैदा ही न हों तो अच्छा है लेकिन उस बूढ़ी ने, जिसके सिर से खून बह रहा था उस दू

सरी स्त्री के मुंह पर हाथ रख दिया और कहा, ऐसा मत कहो, अगर लड़का न होता तो आज मुझे मारता भी कौन? लड़का है तो उसने मार भी दिया लेकिन लड़का न हीं होता तो मुझे मारता भी कौन? लड़के का होना ही बहुत है। उसने मारा यह तो बहुत छोटी बात है और फिर वह बूढ़ी कहने लगी, लड़का ही है, अभी समझ कितनी है। मार दिया, कल समझ वापस आ जाएगी।

यह एक मां का हृदय है जो गणित में नहीं सोचता, जो कानून में नहीं सोचता, जो ि कसी प्रेम और आशा से सोचता है।

स्त्रियों की शिक्षा एकदम भिन्न होनी चाहिए ताकि उनकी दृष्टि भिन्न हो। वे जीवन को किन्हीं और ढंगों से सोचने में समर्थ हो सकें। लेकिन यह नहीं हो रहा है। हम उन्हें दृष्टियों में, इन्हीं दर्शनों में, उन्हीं विचारों में दीक्षित कर रहे हैं जिनमें दीक्षित है और पुरुष ने जो दुनिया बनायी है वह गलत सिद्ध हो चुकी है इसे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। पिछले तीन हजार वर्षों में पुरुषों की दुनिया में १५ हजार युद्ध हुए हैं। शाय द ही कोई दिन ऐसा हो जब जमीन पर युद्ध न हो रहे हों। प्रतिदिन युद्ध हो रहा है, प्रतिक्षण युद्ध हो रहा है। प्रतिक्षण आदमी काटे और मारे जा रहे हैं। यह अकेले पुरु षों की बनायी हुई दुनिया है, यह हार चुकी है, असफल हो चुकी है। यह प्रयोग हो चु का है। क्या हम एक नया प्रयोग नहीं करेंगे कि स्त्रियां भी इस दुनिया को बनाने में कोई महत्वपूर्ण हिस्सा बटाएं? एक नयी दुनिया को बनाने के लिए कोई आधार रखें या कि वे भी पुरुष की नकल करेंगी और आज नहीं कल सैनिकों के वस्त्र पहनकर न गरों पर एटम बक गिराएगी? पुरुष बहुत प्रशंसा करेंगे आपकी जिस दिन आप एटम बम गिराने में समर्थ हो जाएंगी और तब पुरुष कहेंगे कि बहुत अच्छी स्त्री है। अब ठी क हो गया है सब। जब आप युद्ध के मैदान पर बंदूकें लेकर खड़ी हो जाएगी। तो पुरु ष आपको बहुत तक में बाटेंगे, पदमश्री और भारतभूषण की उपाधियां देंगे, महावीर चक्र देंगे और कहेंगे कि अब स्त्रियां ठीक हो गयी हैं।

पुरुष अपनी ही भाषा में सोचता है, अपनी ही भाषा में स्त्रियों को भी निर्मित लेना च ाहता है बिना उस बात को जाने हुए कि पुरुष खुद बहुत गलत है। उस गलत पुरुष की और संख्या बढ़ाने की कोशिश मत करिए। अकेले पुरुष हो काफी हैं दुनिया को नष ्ट करने के लिए और अगर आप भी पुरुषों जैसा व्यवहार करती हैं तो कल मनुष्य ज ाति का अंत और निकट आ सकता है और कुछ भी नहीं हो सकता। लेकिन अगर ि स्त्रयां चाहें तो सारे जगत में एक बड़ी क्रांति ला सकती हैं। अगर स्त्रियां चाहें तो पृथ ्वी से युद्ध बंद हो सकते हैं, अगर स्त्रियां चाहे तो सारी बेवकूफियां बंद की जा सकत ी हैं, सारी हिंसा बंद की जा सकती है, सारा क्रोध बंद किया जा सकता है। लेकिन उसके लिए बिलकुल और तरह की स्त्री को जन्म देना जरूरी है, पुरुष की नकल नहीं। स्त्री अपने ही गुणों में परिपूर्ण गरिमा को उपलब्ध हो, इसकी दिशा में कुछ काम क रना जरूरी है। पुरुष ने जो स्थिति बना ली हैं, मैं एक छोटी सी कहानी से आपको स मझाने की कोशिश करूंगा।

ईश्वर बहुत घबरा गया है पुरुष की इस दुनिया को देखकर। बहुत परेशान हो गया है। आदमी ने जो किया है आदमी के साथ उसकी कथा इतनी दर्द पूर्ण, इतनी दुख भारी है जिसको कोई हिसाब नहीं कि कितनी हत्याएं हुए हैं। हमारी तो स्मृति बहुत कमजोर है इसलिए हम हिसाब भूल जाते हैं। तैमूरलंग ने, नादिर शाह ने, चंगेज खां ने और और अभी अभी स्टैलिन और हिटलर ने क्या किया है उसकी कल्पना ही हमें नहीं। अकेले स्टैलिन ने रूस मग साठ लाख लोगों की हत्या करवा दी है। अकेले हिटलर ने पांच सौ लोग, जब तक वह हुकूमत में रहा, रोज के हिसाब से मारे। प्रति दिन पांच सौ की संख्या पूरी की और अब तो इन पुरुषों ने बहुत बड़ी ईजाद कर ली है, एटम और हाइड्रोजन बम बना दिया है और आज नहीं कल वे सारी दुनिया को नष्ट करने के आयोजन में संलग्न हैं। उनकी तैयारी पूरी है कि आदमी को नहीं बचने देंगे। तो ईश्वर बहुत घबरा गया होगा। उसने दुनिया के तीन बड़े राष्ट्रों के प्रतिनिधियों को अपने पास बुलाया, रूस और ब्रिटेन और अमेरिका। और उन प्रतिनिधियों से कहा ईश्वर ने कि मैं बहुत चिंतित हो गया हूं। ऐसे तो जब से मैंने आदमी को बनाया तब से नींद मुझे नहीं आ सकी। रात्रि मेरी बेचैनी से गुजरती है कि यह आदमी पता नहीं कब क्या कर दे और जब से मैंने आदमी को बनाया, तुम्हें पता होगा उसके बाद मैंने फिर कुछ भी नहीं बनाया क्योंकि आदमी को बनाकर मैं इतना घबरा गया कि तब से सृष्टि का सारा काम ही मैंने बंद कर दिया और तब से मैंने सृष्टि बंद कर दी है, तब से आदमी ने चीजें बनानी शुरू कर दी और आदमी ने आखिर में एटम और हाइड्रोजन बम बनाए। अब तो बहुत घबराहट हो गयी है। मैं पूछता हूं, तुम चाहते क्या हो? तुम्हारी मंशा क्या है, तुम्हारे इरादे क्या हैं? इतनी हत्या का आयोजन किसलिए, इतना श्रम किसलिए? अरबों डालर रोज खर्च किया जा रहा है। सारी जमीन पर आदमी भूखा मर रहा है और एटम बम बनाने में रुपए खर्च किए जा रहे हैं, आदमी भूखे मरे जा रहे हैं, बिना वस्त्रों के हैं, बिना दवाइयों के हैं और दूसरी तरफ हम आदमी के मिटाने की सारी संपत्ति नष्ट कर रहे हैं। पृथ्वी की आधी संपत्ति हमेशा युद्धों में लगती रही है। अगर युद्ध नहीं होते तो आदमी आज कितना खुशहाल होता कहना बहुत कठिन है।

ईश्वर ने पूछा, उनसे, तुम चाहते क्या हो? मैं तुम्हें वरदान दे दूं और तुम्हारी इच्छा पुरी कर दूं। तुम एक एक वरदान मांग लो। अमेरिका के प्रतिनिधि ने कहा : हे प्रभु, हमारी एक ही आकांक्षा है और वह पूरी हो जाए तो फिर कभी कोई युद्ध न होंगे। फिर हमारे प्रति कोई शिकायत आपको न होगी। पृथ्वी तो रहे, पृथ्वी पर रूस का कोई निशान न रहे तो हमारी आकांक्षा पूरी हो जाएगी।

ईश्वर ने बहुत वरदान दिए हैं लेकिन कभी कल्पना भी नहीं की थी कि कोई ऐसा वरदान मांगेगा। उसने बहुत भय से रूस की तरफ देखा। जब अमेरिका ही यह कहता है तो रूस क्या कहेगा इसकी तो कल्पना ही की जा सकती है। रूस के प्रतिनिधि ने कहा महानुभाव, हमें तो विश्वास ही नहीं कि ईश्वर कहीं होता भी है।मुझे तो डर लगता है कि शायद मैं ज्यादा शराब पी गया हूं और आप दिखाई पड़ रहे हैं या हो स

कता है मैं कोई सपना देख रहा हूं और आप दिखाई पड़ रहे हैं। क्योंकि रूस ने तो प चास साल से तय कर लिया कि ईश्वर है ही नहीं और सारे मुल्क ने तय कर लिया है। एक मत से, ईश्वर नहीं है। फिर आप हो कैसे सकते हैं और यह तो लोकतंत्र का जमाना है; जनता जो तय कर लेती है, होता है। हमने तय कर लिया कि ईश्वर न हीं है, आप हो कैसे सकते हो? जरूर मैं कोई सपना देख रहा हूं या आज ज्यादा शरा ब पी ली है। लेकिन फिर भी कोई हरजा नहीं। हो सकता है कि हम आपकी पूजा फि र से शुरू कर दें और अपने चर्च में आपकी मूर्तियां फिर बिठा दें, लेकिन एक इच्छा हमारी पूरी हो जाए। जमीन का नक्शा तो हो, पृथ्वी का भूगोल तो हो, लेकिन उस नक्शे में हम अमेरिका के लिए कोई रंग, को रेखा नहीं देखना चाहते हैं। बस इतना ही हो जाए फिर सब ठीक है, फिर हमारा कोई विरोध आपसे भी नहीं। हम आपकी भी पूजा करेंगे। हमने, जहां पहले आपके मंदिर थे वहां कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर खो ल दिए हैं। अब जहां कम्युनिस्ट पार्टी के दफ्तर हैं हम वहां वहां फिर से मंदिर बना दें गे। हमें कोई कठिनाई नहीं है इससे, लेकिन इतनी हमारी इच्छा पूरी हो जानी चाहिए।

भगवान ने बहुत घबराकर ब्रिटेन की तरफ देखा और ब्रिटेन ने जो कहा वह खयाल में रख लेने जैसी चीज है। ब्रिटेन के प्रतिनिधि ने भगवान के चरणों पर सिर रखकर क हा कि हे महाप्रभु, हमारी अपनी कोई आकांक्षा नहीं। इन दोनों की आकांक्षा एक साथ पूरी हो जाए तो हमारी आकांक्षा पूरी हो जाए। हम कुछ और नहीं मांगते हैं, इन द ोनों ने जो मांगा वह पूरा कर दें फिर हमें कुछ भी नहीं चाहिए।

यह आदमी ने जो दुनिया बनायी है, पुरुष ने जो दुनिया बनायी है वह यहां ले आयी है। स्त्रियों का इस दुनिया के निर्माण में अब तक कोई हाथ नहीं है। क्या स्त्रियां चुपच ाप देखती रहेंगी पुरुषों की इस दुनिया को? या कि वे कोई भाग लेंगी? कुछ कंट्रीब्युट करेंगी?

मैं सोचता हूं, स्त्रियों के पास एक महान शक्ति सोई हुई पड़ी है। दुनिया की आधी से बड़ी ताकत उनके पास है। आधी से बड़ी ताकत कहता हूं। आधी तो इसलिए कहता हूं कि स्त्रियां आधी तो हैं ही दुनिया में, आधी से बड़ी इसलिए कि बच्चियां उनकी छाया में पलते हैं और वे जैसा चाहें उन बच्चियों को परिवर्तित कर सकती हैं। पुरुषों के हाथ में कितनी ही ताकत हो, लेकिन पुरुष एक दिन स्त्री की गोद में होता है, व हीं से वह अपनी यात्रा शुरू करता है और चाहे वह कितना ही बड़ा हो जाए वह वृद्ध ही क्यों न हो जाए अपनी पत्नी के सान्निध्य में, अपनी पत्नी की निकटता में निरंतर अपनी मां का अनुभव करता ही है, निरंतर अपनी मां की छाया देखता ही है। मां की छाया में बड़ा होता है। मां बचपन से उसके जीवन में छाया बनी रहती है। एक बार स्त्री की पूरी शक्ति जागृत हो जाए और वे निर्णय कर लें कि किसी प्रेम की दु नया को निर्मित करेंगी जहां युद्ध नहीं होंगे, जहां हिंसा नहीं होगी जहां राजनीति नहीं होगी, जहां पोलिटीशियंस नहीं होगे, जहां जीवन में कोई बीमारियां नहीं होगी। अगर स्त्रियां एक ऐसी दुनिया बनानी तय कर लें तो बहुत कठिन नहीं है कि वे एक नयी

दुनिया बनाकर खड़ी कर दें। वह दुनिया पुरुषों की बनायी दुनिया से बहुत बेहतर होग ी। आज भी जगत में जिन लोगों ने कुछ महत्वपूर्ण दिया है उन सारे लोगों में स्त्रियों के गुण अदभुत थे। गांधी के ऊपर तो एक स्त्री ने किताब भी लिखी है :—बापू माई मदर गांधी मेरी मां। गांधी के पास बहुत लोगों को लगा कि उनके मन में मां जैसे ब हुत कुछ गुण हैं। बुद्ध के पास जाकर लोगों को लगता था, क्राइस्ट के पास जाकर लो गों को लगता था कि शायद इन आदमियों के भीतर, इन पुरुषों के भीतर भी स्त्रियों की अदभुत क्षमता है।

जहां भी प्रेम है, जहां भी करुणा है, जहां भी दया है वहां स्त्री मौजूद है। इसलिए मैं कहता हूं कि स्त्री के पास आधी से भी ज्यादा बड़ी ताकत है और वह पांच हजार बर सों से बिलकुल सोयी हुई पड़ी है, बिलकुल सुप्त पड़ी है। नारी की शक्ति का कोई उ पयोग नहीं हो सका है। भविष्य में यह उपयोग हो सकता है। उपयोग होने का एक सू त्र यही है कि स्त्री यह तय कर ले कि उन्हें पुरुषों जैसा नहीं हो जाना है। दूसरी बात , वे पुरुषों से भिन्न हैं, इस बात को अनुभव कर लग। उनका व्यक्तित्व, उनका शरीर , उनका मन, उनकी चेतना किन्हीं अलग रास्तों से जीवन में गति करती है, किन्हीं अलग मार्गों से जीवन की खोज करती है। उनकी चेतना (कौंसेसनेस) पुरुषों की चेतन ा से भिन्न है। इस भिन्नता का बोध स्पष्ट होना चाहिए और तीसरी बात उनकी शिक्षा , उनके वस्त्र, उनके चिंतन, उनकी दीक्षा, उनके विचार सब भिन्न होने चाहिए, पुरुष ों जैसे नहीं, तो ही हम नारी की शक्ति का मनुष्य की संस्कृति में उपयोग कर सकते हैं और वह उपयोग अत्यंत मंगलदायी सिद्ध हो सकता है।

यह कौन करेगा? यह बात पुरुषों पर नहीं छोड़ी जा सकती, यह बात स्त्रियों को अप ने ही हाथ में ले लेनी होगी। उन्हें खुद ही सोचना होगा, खुद ही विचार करना होगा, खुद ही रास्ते खोजने होंगे। उन्होंने विचार करना शुरू किया है लेकिन यह विचार बि लकुल पुरुषों का अनुकरण और नकल है। उनका कोई अपना चिंतन, कोई अपनी दृष्ि ट नहीं है। उसमें कोई उनकी अपनी समझ नहीं है। ये थोड़ी सी बातें मैंने आपको कह ीं। आप सोचें, विचारें।

नारी की शक्ति का अपव्यय हुआ है या उपयोग ही नहीं हुआ है। या उपयोगी हुआ है तो गलत दिशाओं में हुआ और अब इतने जोर से नारी दीक्षित की जा रही है पुरुष ों की नकल में, पुरुषों के कालेजों में, पुरुषों के स्कूलों में इतने जोर से उसे ढांचे में ढ ाला जा रहा है कि यह हो सकता है, सौ बरस बाद दो तरह के तरह के पुरुष पृथ्वी पर हों लेकिन स्त्रियां नहीं रह जाएगी। उससे बड़ा कोई दुर्भाग्य नहीं हो सकेगा। मनुष ्य ने बहुत दुर्भाग्य जाने हैं लेकिन अगर सारी स्त्रियां पुरुषों जैसी हो जाए तो इससे ब. डा दुर्भाग्य नहीं हो सकता। जीवन का सारा आनंद और जीवन का सारा आकर्षण नष ्ट होगा और जीवन भरेगा विषाद से और पीड़ से। उस विषाद और पीड़ा में सिवाय आत्मघात के कोई विकल्प नहीं रह जाएगा सिवाय इसके कि आदमी अपने को नष्ट कर ले और समाप्त कर ले।

ये थोड़ी सी बातें मैंने कहीं इस आशा में कि हो सकता है मेरी बात आपके हृदय की वीणा का कहीं कोई तार छू दे, कोई चिंतन का वहां जन्म हो जाए, कोई चीज आप को दिखायी पड़ने लगे, कोई चीज आपके जीवन में सक्रिय हो जाए और आपके जीव न में अगर कोई चीज सक्रिय हो जाती है, एक स्त्री के जीवन में अगर कोई चीज सि क्रय हो जाती है तो एक पूरे परिवार के प्राणों में परिवर्तन होना शुरू हो जाता है। ए क स्त्री को बदल लेना पचास पुरुषों के बदलने के बराबर है। इतनी बड़ी शक्ति जिन के हाथ में हो, इतनी बड़ी जिनके हाथ में सामर्थ्य हो, इतने जीवन को बदलने का जि नके लिए अवसर हो वे अगर जीवन के लिए कुछ भी हनीं करती हों तो निश्चित अप राधी हैं। स्त्री अपराधी है, उसने जीवन को कुछ भी नहीं दिया है। उसने जीवन को ब नाने के लिए कोई बुनियाद ही नहीं रखी। लेकिन ये बुनियादें रखी जा सकती हैं।
जो गाड़ी है सभ्यता की, यह बिलकुल एक चाक से भागी जा रही है। इससे बड़ी दुर्घ टनाएं (एक्सीडेंटस) होती रही हैं, बड़ी दुर्घटनाएं होने की आगे संभावना है। दूसरा चा क बिलकुल जाम है। यह गाड़ी से निकल कर अलग पड़ा हुआ है। परमात्मा करे कि मनुष्य की इस संस्कृति को पूर्णता दे दे। स्त्री भी अपना दान, अपने प्रेम, अपने आनंद, अपने काव्य, अपने संगीत को जोड़ दो। इस दुनिया में जो अकेले गणित ने, फिजिक्स और केमिस्ट्री ने खड़ी की है, स्त्री भी जोड़ दे अपनी प्रार्थना को उस राजनीति में जो अकेले पुरुषों ने केवल महत्वाकांक्षा के आधार पर पर खड़ी है। स्त्री भी जोड़ दे अप नी थोड़ी सी पंक्तियां को उस गीत में जो पुरुष अब तक अपने क्रोध और युद्ध के आ वेश में अकेला ही गाता रहा है तो शायद एक ज्यादा सर्वांगीण, ज्यादा इन्टीग्रेटेड, ज्या दा अखंड सभ्यता का जन्म हो सकता है और अगर वह सभ्यता नहीं जन्मी तो यह स भ्यता मरने के करीब है। इसे मरने से कोई भी नहीं बचा सकेगा। या तो दूसरी सभ्य ता जन्मेगी या पूरे मनुष्य के अंत का क्षण करीब आ गया है। मनुष्य के बचने की बहु त ज्यादा संभावना नहीं है।

अंतयार्त्रा के सूत्र

परमात्मा को जानने के पहले स्वयं को जानना जरूरी है। और सत्य को जानने के पह ले स्वयं को पहचानना जरूरी है। क्योंकि जो मेरे निकटतम है, अगर वही अपरिचित है तो जो दूरतम हैं, वह कैसे परिचित हो सकेंगे! तो इसके पहले कि किसी मंदिर में परमात्मा को खोजने जाए, इसके पहले कि किसी सत्य की तलाश में शास्त्रों में भट कें उस व्यक्ति को मत भूल जाना जो कि आप हैं। सबसे पहले और सबसे प्रथम उस से परिचित होना होगा जो कि आप हैं। लेकिन कोई स्वयं से परिचित होने को उत्सुक नहीं है। सभी लोग दूसरे से परिचित होना चाहते हैं। दूसरे से जो परिचय है, वही ि वज्ञान है, और स्वयं से जो परिचय है, वही धर्म है। जो स्वयं को जान लेता है, बड़े आश्चर्य की बात है, वह दूसरे को भी जान लेता है। लेकिन जो दूसरे को जानने में स मय व्यतीत करता है, यह बड़े आश्चर्य की बात है, दूसरे को तो जान ही नहीं पाता, धीरे-धीरे उसके स्वयं को जानने के क्षार भी बंद हो जाते हैं। ज्ञान की पहली किरण

स्वयं से प्रकट होती है और धीरे-धीरे सब पर फैल जाती है। ज्ञान की पहली ज्योति स्वयं में जलती है और फिर समस्त जीवन में उसका प्रकाश, उसका आलोक दिखाई पड़ने लगता है।

जो स्वयं को नहीं जानता है, उसके लिए ईश्वर मृत है चाहे वह कितनी ही पूजा करे और कितनी ही अर्चनाएं, चाहे वह मंदिर बनाए, मूर्तियां बनाए और कुछ भी करे। एक काम अगर उसने छोड़ रखा है स्वयं को जानने का, तो जान लें कि परमात्मा से उसका कोई संबंध कभी नहीं हो सकेगा। परमात्मा से संबंध की पहली बुनियादी, आधारभूत शर्त है--स्वयं से संबंधित हो जाना। क्योंकि वही सूत्र है, वही सेतु है, वही मार्ग है, वही द्वार है, परमात्मा से संबंधित होने का। और तब जो परमात्मा प्रकट होता है वह मनुष्य द्वारा निर्मित परमात्मा की कल्पना नहीं है, बल्कि वही है जो है। तब वह हिंदू का परमात्मा नहीं है और मुश्किल का परमात्मा नहीं है, जैन का और ईसाई का नहीं है। तब वह बस परमात्मा है। उसका कोई रूप नहीं, नाम नहीं, उसका आदि नहीं, अंत नहीं। फिर उसकी कोई सीमा नहीं है। वैसा जो सत्य है जो हमें सब तरफ घेरे हुए हैं कैसे दिखाई पड़ेगा? यदि हम स्वयं को जाने बिना उसे देखने की दौड़ में पड़ गए तो वह दौड़ शुरू से ही भ्रांत होगी। और उस भ्रांति में हम जो भी जान लेंगे, वह हमारे अज्ञान को और गहन करेगा और सघन बनाएगा।

एक अंधा आदमी अपने एक मित्र के घर मेहमान था। मित्र ने उसके स्वागत में बहुत बहुत मिष्ठान्न बनाए। उस अंधे को कुछ पसंद आए। उसने पूछा यह क्या है? दूध से बनाई कोई मिठाई थी। उसके मित्रों ने कहा, दूध से बनी मिठाई है। उस अंधे आदमी ने कहा, क्या तुम कृपा करोगे और दूध के संबंध में मुझे कुछ समझाओगे, मुझे कुछ बताओगे कि यह दूध कैसा होता है? तो मित्रों ने वही किया जो तथाकथित ज्ञानी हमेशा से करते रहे हैं। वे उसको समझाने लग गए। एक मित्र कहा, दूध होता है शुद्ध सफेद बगुले के पंखों की भांति। वह अंधा आदमी बोला, मजाक करते हैं मुझसे आप? मैं तो दूध ही हनीं समझ पा रहा हूं। यह बगुला और उसके पंखे, एक और नई कठिनाई हो गई। क्या मुझे बताएंगे कि यह बगुला और उसके सफेद पंख कैसे होते हैं? तो मैं पहले बगुले को समझु, शुभ्रता को समझे तो दूध को समझा पाऊंगा। पहली समस्या तो वहीं रह गई, यह दूसरा प्रश्न खड़ा हो गया कि ये बगुले के सफेद पंख कैसे होते हैं? यह बगुला कैसा होता है? मित्र अचरज में पड़ गए। एक मित्र ने तरकीब निकाल। उसने अपना हाथ उठाया, अंधे का हाथ पकड़ा। कहा कि मेरे हाथ पर अपना हाथ फिराओ और कहा कि जिस तरह मेरा हाथ मुड़ा हुआ है उसी तरह बगुले की गर्दन मुड़ी हुई होती है। उस अंधे आदमी ने मुड़े हुए हाथों पर हाथ फेरा। वह उठकर नाचने लगा और बोला कि मैं समझ गया, मुड़े हुए हाथ की भांति दूध होता है। समाज गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भांति होता है। वे मित्र बहुत परेशान हो गए। इससे तो बेहतर था कि वे अंधे को न समझाते। क्योंकि यह जानना ही अच्छा था कि नहीं जानते हैं। यह जानना तो और खतरनाक हो गया कि दूध मुड़े हुए हाथ की भांति होता है।

जिन्होंने स्वयं की आंखें खोलकर नहीं देखा उनके हाथों में शास्त्रों की यही गति हो जा ती है, सिद्धांतों की यही गति हो जाती है। इसीलिए परमात्मा हमारे लिए मृत हो ग या है। उसकी मृत्यु हो गई है।उसकी मृत्यु इसलिए हुई है कि हमारी आंखें बंद हैं। ह म अंधे हैं। इसलिए परमात्मा को मरना पड़ा है। हमारे अंधेपन ने उसकी हत्या कर द ी है। क्या तुम आंखें खोलने राजी हैं? जिनको प्रेम है जीवन से, सत्य से वे आंखें खो लने को राजी हों तो सारे जगत में परमात्मा का आलोक प्रकाशित हो सकता है। वे आंख कैसे खुलेंगी? स्वयं के द्वार जो बंद हैं उन्हें कैसे खोलेंगे? उसके कुछ सूत्र हैं। पहला सूत्र है ज्ञान नहीं बल्कि अज्ञान का बोध चाहिए। चित्त की एक ऐसी दशा चाहि ए जहां हम स्पष्ट रूप से जानते हैं कि मैं कुछ भी हनीं जान रहा हूं, मुझे कुछ भी प ता नहीं है। ऐसे अबोध की, अज्ञान की स्पष्ट स्वीकृति पहला सूत्र है ज्ञान को छोड़ना पड़ेगा। यदि वस्तुतः सम्यक और सत्य जो ज्ञान है उसे पाना है तो तथाकथित ज्ञान क ो छोड़ना पड़ेगा, मनुष्य के मन पर ज्ञान बहुत बोझिल है। पत्थरों और पहाड़ों की भांि त उसकी छाती पर ज्ञान सवार है। हम सब कुछ जानते हुए मालूम होते हैं जब कि हम कुछ भी नहीं जानता है। इतना रहस्यपूर्ण है यह जगत! आपके द्वार पर जो पत्थर पड़ा है उसे भी आप नहीं जानते हैं। आपके आंगन में जो फूल खिलते हैं उनको भी नहीं जानते। कुछ भी तो हम नहीं जानते हैं। जीवन में इतना अज्ञात और इतना रहस् य भरा हुआ है लेकिन हमारा अहंकार कहता है कि हम कुछ जानते हैं। पिता का अ हंकार कहता है कि तुम मेरे लड़के हो, मैं तुम्हें भलीभांति जानता हूं। लेकिन क्या पि ता होने से ही कोई बेटे को जान जाता है? पिता एक मार्ग से ज्यादा क्या है? वह प्र भु, बेटे को दुनिया में लाने में द्वार बनता है, मार्ग बनता है। जैसे कोई एक चोर रास् ते से होकर गुजरे और लौटते वक्त चोर रास्ता कहने लगे कि–ठहरो! मैं तुम्हें भली भांति जानता हूं। क्योंकि थोड़ी देर पहले तुम मेरे पास से गुजरे थे तो इस चोर रास्ते को हम क्या कहेंगे? जब एक पिता अपने बच्चे को कहता है कि मैं तुम्हें भलीभांति जानता हूं तो क्या वह भी वैसी ही गलती नहीं कर रहा है?

जानने के इस भ्रम में ही, जीवन का जो रहस्य है उससे हम अपरिचित रह जाते हैं। हम सभी चीजों को जानते हुए मालूम पड़ते हैं। यह जानने का भ्रम टूटना चाहिए तो ही जीवन में रहस्य का जन्म होता है और अज्ञात के प्रति आंखें खुलनी शुरू होती है। ज्ञात के तट से जो मुक्त नहीं होता है, अज्ञात सागर की यात्रा उसके लिए नहीं है। परमात्मा बिलकुल अज्ञात है और हम स्वयं बिलकुल अज्ञात हैं। हमारे भीतर क्या है हम नहीं जानते। तो जो हम जानते हैं उसी को अगर पकड़े रहें तो इस अज्ञात में या त्रा नहीं हो सकेगी। हम ज्ञात से बंधे हैं।

जो जो हम जानते हैं उसी से हम बंधे हैं। किसीने एक शास्त्र पढ़ लिया है, गीता या कुरान या बाइबिल या कुछ और। किसी ने कुछ सुन लिया है किसी ने कुछ अनुभव कर लिया है और वह उससे बंधा है। जो ज्ञान से बंधता है वह अतीत से बंध जाता है। क्योंकि ज्ञान हमेशा बीते हुए (ढेंज) का होता है, जो हो गया है,बीत गया है। जो आपने जान लिया वह अतीत हो गया, जो जान लिया वह गया। वह मुर्दा हो गया।

वह मर गया। उस मेरे हुए के साथ जो बंधा रहता है उसकी भविष्य में यात्रा कैसे हो सकेगी? वह आगे कैसे जाएंगे? ज्ञान तो हमेशा बीता हुआ है। जो भी आपने जान लिया वह गया। और परमात्मा है अनजाना (न्नदादवूद), अज्ञात। तो इस जाने हुए से अगर हम बंध गए तो उस अनजाने को कैसे जान सकेंगे? इसलिए ज्ञान की गठरी जो उतार देता है, वही उस सागर में यात्रा कर पाता है जो कि परमात्मा का है, ईश्वर का है।

पहला सूत्र है ज्ञान से मुक्त हो जाना। लेकिन हम सब तो ज्ञान की तलाश में हैं। हम सब तो इस खोज में हैं कि ज्ञान कहीं मिल जाए। भगवान न करे कि आपको कहीं ज्ञान मिल जाए। ज्ञान मिला कि आप वही बंद हो जाएंगे, वहीं ठहर जाएंगे, रुक जाएंगे। जो ज्ञानी हो जाते हैं, वही ठहर जाते हैं और मुर्दा हो जाते हैं। पंडित से ज्यादा मरा हुआ कोई आदमी कभी देखा है? दुनिया में जितना पांडित्य बढ़ता है उतना मुर्दापन बढ़ता है। क्यों? क्योंकि वह अपने जाने से, अपने ज्ञान से बंध जाते हैं। वह बंधन उनके चित्त को फिर उड़ानें नहीं लेने देता है। अनंत सागर की, आकाश की, परमात्मा की उड़ान में जान में वह असमर्थन हो जाते हैं। उनके पैर जमीन से बंध जाती हैं। ज्ञान से मुक्त होने का साहस ही किसी व्यक्ति को धार्मिक बनाता है। तो पहला सूत्र है ज्ञान के तट से अपनी जंजीरें खोल दीजिए। बड़ी घबराहट लगेगी। घन छोड़ देना बहुत आसान है। लेकिन ज्ञान छोड़ना बहुत कठिन है। इसलिए जो लोग घन छोड़कर भाग जाते हैं वे लोग भी ज्ञान नहीं छोड़ पाते। धन छोड़कर भाग जाते हैं लेकिन उसी धन से जो किताबें खरीदते हैं उसका बस्ता बांधकर साथ ले जाते हैं। वे ज्ञान नहीं छोड़ते। एक आदमी संन्यासी हो जाता है, घर छोड़ देता है, परिवार छोड़ देता है, पत्नी और बच्चों को छोड़ देता है, लेकिन हिंदू होने को नहीं छोड़ता है, मुसलमान होने को नहीं छोड़ता है, जैन होने को नहीं छोड़ता है।

कैसी अजीब और आश्चर्य की बात है कि अब तक जमीन पर साधु पैदा नहीं हुए। हिंदू साधु होता है, मुसलमान साधु होता है, ईसाई साधु होता है, यह भी क्या पागलपन की बात है। साधु होना चाहिए जमीन पर। हिंदू, ईसाई और मुसलमान ये नाम कैसे साधु के पीछे लगे हैं? असाधु के साथ ये बीमारियां लगी रहें तो समझ में आता है लेकिन साधु के साथ इन बीमारियों को देखकर बहुत हैरानी होती है, बहुत आश्चर्य होता है। लेकिन ज्ञान जो पकड़ लिए गए हैं हिंदू का, मुसलमान का, जैन का उसे वे छोड़ते नहीं, उसे छोड़ना क्यों नहीं चाहते? वह भी तो एक आंतरिक संपदा है। इसलिए वह भी एक धन है। रुपया बाहर की संपत्ति है, ज्ञान भीतर की संपत्ति है। बाहर की संपत्ति छोड़ना बहुत कठिन नहीं है। भीतर की संपत्ति जो छोड़ता है, वही केवल परमात्मा में संबद्ध होता है। क्राइस्ट ने कहा है कि धन्य हैं वे जो दरिद्र हैं। कौन? क्या वे जिनके पास लंगोटी नहीं है? अगर वे ही धन्य हैं तो क्राइस्ट ने बहुत गलत बात कही है। तो उसका मतलब यह हुआ कि वह गरीबी, दीनता और दरिद्रता के समर्थन में हैं। लेकिन नहीं, क्राइस्ट ने कहा है--पुअर इन स्प्रिट जो आत्मा से दरिद्र हैं। क्या मतलब? आत्मा से दरिद्र का मतलब यह कि जिन्होंने ज्ञान की संपदा को फेंक दिया, ि

जन्होंने कहा कि हमारे पास भीतर कोई संपदा नहीं है, हम कुछ भी नहीं जानते, हम बिलकुल अज्ञान में हैं, हमारा कोई ज्ञान नहीं है, जिन्होंने अतीत से, बीते से, जो ग या उससे अपने को बांध नहीं रखा है। धन्य हैं वे लोग जिन्होंने ज्ञान की संपत्ति को छ ोड़ दिया है, वे ही लोग, केवल वे ही थोड़े से लोग सत्य को और परमात्मा को जान सकते हैं। तो क्या तैयारी है इस बात की आप ज्ञान को छोड़ दें?

धन को छोड़ने की तैयारी करवाने वाले लोग गलत साबित हुए हैं। धन छोड़ने का को ई बड़ा सवाल नहीं है। धन बाहर है। अगर उसे छोड़ दीजिए तो इससे जो उपलब्धि होगी वह भी केवल बाहर की ही होगी। ज्ञान भीतर है। अगर उसे छोड़ा तो जो उपल ब्धि होगी, वह भीतर की होगी। और स्मरण रखिए, दुनिया में केवल दो ही सिक्के हैं—धन के और ज्ञान के। और दो ही तरह के लोग हैं धन को इकट्ठा करने वाले लोग और ज्ञान को इकट्ठा करने वाले लोग।

एक बादशाह समुद्र के किनारे अपने महल में निवास करता था। एक सांझ वह छत प र खड़ा हुआ था। सड़कों जहाज आते थे और जाते थे समुद्र में। उसने अपने वजीर क ो कहा कि देखते हो सैकड़ों जहाज आ रहे हैं और जा रहे हैं। उनके वजीर ने कहा प हले मुझे भी सैकड़ों दिखाई पड़ते थे। कुछ दिन से मुझे केवल दो ही जहाज दिखाई प. ड रहे हैं। उसके राजा ने कहा दिमाग खराब हो गया है? दो जहाज दिखाई पड़ते हैं? सैकड़ों आ रहे हैं, जा रहे हैं। उस वजीर ने कहा, हो सकता है कि मुझे गलत दिखा ई पड़ता हो, लेकिन फिर भी मुझे दो जहाज दिखाई पड़ते हैं। एक तो धन का जहाज है और दूसरा है ज्ञान का जहाज। और इन दो ही जहाजों की सारी यात्रा है। या तो कोई धन खोजने जा रहा है या कोई ज्ञान खोजने।

धन से भी अहंकार तृप्त होता है। धन है मेरे पास। धन की खोज से तृप्ति होती है ि क मैं कुछ हूं, कोई हूं। भूल जाते हैं हम कि मैं अपने को नहीं जानता। धन के मेरे प ास, मैं कुछ हूं। जरा किसी धनी को धक्का दें तो कहेगा कि जानते नहीं कि मैं कौन हूं? लेकिन अगर उनका धन छिन जाए तो फिर वह यह नहीं कहेगा कि जानते नहीं कि मैं कौन हूं। धन था तो वह कुछ था। एक आदमी मंत्री है तो वह कुछ है। वह मं त्री न रह जाए और जैसी कि रोज होता है, कोई मंत्री है फिर नहीं भी रह जाता। भू तपूर्व मंत्री रह जाता है। मर गया। वह मंत्री तब नहीं रह गया। जैसे कपड़े की कीज निकल जाए वैसा आदमी हो जाता है, बिलकुल ढीला ढीला। उसको धक्का दो तो बि लकुल नहीं कहता कि जानते हो—मैं कौन हूं, बल्कि वह कहेगा कि कहीं आपको चोट तो नहीं लग गई? लेकिन वह कल जब मंत्री था और आप पास से निकल जाते धक का देकर, आपकी छाया का भी धक्का लग जाता तो कहता कि ठहरो! जानते नहीं ि क मैं कौन हूं।

तो धन, पद, अनुभव यह भाव देता है कि मैं कुछ, हूं। इस मैं कुछ हूं के भ्रम में वह यह खयाल ही भूल जाता है कि मैं यह भी नहीं जानता कि मैं कौन हूं। कुछ हूं के भ्रम में कौन हूं इस बात का स्मरण नहीं रह जाता। एक और खोज है ज्ञान की। ज्ञान ी को भी दंभ पैदा हो जाता है कि मैं कुछ हूं और ज्ञानी धनी से कहीं ज्यादा दंभी हो

ता है। क्योंकि वह यह कहता है कि यह धन तो बाहर की संपत्ति है। यह तो भौतिक वादी है। और हम! हम तो अध्यात्मवादी हैं, हम तो ज्ञान के खोजी हैं। धन, यह तो क्षुद्रवाद है। लेकिन इस ज्ञान से भी क्या हो रहा है? ज्ञान से भी अहंकार मजबूत हो रहा है कि मैं कुछ हूं।

ज्ञानियों की आंखों में देखिए, उनके आसपास ढूंढिए और खोजिए। वहां शांति नहीं मिलेगी, मिलेगा अहंकार। नहीं तो ज्ञानी शास्त्रार्थ करते, घूमते घूमते और एम दूसरे को हराते और पराजित करते? जहां किसी को हराने का भाव आता है वहां सिवाय अहंकार के और क्या होगा? ज्ञानी शास्त्र लिखते हैं और वह भी दूसरे शास्त्रों के खंडन, निंदा, गाली गलौज में? अगर इन ज्ञानियों के शास्त्र देखें तो बहुत हैरान हो जाएंगे। जितनी गाली गलौज की जा सकती है वह सब वहां मौजूद है। जितना जो भी मनुष्य के मन में दूसरे मनुष्य के प्रति हिंसा, घृणा और क्रोध हो सकता है वह सब वहां मौजूद है। यह क्या है? इन ज्ञानियों ने खुद भी लड़ा और दुनिया को लड़ाया और ऐसी दीवाल खड़ी कर दी जिसको तोड़ना मुश्किल हुआ जा रहा है। ये दीवालें सब अहंकार की दीवालें हैं और ये ज्ञानी अगर धन को छोड़ भी दें तो छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़ता है। अहंकार फिर भी तृप्त होता है। अहंकार अपनी जगह है। धन छोड़ने से कोई फर्क नहीं पड़।

धनी का अहंकार होता है। त्यागी का अहंकार होता है। और त्यागी का अहंकार धनी के अहंकार से ज्यादा खतरनाक होता है। क्योंकि वह ज्यादा सूक्ष्म है और दिखाई नहीं पड़ता। ज्ञानी का अहंकार होता है कि मैं जानता हूं। यह जो जानने का भाव है यह सूक्ष्मता भीतरी दीवार है। यह सर्व से, समस्त से जुड़ने नहीं देगी। यह तोड़ देगी। अहंकार तोड़ने वाली इकाई है। वह आपको तोड़ता है सबसे तब आप अकेले रह जाते हैं। आप सबसे टूट जाते हैं। अहंकार तोड़ता है इसलिए अहंकार परमात्मा की तरफ ले जाने वाला नहीं होता है। अहंकार किसी भी भांति अपने को भरी सकता है--स्वार्थ से, ज्ञान से, धन से। न मालूम कितने और किन रूपों से भर सकता है। अहंकार जहां है, मैं कुछ हूं यह भाव जहां है वहां सर्व के साथ सामंज्य नहीं हो सकेगा। क्योंकि मैं कुछ हूं वही स्वर सारे संगीत को विकृत कर देगा। क्या यह नहीं हो सकता कि यह मैं चला जाए? यह हो सकता है, यह हुआ है। जमीन पर आगे भी यह होता रहेगा। यह आपके भीतर भी घटित हो सकता है।

ज्ञान के भ्रम को विसर्जित करने में मन डरता है। डर यह है कि अगर मेरा ज्ञान ही गया तो फिर मैं तो न कुछ हो गया। फिर तो मैं नामहीन हो गया। लेकिन जिन्हें परमात्मा को खोजना है, वे स्मरण रखें कि उन्हें न कुछ होना पड़ेगा। प्रेम के द्वार पर जो कुछ होकर जाता है उसे खाली हाथ वापस लौटना पड़ता है। प्रेम के द्वार पर जो न कुछ होकर जाता है उसे हमेशा द्वार खुले मिलते हैं और स्वागत मिलता है।

रूसी ने एक गीत गाया है। गाया है कि प्रेमी अपनी प्रेयसी के द्वार पर गया। द्वार खटखटाया। किसी ने पूछा कौन हो? प्रेमी ने कहा, मैं हूं तेरा प्रेमी। तुरंत सन्नाटा हो गया। उसने बहुत बार द्वार भड़भड़ाए और कहा, बोलती क्यों नहीं हो? मैं तुम्हारा प्रेमी

द्वार पर पड़ा खड़ा हुआ, चिल्ला रहा हूं। आधी रात गयी भीतर से किसी ने कहा लौ
ट जाओ। यह द्वार न खुल सकेगा। क्योंकि प्रेम के द्वार पर जो आदमी कहता है कि
मैं हूं प्रेम के द्वार उसके लिए कैसे खुल सकते हैं? प्रेम के घर में दो कि लिए कोई ज
गह नहीं है, लौट जा। वह प्रेमी लौट गया। वर्षा हो गई, सर्दी आई, धूप आई, दिन
आए और गए। चांद उगे और गिरे और न मालूम कितने वर्ष बीते। और फिर एक ब
ार रात उस दरवाजे पर फिर दस्तक सुनी गयी। और फिर उससे किसी ने पूछा कि
कौन हो? बाहर से किसी ने कहा कि अब तो तू ही है। और कहते हैं द्वार खुल गए
और पीछे पता चला कि द्वार तो खुले ही हुए थे। केवल मैं के कारण बंद मालूम पड़
ते थे। मैं नहीं था तो कोई दीवार न थी। मैं परमात्मा और मनुष्य के बीच में रुकावट
है। मैं पर पहली और गहरी और सूक्ष्म चोट वही होगी जहां मैं सबसे गहरी जड़ें हैं।
वह जो जानने का भाव, वह जो जानने का खयाल है, उसे तोड़ना होगा। और सच्चा
ई तो यह है कि हम जानते भी कुछ नहीं है, तोड़ने में कठिनाई क्या है? क्या जानते
हैं? क्या जाना है? कुछ भी तो नहीं। जीवन ऐसे निकल जाता है जैसे पानी पर कोई
लकीर खींचता है। जान ही क्या पाते हैं? कभी सोचा है कि क्या जान पाए हैं? कुछ
भी तो नहीं लेकिन छोड़ने में भय होता है। उस भय को जो पार नहीं करता वह पर
मात्मा के रास्ते में यात्रा नहीं हो सकता है। उस भय को पार करना होगा।

पहला सूत्र है ज्ञान के अहंकार को चोट देना। उसे बिखेरना, उसे जानना। चोट देते
ही एक अदभुत क्रांति भीतर मालूम होगी। जिंदगी बिलकुल और तरह की दिखाई पड़
ने लगेगी। जिस फूल के पास कल गुजरे थे उसी फूल के पासे से जब आज गुजरेंगे तो
फूल दूसरा दिखाई पड़ेगा। क्योंकि कल आप सोचते थे कि मैं जानता हूं इस फूलों को
। जिस फूल को आप जानते थे तो वह इस भ्रम के कारण ही न कुछ था, लेकिन आ
ज उस फूल के पास से निकलेंगे और यह जानते हुए कि नहीं जानते हैं, तो शायद ए
क पल ठहर जाएंगे और उस फूल को देखेंगे तब शायद वह रहस्यपूर्ण मालूम होगा औ
र न मालूम कितने दूर का संदेश लाता हुआ मालूम पड़ेगा। उस फूल को भी अगर पू
री तरह शांति से देखेंगे तो शायद परमात्मा के किसी सौंदर्य की झलक वहां दिखाई
देगी। लेकिन जानने वाले व्यक्ति को वह नहीं दिखाई पड़ेगा। क्योंकि वह सब जगह से
अंधे की भांति निकल जाता है।

यह जो ज्ञान का दंभ है, वह आदमी को अंधा कर देता है। यह चीजों को देखने नहीं
देता है। पैर के नीचे जो दूब है परमात्मा वहां भी है, आसपास जो लोग हैं, परमात्म
ा वहां भी है। हवाएं हैं, आकाश है और बादल हैं और सब कुछ है और जो कुछ है
सब में वही है। लेकिन वह दिखाई तो नहीं पड़ता क्योंकि देखनेवाली आंख नहीं है। य
ह ज्ञान जो रोके हुए है सारे रहस्य के द्वार पर्दे की तरह, दीवालें की तरह। तो पहली
चोट इन ज्ञान पर ही करनी पड़ेगी और ज्ञान पर आप चोट कर पाए तो एक दूसरा
अभिनव क्षितिज खुलता हुआ दिखाई पड़ेगा–जो कि प्रेम का है, जो ज्ञान को छोड़ने
को राजी होता है उसके लिए प्रेम के द्वार खुल जाते हैं।

तो पहला सूत्र है, ज्ञान से तोड़ना अपने को। और दूसरा सूत्र है, प्रेम से जोड़ना। जान ने का भाव छोड़ दें और प्रेम करने के भाव को जान लें। जानने वाला नहीं जान पाता है और प्रेम करने वाला जाना लेता है। हम तो कुछ ऐसे हजारों वर्षों से प्रेम के विर ोध में पाले गए हैं कि जिसका कोई हिसाब नहीं। ज्ञान के पक्ष में और प्रेम के विरोध में पाले गए हैं। मैं आप से निवेदन करता हूं कि ज्ञान के विरोध में, प्रेम से, प्रेम के जीवन में गति करें। प्रेम में चरण रखें। जब प्रेम की दिशा में चित्त प्रवाहित हो जाएग ा तो परमात्मा से ज्यादा निकट कोई भी नहीं है ओर अगर ज्ञान की दिशा में बुद्धि काम करती रहेगी तो परमात्मा से ज्यादा दूर कोई नहीं है। विज्ञान कभी परमात्मा क ो नहीं जान पाएगा क्योंकि विज्ञान की खोज किसी तथाकथित ज्ञान की ही खोज है। इसलिए विज्ञान जितना बढ़ता जाता है वह कहता है कि ईश्वर कहीं नहीं है। विज्ञान इसी तथाकथित ज्ञान की चरम परिणति है। लेकिन प्रेम तो हर कदम पर परमात्मा को पता है। प्रेम तो हिल भी हनीं पाता बिना परमात्मा के। लेकिन प्रेम की भाषा को गणितज्ञ कैसे समझेगा? ज्ञानी कैसे समझेगा? प्रेम की भाषा उसकी समझ में बिलकुल भी नहीं आती।

एक फकीर था। वह प्रेम के गीत गाता और प्रेम की हो बातें करता था। अनेक लोग उससे कहते कि तुम परमात्मा की बातें क्यों नहीं करते। वह कहता कि परमात्मा की बातें क्या करें। जो प्रेम को ही नहीं जानता उससे परमात्मा की बातें करनी नासमझी है। वह कहता कि हम तो प्रेम की ही बातें करते हैं। जो प्रेम को नहीं जानता उससे परमात्मा के लिए क्या कहें? जिन्होंने दिया नहीं देखा उनको सूरज की क्या खबर क हें। वह क्या समझेंगे सूरज को और जिसने दिया देखा है उससे भी क्या सूरज की बा त करें? क्योंकि जिसने दिया देख लिया है उसने सूरज भी देख लिया है।

एक दिन एक पंडित पहुंचा और उसने कहा कि तुम प्रेम ही प्रेम रटे जाते हो। यह भ ी पता है कि प्रेम कितने प्रकार का होता है? पंडित हमेशा प्रकार पूछता है। वह पूछ ता है कि कितने प्रकार का प्रेम होता है, कितने प्रकार के सत्य होते हैं, कितने प्रकार के ईश्वर होते हैं? वह तो हर जगह यही बात पूछता है। पंडित ने उस फकीर से भ ी पूछा कि कितने प्रकार का प्रेम होता है। मालूम है? वह फकीर बोला, हैरान कर ि दया तुमने। प्रेम तो हम जानते हैं। प्रकार का तो हमें आज तक कोई पता नहीं चला। यह प्रकार क्या होता है? प्रेम में और प्रकार? पंडित हंसा। उसने कहा हंसने की बा री मेरी है। अपनी झोली से उसने किताब निकाली और कहा कि यह किताब देखो। इ समें लिखा है कि प्रेम पांच प्रकार का होता है। और तुम प्रेम की बकवास कर रहे हो और प्रकार तक का पता ही नहीं! क्या खाक तुम्हें प्रेम का पता होगा? अभी अ, ब, स, भी नहीं आता है तुम्हें प्रेम का। तुम्हें अभी प्रकार भी मालूम नहीं है। यह तो पह ली क्लास है प्रेम की। तो पहले प्रकार सीखो, प्रेम के संबंध में शास्त्र पढ़ो, प्रेम के सि द्धांत सीखो फिर प्रेम की बातें करा। वह फकीर बोला कि भूल हो गयी भाई, हम तो प्रेम ही करने लगे। यह तो गलती हो गयी। प्रकार सीखने के लिए किसी प्रेम के वि द्यालय में भर्ती होना था। मैं नहीं हो पाया। यह गलती हो गयी। उस पंडित ने कहा ि

क सुनो, मैं तुम्हें अपना शास्त्र सुनाता हूं। उसने शास्त्र सुनाया। बड़ी भारी व्याख्या की जैसी कि पंडितों की हमेशा से आदत रही है। वे भारी व्याख्यान करते रहे हैं, बिना इस बात को जाने कि जिसकी वे व्याख्या कर रहे हैं उसे वे जानते भी हनीं। उसने ब. डी बारीक व्याख्या की, बड़े सूक्ष्म तर्क उठाए। फकीर बिना कोई जवाब दिए शांति से सुनता रहा। पंडित ने सोचा ठीक है। फकीर प्रभावित है। क्योंकि पंडित एक ही बात जानता है। या तो विवाद करो या फिर शांत रह जाओ, विवाद मत करो। उसने देखा कि फकीर विवाद नहीं करता है तो वह मान रहा है। तब उसने कहा, सुनी पूरी बात? समझ में आयी? कैसा लगा? तुम्हें कैसा लगा मेरी बात सुन कर? उस फकीर ने कहा कि मुझे ऐसे लगा, जैसे एक दफा एक फूल की बगिया में एक जौहरी सोने को कसने के पत्थर को लेकर घूस आया और माली से बोला देखो कौन कौन फूल सच्चे हैं, मैं अभी पता लगाता हूं। और अपन सोने के पत्थर पर फूलों को घिस घिस कर देखने लगा। और सभी फूल कच्चे साबित हुए। सभी फूल झूठे साबित हुए। तो जैसा उस माली को लगा था वैसे ही मुझे लगा। जब तुम प्रेम के प्रकार करने लगे।

प्रेम की भाषा अभेद की भाषा है, ज्ञान की भाषा भेद की भाषा है ज्ञान तोड़ता है, ज्ञान विश्लेषण करता है, प्रेम जोड़ता है। विज्ञान तोड़ता है। तोड़ता चला जाता है। आखिर में मिलता है परमाणु, आखिरी टुकड़ा! प्रेम और धर्म जोड़ता चला जाता है, जोड़ता चला जाता है। आखिर में मिलता है परमात्मा। विज्ञान परमाणु पर पहुंचता है जो कि तोड़ता है, तोड़ता है। प्रेम परमात्मा पर पहुंचता है जो कि जोड़ता है, जोड़ता है। जोड़ने से द्वार मिलेगा परमात्मा का, तोड़ने से नहीं। इसलिए पहला सूत्र है ज्ञान को छोड़ दें। दूसरा सूत्र है प्रेम को फैलने दें और विकसित होने दें। लेकिन यह कैसे प्रेम फैलेगा और विकसित होगा? क्या जबरदस्ती किसी को जाकर प्रेम करना शुरू कर दीजिएगा? ऐसे लोग भी हैं जो जबरदस्ती भी करते हैं, सेवा करते हैं, इस आशा में कि शायद परमात्मा मिल जाए।

एक स्कूल में एक पादरी ने बच्चों को समझाया कि तुम प्रेम करो, सेवा करो। बिना एक सेवा का काम किए सोओ की मत। दूसरे दिन उसने बच्चों से पूछा कि तुमने कोई सेवा का, प्रेम का कृत्य किया? तीन बच्चों ने हाथ उठाए और कहा कि हमने किया। बड़ा खुश हुआ पादरी। तीस बच्चे थे। कम उठाए और कहा कि हमने किया। बड़ा खुश हुआ पादरी। तीस बच्चे पूछा कि तुमने क्या प्रेम का कृत्य किया? बच्चे ने कहा, मैंने एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार करवाई है। उस पादरी ने कहा, धन्यवाद। बहुत अच्छा किया दूसरे लड़के से पूछा, तुमने क्या किया? उसने कहा कि मैंने भी एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार करवाई है। पादरी को थोड़ा सा खयाल हुआ कि इन दोनों ने एक ही काम किया। उसने कहा तुम ने भी अच्छा किया। तीसरे बच्चे से पूछा तुमने क्या किया? उसने कहा मैंने भी एक बूढ़ी स्त्री को सड़क पार करवाई है। पादरी थोड़ा हैरान हुआ। उसने कहा, क्या तुम तीनों ने एक ही सेवा का कृत्य किया? तुमको तीन बूढ़ी स्त्रियां मिल गयी जिनको तुमने सड़क पर करवाई? उन्होंने कहा, नहीं, आप गलत समझे। तीन नहीं थीं। हम तीनों ने उसी को पार करवाया। उसने पूछा, क्या तुम

तीन लोगों की सहायता की जरूरत पड़ी उसको पार कराने में? उन बच्चों ने कहा, वह पार होना ही नहीं चाहती थी। हमने जबरदस्ती किसी तरह उसे पार किया। वह भागती थी। पार होना नहीं चाहती थी।

ये जो सेवक सारी दुनिया में सेवा करते हुए मालूम पड़ते हैं वे उसी तरह के खतरना क लोग हैं। ये जबरदस्ती सेवा किए चले जाते हैं। ये उन बूढ़े लोगों को सड़क पार क रवा देते हैं जिनको पार करना नहीं है। दुनिया में सेवकों ने जितना उपद्रव किया है उतना और किसी ने नहीं किया है। ये सोचते हैं कि इस भांति हम अपना मोक्ष तय कर रहे हैं। हमको क्या फिकर है कि आपको सड़क पार करनी या नहीं करनी है। ह म तो अपने मोक्ष का इंतजाम कर रहे हैं। आपको पार करना हो या न करना हो, ह म आप को पार करवाए देते हैं।

इस तरह को जबरदस्ती प्रेम और सेवा उत्पन्न नहीं होती। प्रेम कोई कृत्य नहीं है। प्रे म आपका प्राण बने, तभी सार्थक है। प्रेम आपका प्राण कैसे बनेगा? कैसे यह संभव ह ोगा कि प्रेम आपसे प्रवाहित हो उठे? यह छोटी सी बात अगर खयाल में आ जाए तो प्रेम को प्रवाहित होने में कोई भी बाधा नहीं है। और वह छोटी सी बात यह नहीं है कि आपके प्रेम से दूसरों को लाभ होगा, बल्कि वह छोटी सी बात यह है कि प्रेम के अतिरिक्त आप भी आनंद में प्रतिष्ठित नहीं हो सकेंगे। प्रेम आनंद में प्रतिष्ठा देता है । प्रेम किसी का कल्याण नहीं है। प्रेम आपका ही आनंद है। कभी आपने कोई ऐसा अ ानंद जाना है जो प्रेम से रिक्त और शून्य रहा हो? जब भी आप आनंद में रहे होंगे तब जरूर किसी प्रेम की दशा में ही आनंद में रहे होंगे। लेकिन प्रेम में खुद को खोना पड़ता है, छोड़ना पड़ता है। खुद को छोड़ने की सामर्थ्य जिसमें हैं, उसके भीतर उस के प्राण प्रेम से भर सकते हैं। हमने अपने को जरा भी छोड़ने को राजी नहीं हैं। हम आपने को खोने को राजी नहीं हैं जब कि खोने वाला हृदय, देनेवाला हृदय और बांट नेवाला हृदय ही प्रेम करने वाला, हृदय है।

यह जो मांगने वाला हृदय है, यही प्रेम न करने वाला हृदय है। हम सब चौबीस घंटे मांग रहे हैं। और जब सभी लोग मांग रहे हैं तो जिंदगी अगर घृणा से भर जाए, ि हसा से भर जाए तो आश्चर्य क्या? और अगर ईश्वर की हत्या हो जाए, तो आश्चर्य कैसा? इसमें कौन सी आश्चर्य की बात है? मांगने वाला हृदय धार्मिक हृदय नहीं है । बांटने वाला, देने वाला जरूरी नहीं है कि अपना कपड़ा बांट दें और धन बांट दें। य ह सवाल नहीं है। हृदय के बांटने वाले भाव को चौबीस घंटे मौके हैं, चौबीस घंटे चुन ौतियां हैं सब तरह से, सब तरह से। मौका है कि प्रेम आपके दिल में जगे और फैले। लेकिन इस प्रेम के लिए खोना पड़ेगा खुद को, देना पड़ेगा खुद को। खुद को खोए बि ना कोई रास्ता नहीं है। और खोने के दो रास्ते हैं। या तो नशा करें और अपने को ख ो दें जैसे कि सब लोग खोते हैं। शराब पीते हैं और खुद को खो देते हैं। राम राम ज पते हैं और इतनी देर जपते हैं दिमाग ऊब जाता है और नींद आ जाती है और खो जाते हैं। कोई नाटक देखता है, संगीत सुनता है और मूर्छित हो जाता है, खो जाता है। अपने के भूला देने के लिए, अपने को विस्तृत करने के लिए बहुत से रास्ते हैं। ए

क तो यह खोना है। यह खोना हम सारे लोग जानते ही हैं। लेकिन यह खोना नहीं है, यह सोना है। यह मूर्छित होना है।

एक और खोना है प्रेम में। प्रेम जो खोता है उसे आत्मा का स्मरण हो जाता है और नशे में जो खोता है उसे जो स्मरण है, वह भी भूल जाता है। प्रेम में कैसे खोएं? क्या करें? एक बात अगर खयाल में आ जाए तो प्रेम आग से बहेगा। और आप खो सकें गे। वह बात यह है स्वयं को एक इकाई की तरह समझ लेना भूल हैं। आप पैदा हुए हैं। आपको पता है कैसे और कहां से? आप मर जाएंगे। पता है कहां और क्यों? आप जीवित हैं। पता है कैसे? आपकी श्वास चल रही है। पता है कौन चला रहा है? क यों चल रही है? लोग कहते हैं कि में श्वास ले रहा हूं। कभी आपने सोचा है कि इस से ज्यादा झूठ और कोई बात हो सकती है कि आप कहें कि मैं श्वास ले रहा हूं? अ गर आप श्वास ले रहे हैं, तो फिर दुनिया में कोई आप को मार ही नहीं सकेगा। वह मारे, आप श्वास लेते चले जाए। फिर क्या होगा? फिर तो मृत्यु कभी न आ सकेगी । क्योंकि आप श्वास लेते चले जाएंगे। मृत्यु क्या करेगी? लेकिन हम सब जानते हैं ि क मृत्यु क्या करेगी? श्वास हम लेते नहीं हैं, श्वास चल रही है। और कहते हम यह हैं कि श्वास मैं ले रहा हूं। लेकिन जिंदगी भर कहते हैं कि मेरा जन्म। झूठा है यह बात। मेरा जन्म क्या हो रहा है, मैं कहा हूं? उसी जन्म में कहते हैं मेरी श्वास, मेरा जीवन।

इस मैं में व्यर्थ जुड़ते चले जाते हैं जो कि कहीं भी सच्चा नहीं है, और जो कि है भी नहीं। इसको जोड़ते जोड़ते हम मन में कल्पित कर लेते हैं फिर ऐसा लगता है कि मैं हूं। और यह मैं हूं मांगने लगता है। क्योंकि वह बिना मांगे जी नहीं सकता है। इक ट्ठा करने लगता है धन, ज्ञान, त्याग और पूछने है कि मैं मोक्ष कैसे जाऊं। स्वर्ग कैसे जाऊं? परमात्मा को कैसे पाऊं? वह सब मैं की वजह से है। मैं आपसे यह नहीं कह रहा हूं कि आप अहंकार छोड़ने की कोशिश करें। और यदि आपने कोशिश की तो क भी नहीं छोड़ पाएंगे, क्योंकि छोड़ने की कोशिश कौन करेगा? वही मैं। और हो सकत ा है कि एक दिन वह यह घोषणा कर दे कि मैं सब बिलकुल अहंकारी नहीं हूं। मैं तो अब बिलकुल विनम्र हो गया हूं, अहंकार तो मुझे में है ही नहीं। तो छोड़ने की कोि शश से वह नहीं जाएगा। जिस दिन जीवन को उसकी समग्रता में देखेंगे उसी दिन उस सम्यक दर्शन के प्रकाश में वह नहीं पाया जाएगा। जिस दिन दिखेगा, जन्म अज्ञात है , यात्रा अज्ञात है, मृत्यु अज्ञात है, उसी दिन वह विसर्जित हो जाएगा।

फिर उसे छोड़ना नहीं पड़ेगा, वह विलीन हो जाएगा, वह पाया नहीं जाएगा। एक हंस ी आएगी और लगेगा कि मैं तो था ही नहीं और जिस दिन यह दिखाई पड़ेगा कि मैं नहीं है उसी दिन दिखाई पड़ेगा वह जो है। उसका नाम ही परमात्मा है और उसी दि न वह बहने लगेगा जिसका नाम प्रेम है। उसी दिन सारे हृदय के द्वारों से एक प्रेम क ी गंगा चारों तरफ बहने लगेगी। एक प्रकाश, एक आनंद, एक थिरक और एक संगीत स्वयं में पैदा हो जाएगा। उस पुलक और संगीत का नाम धर्म है। उस पुलक, संगीत प्रेम और आलोक में जो जाना चाहता है उसी का नाम परमात्मा है।

पत्थरों का परमात्मा मर गया है और अगर हम प्रेम के परमात्मा को जन्म नहीं दे सकें तो फिर मनुष्य जाति को बिना परमात्मा के रहना होगा और सोच सकते हैं कि बिना परमात्मा के मनुष्य जाति का क्या होगा? जीवन में जो भी पाने जैसा है वह प्रेम है। क्यों? क्योंकि प्रेम परमात्मा की सुगंध है और जो प्रेम को पा लेता है, वह धीरे-धीरे सुगंध के मूल स्रोत को पा लेता है। वह परमात्मा किसी का भी नहीं है और बस का है। वह परमात्मा किसी मंदिर और मस्जिद में कैद नहीं है और वह परमात्मा किसी मूर्ति में आबद्ध नहीं है। वह सब तरफ फैला है। उसे देखने वाली प्रेम की आंखें चाहिए। अंधे शास्त्रों को पढ़ते रहेंगे उससे कुछ नहीं होगा और प्रेम की आंखवाले आंख खोल कर देख लें तो सब आनंद ही जाता है।

ये दो सूत्र मैंने कहे—ज्ञान के तट से जंजीरें तोड़ लें और प्रेम के आकाश की यात्रा में पंख खोल दें। पाल खोल दें। प्रेम की हवाएं आपको ले जाएगी, लेकिन ये दोनों बातें तभी हो सकती हैं जब इन दोनों के बीच एक मध्य बिंदु हो, वह मैंने से अंत में कहा। वह आपका अहंकार है। अहंकार छोड़ें तो ही ज्ञान से छुटकारा हो सकता है और अहंकार जाए तो ही प्रेम के और परमात्मा के द्वार खुल सकते हैं। अहंकार बिलकुल भी नहीं है। उसको विदा करना है जो है ही नहीं। उससे हाथ जोड़ना है जो है ही नहीं। ताकि उसे पाया जा सके जो है, सदा से है, सदा रहोगे, अभी है, यहीं हैं।

अहंकार

एक पूर्णिमा की रात में एक छोटे से गांव में, एक बड़ी अदभुत घटना घट गई। कुछ जवान लड़कों ने शराबखाने में जाकर शराब पी ली और जब वे शराब के नशे में मदमस्त हो गए और शराब गृह से बाहर निकले तो चांद की बरसती हुई चांदनी में यह खयाल आ गया कि नदी पर जाए और नौका विहार करें। रात बड़ी सुंदर थी और नशे से भरी हुई थी। वे गीत गाते हुए नदी के किनारे पहुंच गए। नाव वहां बंधी थी। मछुवे नाव बांधकर घर जा चुके थे। रात आधी हो गयी थी। सुबह की ठंडी हवाओं ने उन्हें सचेत किया। उनका नशा कुछ कम हुआ और उन्होंने सोचा कि हम न मालूम कितने दूर निकल आए हैं। आधी रात से हम नाव चला रहे हैं, न मालूम किनारे और गांव से कितने दूर आ गए हैं। उनमें से एक ने सोचा कि उचित है कि नीचे उत्तर कर देख लें कि हम किस दिशा में आ गए हैं। लेकिन नशे में जो चलते हैं उन्हें दिशा का कोई भी पता नहीं होता है कि हम कहां पहुंच गए हैं और किस जगह हैं। उन्होंने सोचा जब तब हम इसे न समझ लें तब तक हम वापस भी कैसे लौटेंगे। और फिर सुबह होने के करीब है, गांव के लोग चिंतित हो जाएंगे।

एक युवक नीचे उतरा और नीचे उतरकर जोर से हंसने लगा। दूसरे युवक ने पूछा, हंसते क्यों हो? बात क्या है? उसने कहा, तुम भी नीचे उतर आओ और तुम भी हंसो। वे सारे लोग नीचे उतरे और हंसने लगे। आप पूछेंगे बात क्या थी? अगर आप भी उस नाव में होते और नीचे उतरते तो आप अभी हंसते। बात ही कुछ ऐसी थी। वे कहीं के वही खड़े थे, नाव कहीं भी नहीं गयी थी। असल में वे नाव की जंजीर खोल

ना भूल गए थे। नाव की जंजीर किनारे से बंधी थी। उन्होंने बहुत पतवार चलायी थी और बहुत श्रम किया था लेकिन सारा श्रम व्यर्थ हो गया था क्योंकि किनारे से बंधी हुई नावें कोई यात्रा नहीं करती।

मनुष्य की आत्मा की नाव भी किसी खूंटी से बंधी है। और इसीलिए उसकी आत्मा क ी कभी परमात्मा तक नहीं पहुंच पाती है। वे वहीं खड़े रह जाते हैं जहां से यात्रा शुरू होती है। श्रम वे बहुत करते हैं, पतवार वे बहुत चलाते हैं, समय वे बहुत लगाते हैं लेकिन नाव कहीं पहुंचती नहीं है। और आदमी उस खूंटी से बंधा हुआ एक कोल्हू के बैल की तरह चक्कर लगाता है। एक ही जगह पर घूमता है। घूमते-घूमते नष्ट और समाप्त हो जाता है। सारा जीवन इन्हीं चक्करों में व्यर्थ चला जाता है।

एक गांव में मैं गया था। एक बैल कोल्हू चलाने का जीवन भर काम करता रहा। फि र वह बूढ़ा हो गया और बैल के मालिक ने उसे काम के योग्य न समझ कर छोड़ दि या। अब वह खुला ही घूमता रहता था। लेकिन मैं बड़ा हैरान हुआ। वह गोल चक्करों में ही घूमता था। खेत में उसे छोड़ देते तो वह गोल चक्कर लगाता था। जीवन भर की उनकी आदत थी। आज कोई बीच में खूंटी भी नहीं थी। आज किसी कोल्हू में भ ी वह नहीं जुता था। लेकिन जीवन भर गोल चक्करों में जो घूमा है वह गोल चक्करों में घूमने की आदत के कारण फिर भी गोल गोल ही घूमता था। गांव के लोगों ने उ स बैल को समझाने की बहुत कोशिश की, कि इस तरह मत घूमो, लेकिन बैल कहीं किसी की सुनते हैं? बैल तो दूर, आदमी ही नहीं सुनते तो बैल कैसे सुनेंगे? उस गांव के लोग कैसे नासमझ थे, उस बैल को समझाते थे कि सीधे चलो, गोल गोल घूमने की कोई भी जरूरत नहीं है क्योंकि जो गोल गोल घूमता है वह कहीं भी नहीं पहुंचत ा है। जिसे पहुंचना हो, उसे सीधा जाना होता है, गोल नहीं घूमना होता है। मुझे हंसी आयी थी उन गांव के लोगों पर। मैं भी उस गांव के लोगों को समझाने गया था। ग ांव के एक बूढ़े आदमी ने कहा कि तुम हम पर हंसते हो कि हम बैलों को समझाते हैं और हम तुम पर हंसते हैं कि तुम आदमी को समझाते हो। न बैल सुनते हैं, न आ दमी सुनता है और बैल तो सुन भी सकते हैं कभी क्योंकि बैल सीधे और सरल हैं। आदमी तो बहुत तिरछा है, वह नहीं सुन सकता है।

लेकिन फिर भी चाहे यह गलती ही सही, नासमझी ही सही, आदमी को समझाना ही पड़ोगे। वह सुने या न सुने उसे कहना ही पड़ेगा। क्या कहना है उसे? उस खूंटी के बाबत उसे कहना है जिससे बंधा हुआ वह एक कोल्हू का बैल बन जाता है, एक अमृ तमयी आत्मा नहीं। वह एक बंधा हुआ पशु बन जाता है। शायद आपको पता न हो ि क पशु शब्द का अर्थ क्या होता है? पशु शब्द का अर्थ ही होता है जो पाश में बंधा हो। बंधे हुए होने को ही पशु कहते हैं। पशु का अर्थ है जो पाश में बंधा है, किसी जं जीर में बंधा है, किसी कील से ठुका है। जो बंधा है वही पशु है। हम सारे लोग ही बंधे हैं। हमारे भीतर मनुष्य का भी जन्म नहीं हो पाता, परमात्मा तो बहुत दूर की मंजिल है। अभी तो आदमी भी होना बहुत कठिन है।

डायोजनीज का नाम सुना होगा, जरूर सुना होगा। और यह भी हो सकता है कि वह कहीं न कहीं आपको मिल गया हो। सुनते हैं दो हजार साल पहले वह पैदा हुआ था और दिन की भरी रोशनी में जलती हुई लालटेन लेकर गांवों में घूमा करता था और हर आदमी के चेहरे के पास लालटेन ले जाकर देखता था। लोग चौंक जाते थे कि क्या बात है! क्या देखना चाहता है! और दिन की रोशनी में जब कि सूरज आकाश में हो, लालटेन किसलिए लिए हुए हैं? दिमाग खराब हो गया है? वह कहता, दिमाग मेरा खराब नहीं हुआ है। मैं आदमी की तलाश में हूं। मैं हर आदमी के चेहरे को रोशनी में देखने की कोशिश करता हूं, आदमी है या नहीं? क्योंकि चेहरे बहुत धोखा देते हैं। चेहरों से ऐसा मालूम होता है कि सब आदमी हैं और भीतर आदमियत का कोई निवास नहीं होता है।

आदमी भी होना कठिन है, परमात्मा तो दूर की मंजिल है। लेकिन यह भी आपसे कहूं, जो आदमी हो जाता है उसके लिए परमात्मा की मंजिल भी बहुत निकट हो जाती है। कौन सी चीज है जो हमें बांधे हैं जिसके कारण हम पशु हो जाते हैं?

एक छोटी सी कहानी से शायद इशारा खयाल में आ सके कि कौन सी चीज हमें बांध हुए है, कौन चीज के इर्द गिर्द हम जीवन भरी घूमते हैं और नष्ट हो जाते हैं। कुछ ऐसी चीज है जिसके पीछे हम पागल की तरह चक्कर लगाते हैं और व्यर्थ नष्ट हो जाते हैं।

एक जंगल के पास एक छोटा सा गांव था। और एक दिन सुबह एक सम्राट शिकार खेलने में भटक गया और उस गांव में आया। रात भर का थका मांदा था और उसे भूख लगी थी। वह गांव के पहले ही झोपड़े पर रुका और उसे झोपड़े के बूढ़े आदमी को कहा, क्या मुझे दो अंडे उपलब्ध हो सकते हैं? थोड़ी चाय मिल सकती है? उस बूढे आदमी ने कहा जरूर, स्वागत है आपका! आइए! वह सम्राट बैठ गया उस झोपड़े में। उसे चाय और दो अंडे दिए गए। नाश्ता कर लेने के बाद उसने पूछा कि इन अंडों के दाम कितने हुए उस बूढ़े आदमी ने कहा, ज्यादा नहीं, केवल १०० रु.। सम्राट तो हैरान हो गया। उसने बहुत महंगी चीजें खरीदी थीं, लेकिन कभी सोचा भी नहीं था कि दो अंडों के दाम भी १०० रु. हो सकते हैं। उस सम्राट ने उस बूढ़े आदमी को पूछा, क्या इतना कठिन है अंडे का मिलना यहां? वह बूढ़ा आदमी बोला, नहीं। अंडे तो बहुत मुश्किल नहीं हैं, बहुत होते हैं, लेकिन राजा मिलना बहुत मुश्किल है। राजा कभी कभी मिलते हैं। उस सम्राट ने १०० रु. निकाल कर उस बूढ़े को दे दिए और अपने घोड़े पर सवार होकर चला गया।

उस बूढ़े की औरत ने कहा, कैसा जादू किया तुमने कि दो अंडे के सौ रुपये वसूल कर लिए। क्या तरकीब थी तुम्हारी? उस बूढ़े ने कहा, मैं आदमी की कमजोरी जानता हूं। जिसके आसपास आदमी जीवन भर घूमता है वह खूंटी मुझे पता है। और खूंटी को छू दो और आदमी एकदम घूमना शुरू हो जाता है। मैंने वह खूंटी छू दी और राजा एकदम घूमने लगा। उसकी औरत ने कहा, मैं समझी नहीं। कौन सी खूंटी? कैसा

घुना? उस बढ़े ने कहा, तुझे मैं एक और घटना बताता हूं अपनी जिंदगी की। शायद उससे तुझे समझ में आ आए।

जब मैं जवान था तो मैं एक राजधानी गया। मैंने वहां एक सस्ती सी पगड़ी खरीदी िजसे के दाम तीन चार रुपए थे। लेकिन पगड़ी बड़ी रंगीन और चमकदार थी। जैसी िक सस्ती चीजें हमेशा रंगीन और चमकदार होती हैं। जहां बहुत रंगीनी हो और बहुत चमक हो, समझ लेना भीतर सस्ती चीज होनी ही चाहिए। सस्ती थी लेकिन तब भी बहुत चमकदार थी, बहुत रंगीन थी। मैं उस पगड़ी को पहनकर सम्राट के दरबार में पहुंच गया। सम्राट की आंख एकदम से उस पगड़ी पर पड़ी। क्योंकि दुनिया में ऐसे लोग बहुत कम हैं जो कपड़े के अलावा कुछ और देखते हों। आदमी को कौन देखता है? आत्मा को कौन देखता है? पगड़ियां भर दिखाई पड़ती हैं। उस सम्राट की नजर एकदम पगड़ी पर गई और उसने कहा, कितने में खरीदी है? बड़ी सुंदर रंगीन है। मैंने उस सम्राट से कहा, पूछते हैं कितने में खरीदी है? पांच हजार रुपए खर्च किए हैं इस पगड़ी के लिए। सम्राट तो एकदम हैरान हो गया लेकिन इससे पहले कि सम्राट कुछ कहता, वजीर ने उसके सिंहासन के पास झुककर सम्राट के कान में कुछ कहा। उसने सम्राट के कान में कहा कि सावधान! आदमी धोखेबाज मालूम होता है। दो चार पांच रुपए की पगड़ी के पांच हजार दाम बता रहा है। बेईमान है। लूटने के इरादे हैं। उस बूढ़े ने अपनी पत्नी को कहा, मैं फौरन समझ गया कि वजीर क्या कह रहा है। जो लोग किसी को लूटते रहते हैं वे दूसरे लूटने वाले से बड़े सचेत हो जाते हैं। लेकिन मैं भी हारने को राजी नहीं था। मैं वापस लौटने लगा। मैंने उस सम्राट को कहा िक मैं जाऊं? क्योंकि मैंने जिस आदमी से यह पगड़ी खरीदी है उसने मुझे यह वचन िदया है कि इस पृथ्वी पर एक ऐसा सम्राट भी है जो इस पगड़ी के पचास हजार भी दे सकता है। मैं उसी सम्राट की खोज में निकला हुआ हूं? तो मैं जाऊं? आप वह सम्राट नहीं हैं। यह राजधानी वह राजधानी नहीं है। यह दरबार वह दरबार नहीं है जहां यह पगड़ी बिक सकेगी। लेकिन कहीं बिकेगी, मैं जाता हूं।

उस सम्राट ने कहा, पगड़ी रख दो और पचास हजार रुपए ले लो। वजीर बहुत हैरान हो गया। जब और कहा हद कर दी। हम भी बहुत कुशल हैं लूटने में लेकिन यह तो जादू हो गया। मामला क्या है? तो मैंने वजीर के कामन मग कहा कि तुम्हें पता होगा कि पगड़ियों के दाम कितने होते हैं, लेकिन मुझे आदमियों की कमजोरियां का पता है। मुझे उस खूंटी का पता है जिसको छू दो और आदमी एकदम घूमने लगता है। पता नहीं वह बूढ़ी समझा पाई अपने पति की यह बात या नहीं। लेकिन आप समझ गए होंगे। आप पहचान गए होंगे कि आदमी किस खूंटी से बंधा है। अहंकार के अतिरिक्त आदमी के जीवन में और कोई खूंटी नहीं है। और जो अहंकार से बंधा है वह और हजार तरह से बंध जाएगा। और जो अहंकार से मुक्त हो जाता है वह और सब भांति भी मुक्त हो जाता है। एक ही स्वतंत्रता है जीवन में, एक ही मुक्ति है, एक ही मोक्ष है और एक ही द्वार है प्रभु का और वह वह है अहंकारी की खूंटी से मुक्त हो जाना। एक ही धर्म है, एक ही प्रार्थना है, एक ही पूजा है और वह है अहंकार से मु

क्त हो जाना। एक ही मंदिर है, एक ही मस्जिद है, एक ही शिवालय है। जिस हृदय में अहंकार नहीं वही मंदिर है, वही मस्जिद है, वही शिवालय है।

जीवन को देखने की दी दृष्टियां हैं और जीवन को जीने के दो ही ढंग हैं। या तो अहंकार के इर्दगिर्द जियो या निरहंकार के। जो अहंकार से बंधा है वह पृथ्वी से बंधा रह जाता है। और निरहंकार में जो उठते हैं आकाश उनका हो जाता है। आकाश की स्वतंत्रता उनकी हो जाती है। जीवन में विराट तक पहुंचने का मार्ग खुल जाता है। क्यों? क्योंकि जो क्षुद्र से मुक्त होता है वह विराट से संयुक्त हो जाता है। यह तो गणित की तरह सीधा सा नियम है। यह तो एक सार्वभौम (न्नदपअमतेंस) नियम है। जो क्षुद्र से बंधा है वह विराट से वंचित हो जाएगा। और जो क्षुद्र से मुक्त हो जाता है वह विराट में प्रविष्ट हो जाता है।

एक पानी की बूंद थी। वह समुद्र होना चाहती थी। वह बूंद मुझसे पूछने लगी, मैं समुद्र कैसे हो जाऊंगी? मैंने उस बूंद को कहा, बड़ी छोटी और एक ही तरकीब है। बूंद अगर बूंद होने से राजी है, अगर बूंद, बूंद ही बनी रहने में सुखी है तो समुद्र से मिलने का कोई रास्ता नहीं है। लेकिन अगर तू बूंद की भांति मिटने को राजी हो जा तो मिटते ही सागर हो जाएगी। उस बूंद ने मेरी बात मान ली। वह सागर में कूद गई। उसे खो दिया अपने को। उसने अपने अहंकार को धो डाला। वह सागर से एक हो गई लेकिन उसने कुछ खोया नहीं। उस बूंद ने खोया बूंद होना और वह हो गई सागर। इसे कोई खोना कहेगा? इसे कोई मिटना कहेगा? अगर मिटना है तो फिर पाना और क्या हो सकता है।

हम अहंकार की खूंटी में बंधे हुए हैं और परमात्मा के सागर को खोजने निकल पड़े हैं। हम अहंकार की छोटी क्षुद्र बिंदु बने हुए हैं और विराट के, असीम के साथ एक होने की कामना ने हमें पीड़ित कर रखा है। हम भी इनके किनारे से बंधे हुए हैं और सागर की यात्रा, अज्ञात सागर की यात्रा का हमने स्वीकार कर लिया है। इन्हीं दोनों के बीच खिंच खिंच कर आदमी नष्ट हो जाता है कबीर कहते थे, उसकी गली बहुत संकरी है, वहां दो नहीं समा सकेंगे। या तो वही हो सकता है या फिर हम हो सकते हैं।

हमारा सारा जीवन अहंकार को परिपुष्ट करने में व्यतीत होता है, विसर्जित करने में नहीं। हम उसे मजबूत करते हैं जो हमारी पीड़ा है। हम उसी घाव को गहरा करते हैं जो हमारा दुख है। हम उसी बीमारी को पान सींचते हैं जो प्राण लिए लेती है। अहंकार को सींचने के सिवाय हम जीवन भर और करते ही क्या है? किसलिए उठाते हैं यह मकान, आकाश को छू लेने वाले? आदमी के रहने के लिए? झूठी है यह बात। अहंकार का निवास बनाने के लिए, आदमी के रहने के लिए छोटे झोपड़े भी काफी हैं लेकिन अहंकार के लिए बड़े से बड़े मकान भी छोटे हैं। अहंकार उठाता है बड़े मकानों को कि आकाश छू लें। किसलिए विजय यात्राएं चलती हैं? किसलिए सिकंदर, नेपोलियन और चंगेज पैदा होते हैं? जीने से चंगेज का, सिकंदर का, नेपोलियन का क्या वास्ता? लेकिन नहीं, अहंकार की यात्राएं बड़ी दूर ले जाती हैं आदमी को।

सिकंदर जिस दिन मरने को था बहुत उदास था। किसी ने पूछा कि तुम इतने उदास क्योंकि हो? सिकंदर ने कहा कि मैं इसलिए उदास हूं कि सारी दुनिया को मैंने करीब करीब जीत लिया। अब बड़ी कठिनाई में मैं पड़ गया हूं। दूसरी कोई दुनिया ही नहीं जिसको मैं आगे जीतूं और अब मेरे भीतर बड़ा खालीपन मालूम होता है। क्योंकि ज ब तक मैं जीतता न रहूं तब तक मुझे कोई चैन नहीं और दुनिया समाप्त होने के क रीब आ गई है। दूसरी कोई दुनिया नहीं है। मैं क्या जीतूं?

अहंकार दुनिया को जीत ले तो फिर दूसरी दुनिया को जीतने की आकांक्षा शुरू हो ज ाती है।

अमरीका का एक बहुत बड़ा करोड़पति कारनेगी मरणशैया पर पड़ था। एक मित्र ने उससे पूछा कितनी संपत्ति तुमने जीवन में इकट्ठी की है? उसने कहा--ज्यादा नहीं, के वल दस अरब। मित्र ने कहा--दस अरब! और कहते हो ज्यादा नहीं! कारनेगी ने क हा, मेरे इरादे सौ अरब इकट्ठा करने के थे, लेकिन बुढ़ापा निकट आ गया, योजना अ धूरी रही जाती है।

क्या आप सोचते हैं कि कारनेगी सौ अरब इकट्ठा कर लेता तो कोई फर्क पड़ जाता? जरा भी फर्क नहीं पड़ने वाला था। आदमी को हम भली भांति जानते हैं। फर्क जरा भी नहीं पड़ कसता था। कारनेगी के पास भी अरब इकट्ठे हो जाते तो कारनेगी के इ रादे हजार अरब पर पहुंच जाते। आदमी का इरादा उसके आगे चलता है। आदमी क ी वासना उसके आगे चलती है। आदमी हमेशा पीछे रह जाता है। मंजिल जिसको वह छूना चाहता है और आगे हट जाती है। अहंकार दौड़ता है और दौड़ता है, लेकिन क हीं भी पहुंचता नहीं है। एक छोटी सी बच्चों की कथा है। अलाइस नाम की एक लड़ की स्वर्ग में पहुंच गई, परियों के देश में। पृथ्वी से स्वर्ग तक पहुंचते पहुंचते बहुत थक गई थी। स्वर्ग में पहुंचते ही, परियों के देश में पहुंचते ही उसे दिखाई पड़ा कि दूर ए क आम की घनी छाया के नीचे परियों की रानी खड़ी है और उसके पास फूलों के अ ौर मिठाइयों के थाल सजे हैं और वह रानी उस भूखी अलाइस को बुला रही है कि आ जाओ। वह दिखाई पड़ रही है। उसकी आवाज सुनाई पड़ती है कि अलाइस आ ज ा। अलाइस दौड़ना शुरू कर देती है। सुबह है, सूरज निकल रहा है। फिर दोपहर हो जाती है। सूरज ऊपर आ गया है और अलाइस दौड़ी चली जा रही है। अब वह थक गई है। उसने खड़ी होकर चिल्लाकर पूछा कि कैसी दुनिया है तुम्हारी! सुबह से मैं दौ ड रही हूं लेकिन मेरे और तुम्हारे बीच का फासला पूरा नहीं होता! तुम उतनी ही दू र मालूम पड़ती हो रानी! रानी ने चिल्लाकर कहा, घबरा मत, दौड़ती आ। जो दौड़ ते हैं वे पहुंच जाते हैं। खड़ी होकर समय मत खो। थोड़ी देर में सूरज ढल जाएगा औ र सांझ आ जाएगी। दौड़ जल्दी आ।

अलाइस और तेजी से दौड़ने लगी। सूरज जैसे जैसे नीचे उतरने लगा अलाइस और ते ज दौड़ रही है और तेज दौड़ रही है। लेकिन न मालूम कैसी पागल दुनिया है। रानी उतनी ही दूर, रानी और उसके बीच का फासला कम नहीं होता। फिर वह थक कर चकनाचूर होकर गिर पड़ती है और चिल्लाती है कि मामला क्या है? ये कैसे रास्ते हैं

परियों के देश के कि मैं सुबह से दौड़ रही हूं, सूरज डूबने के करीब आ गया और अब तक तुम्हारे पास पहुंचा नहीं पाई। तुम उतनी दूर खड़ी हो जितनी सुबह थी? व ह रानी खूब हंसने लगी। उसने कहा पागल! परियों के देश में ही रास्ते ऐसे नहीं है, आदमियों के देश में भी रास्ते ऐसे ही हैं। लोग दौड़ते हैं, लेकिन पहुंचते कभी भी नहीं । फासला उतना ही बना रहता है।

जन्म के साथ आदमी जहां होता है मरने के साथ भी अपने को वहीं पाता है। कोई फ ासला पूरा नहीं होता, कोई यात्रा पूरी नहीं होती। जिस अहंकार को हम भरने चले हैं वह एकदम झूठी इकाई (थंसेम मदजपजल) है। वह होती तो भर भी जाती। वह हो ती तो हम उसे पूरा भी कर लेते। वह होती तो हम उसकी पूर्ति का कोई न कोई रा स्ता खोज लेते। लेकिन अहंकार है झूठी इकाई। आदमी के भीतर अहंकार से ज्यादा ब. डा असत्य नहीं है। वह है ही हनीं। मैं जैसी कोई भी चीज शब्दों के अतिरिक्त और कहीं भी नहीं है। और जिस दिन शब्दों को छोड़कर भीतर झांकेंगे तो वहां किसी मैं को नहीं पाएंगे। कभी किसी ने नहीं पाया है।

मैं एक शब्द मात्र है, मैं एक संज्ञा मात्र है, एक काम चलाऊं शब्द है। हमारे सभी शब द काम चलाऊ हैं। एक आदमी का नाम हम रख लेते हैं। दूसरे लोगों के पुकारने के लिए नाम रख लेते हैं ताकि दूसरे लोग पुकारें तो पता चले कि किसको पुकार रहे हैं । दूसरे को पुकारने के लिए होता है नाम और खुद को पुकारने के लिए होती है मैं की इकाई, अन्यथा हम क्या पुकारें अपने आपको? कहते हैं मैं। यह शब्द काम दे देता है जीवन में। लेकिन यह शब्द झूठा है। इसके पीछे कोई भी सत्य नहीं है, यह बिलकु ल छाया है। इसके पीछे कोई भी वस्तु नहीं, कोई भी पदार्थ नहीं। यह बिलकुल झूठी छाया है और इस छाया को हम घेरने में, दौड़ने में लगे रहते हैं, छाया को ही पकड़ ने में लगे रहते हैं।

एक संन्यासी एक घर के सामने से निकल रहा था। एक छोटा सा बच्चा घुटने टेक क र चलता था। सुबह थी और धूप निकली थी और उस बच्चे की छाया आगे पड़ रही थी। वह बच्चा छाया में अपने सिर को पकड़ने के लिए हाथ ले जाता है, लेकिन जब तक उसका हाथ पहुंचता है छाया आगे बढ़ जाती है। बच्चा थक गया और रोने लगा । उसकी मां उसे समझाने लगी कि पागल यह छाया है, छाया पकड़ी नहीं जाती। लेकि कन बच्चे कब समझ सकते हैं कि क्या छाया है और क्या सत्य है? जो समझ लेता है कि क्या छाया और क्या सत्य, वह बच्चा नहीं रह जाता। वह प्रौढ़ होता है। बच्चे कभी नहीं समझते कि छाया क्या है, सपने क्या हैं, झूठ क्या है।

वह बच्चा रोने लगा। कहा कि मुझे तो पकड़ना है इस छाया के सिर को। वह संन्या सी भीख मांगने आया था। उसने उसकी मां को कहा, मैं पकड़ा देता हूं। वह बच्चे के पास गया। उस रोते हुए बच्चे की आंखों से आंसू टपक रहे थे। सभी बच्चों की आंख ों से आंसू टपकते हैं। जिंदगी भर दौड़ते हैं और पकड़ नहीं पाते। पकड़ने की योजना ही झूठी है। बूढ़े भी रोते हैं और पकड़ नहीं पाते। पकड़ने की योजना ही झूठी है। बूढ़े भी रोते हैं और बच्चे भी रोते हैं। वह बच्चा भी रो रहा था तो कोई ना समझी तो

नहीं कर रहा था। उस संन्यासी ने उसके पास जाकर कहा, बेटे रो मत। क्या करना है तुझे? छाया पकड़नी है? उस संन्यासी ने कहा, जीवन भर भी कोशिश करके थक जाएगी, परेशान हो जाएगा। छाया को पकड़ने का यह रास्ता नहीं है। उस संन्यासी ने उस बच्चे का हाथ पकड़ा और उसके सिर पर हाथ रख दिया। इधर हाथ सिर पर गया, उधर छाया के ऊपर भी सिर पर हाथ गया। संन्यासी ने कहा, देख, पकड़ ली तू ने छाया कोई सीधा पकड़ेगा तो नहीं पकड़ सकेगा। लेकिन अपने को पकड़ लेना तो छाया पकड़ में जा जाती है।

जो अहंकार को पकड़ने के लिए दौड़ता है वह अहंकार को कभी नहीं पकड़ पाता। अ हंकार मात्र छाया है। लेकिन जो आत्मा को पकड़ लेता है, अहंकार उसकी पकड़ में आ जाता है। वह तो छाया है। उसका कोई मूल्य नहीं। केवल वे ही लोग तृप्ति को, केवल वे ही लोग आप्तकामता को उपलब्ध होत हैं जो आत्मा को उपलब्ध होते हैं। आत्मा और अहंकार के बीच चुनाव है। आत्मा और अहंकार के बीच सारा विकल्प है , आत्मा और अहंकार के बीच जीवन की सारी व्यथा, सारी पीड़ा है। जो अहंकार क ी तरफ जाते हैं वे भटक जाते हैं। वे गलत खूंटी के पास जीवन को घुमाते हैं। लेकिन जो अहंकार से पीछे हटते हैं और उसकी तरफ जाते हैं जो मूल है जो भीतर है, जो मैं हूं वस्तुतः, जो मेरी आत्यंतिक सत्ता है, उसे उपलब्ध हो जाते हैं और उनके लिए छायाएं देखने को नहीं रह जाती। दुनिया में दो ही तरह की यात्राएं हैं—अहंकार को भरने की यात्रा है और आत्मा को उपलब्ध करने की यात्रा है। लेकिन अहंकार से जो बंध जाते हैं वे आत्मा से वंचित रह जाते हैं।

यह अहंकार क्या हम छोड़ने की कोशिश करें? नहीं, अगर छोड़ने की कोशिश की तो अहंकार से कभी मुक्त नहीं हो सकेंगे। छाया न तो पकड़ी जा सकती है और न छोड़ ी जा सकती है। जो चीज छोड़ी जा सकती है वह पकड़ी भी जा सकती है। अहंकार न पकड़ा जा सकता है, न छोड़ा जा सकता है। इसलिए पकड़ने वाले तो भूल में पड़ते हैं। छोड़ने वाले और भी भूल में पड़ जाते हैं। अहंकार के रास्ते बड़े सूक्ष्म हैं। छाया बड़ी सूक्ष्म हैं, पकड़ में नहीं आती और छोड़ने में भी नहीं आती। जो लोग सोचते हैं कि अहंकार छोड़ देंगे वे और भी बड़ी भूल में पड़ जाते हैं। आज तक किसी ने अहंक ार को छोड़ा नहीं है। क्योंकि अहंकार पकड़ा भी नहीं जा सकता और छोड़ा भी नहीं जा सकता। तो फिर हम क्या करें।

अहंकार जाना जा सकता है, अहंकार पहचाना जा सकता है, अहंकार की प्रत्यभिज्ञा (त्तमबवहदपजपवद) हो सकती है, अहंकार का बोध हो सकता है अहंकार के प्रति जा गरूक हो सकते हैं। और जो आदमी अहंकार के प्रति जागरूक हो जाता है उसका अहं कार विसर्जित हो जाता है। मनुष्य की निद्रा में अहंकार है, मनुष्य के जागरण में नहीं । जैसे ही कोई जाग कर देखने की कोशिश करता है, कहां है अहंकार, वैसे ही अंधक ार हटने लगता है।

एक गांव में एक घर था। उस घर में बड़ा अंधकार था और कोई हजार साल से अंधे रा था। उस गांव के लोग उस घर में नहीं जाते थे। मैं उस गांव में गया। मैंने कहा,

इस घर को ऐसा ही क्यों छोड़ रखा है। गांव वालों ने कहा, इस घर में हजारों साल से अंधेरा है। मैंने कहा, अंधेरे की कोई ताकत होती है? दिया जलाओ और भीतर प हुंच जाओ। उन्होंने कहा—दिया जलाने से क्या होगा? यह कोई एक रात का अंधेरा न हीं हैं, हजारों साल का अंधेरा है। हजारों साल तक दिए जलाओ तब कहीं खत्म हो सकता है। गणित बिलकुल ठीक था। बिलकुल तर्कसंगत थी यह बात। मैं भी डरा। बा त तो ठीक थी। हजारों साल में घिरा अहंकार कहीं एक दिन के दिए जलाने से दूर ह ो सकता है? फिर भी मैंने कहा, एक कोशिश तो करके देख ही लें। क्योंकि जिंदगी में कई बार गणित काम नहीं करता और तर्क व्यर्थ हो जाता है। जिंदगी बड़ी अनूठी है। वह तर्कों के पास से चली जाती है और गणित से दूर निकल जाती है। गणित में हमेशा दो और दो चार होते हैं, जिंदगी में कभी पांच भी हो जाते हैं और तीन भी ह ो जाते हैं। जिंदगी गणित नहीं है। तो चलें देख लें।

वे लोग राजी नहीं हुए और कहा कि जाने से फायदा क्या है? हमें नहीं पसंद है यह बात। हमारे बाप दादा भी यही कहते थे। उन्होंने कहा कि दिए मत जलाना। हजारों साल का अंधेरा है। उनके बाप दादों ने भी यही कहा था और आप तो बड़े परंपरा के विरोधी मालूम होती हैं। आप शास्त्रों को नहीं मानते। बुजुर्गों को नहीं मानते हैं। हम नासमझ हैं? हमारे गांव में तो लिखा हुआ रखा है कि इस घर में दिया मत जलाना यह हजारों साल का पुराना अंधेरा है, मिट नहीं सकता। फिर भी मैंने उन्हें बामुश्कि ल राजी किया कि चलो देख तो लें। बहुत से बहुत यही होगा कि हम असफल होंगे। मुश्किल से वे जाने को राजी हुए। दिया जलते ही वहां तो कोई भी अंधेरा नहीं था। वे बहुत हैरान हुए। उन्होंने कहा, कहां गया अंधेरा! मैंने कहा, दिया तुम्हारे हाथ में है खोजें कि कहां है अंधेरा। और अगर किसी दिन मिल जाए तो मुझे खबर कर दें, मैं फिर तुम्हारे गांव में आ जाऊं। अभी तक उनकी कोई खबर नहीं आयी। खोज रहे होंगे वे लोग दिए लेकर अंधेरे को और कहीं दिए के सामने अंधेरा आता है? कहीं में अंधेरा मिलता है।

अहंकार अंधकार के समान है। जो अपने भीतर दिए को लेकर जाता है वह उसे कहीं भी नहीं पाता। न तो उसे छोड़ना है न उससे भागना है। एक दिया जलाना है और उसे देखना है, उस दिए की रोशनी में ढूंढ़ना है कि वह कहां है? हमें भीतर जागकर देखना है कि कहां है अहंकार? और वह वहां नहीं पाया जाता है। और जहां अहंका र नहीं पाया जाता है वहां जो मिल जाता है उसी को कोई परमात्मा कहता है, कोई आत्मा कहता है, कोई सत्य कहता है। उसी को कोई सौंदर्य कहता है उसी को कोई और नाम देता है। लेकिन बस नामों के ही भेद होते हैं। अहंकार जहां नहीं है वहां वह मिल जाता है जो सबके प्राणों का प्राण है, जो प्यारे से प्यारे है। लेकिन हम अहं कार से बंधे हैं और उसी के साथ जीते और मरते हैं इसलिए आत्मा कील तरफ आं ख नहीं जा पाती। इसे देखना जरूरी है, इसे छोड़ना जरूरी नहीं है। इससे भागना जरू री नहीं है, इसे पहचानना जरूरी है।

अहंकार को देखने की प्रक्रिया का नाम ही ध्यान है। कैसे हम देखें इसे जो कि हमें घे रे हुए है और पकड़े हुए हैं? क्या है रास्ता? कोई घड़ी आधी घड़ी किसी मंदिर मैं बै ठ जाने से यह नहीं देखा जा सकता। मंदिर में बैठने वालों का अहंकार तो और भी मजबूत हो जाता है, क्योंकि उन्हें खयाल होता है कि हम धार्मिक हैं। बाकी सारा जग त अधार्मिक है। क्योंकि हम मंदिर जाते हैं और हमारा स्वर्ग बन जाता है और बाकी सब नर्क में खड़े हैं।

क्या आपको पता है ईसाई मजहब के हिमायतियों की राय है कि जो लोग संत पुरुष हैं, जो धार्मिक पुरुष हैं वे लोग स्वर्ग के आनंद उठाएंगे। जो पापी हैं वे नर्क में कष्ट भोगेंगे और स्वर्ग में जो धार्मिक लोग जाएंगे उन्हें एक विशेष प्रकार के सुख की भी सु विधा रहेगी और वह यह है कि नर्क में जो पापी कष्ट भोग रहे हैं उनको देखने का मजा भी वे ले सकेंगे। वहां से वे देख सकेंगे कि कितने पापी नर्क में पड़ गए और कै से कैसे कष्ट झेल रहे हैं। जिन लोगों ने यह खयाल किया होगा पुण्यात्माओं ने, धार्मि कों ने कि पापियों को नर्क में कड़ाहों में जलते हुए देखने का मजा भी हम लेंगे, वे कै से लोग रहे होंगे इसे आप भलीभांति सोच सकते हैं। और यह कोई ईसाइयत का सव ाल नहीं है। दुनिया के सारे तथाकथित धार्मिक लोगों ने अपने को स्वर्ग में ले जाने की और दूसरे को नर्क में डालने की पूरी योजना और व्यवस्था कर रखी है। क्योंकि वह यह कह सकते हैं भगवान को कि मैं रोज तुम्हारे नाम पर माला फेरता था और इस आदमी ने माला नहीं फेरी। इसको डालो कड़ाहे में। मैं रोज मंदिर आता था। एक ि दन भी नहीं चूका। सर्दी पड़ती थी तब भी आता था, धूप पड़ती थी तब भी आता थ ा। यह आदमी कभी मंदिर में नहीं दिखाई पड़ा। डाली इसको कड़ाहे में। मैं गीता पढ़ ता था, कुरान पढ़ता था, बाइबिल पढ़ता था। रोज तुम्हारे भजन कीर्तन करता था। क या वे सब व्यर्थ गए? मुझे बैठाओ स्वर्ग में। लेकिन मुझे मजा इतने भर में नहीं आएग ा कि मैं स्वर्ग में बैठ जाऊं। उन सब लोगों को जो मेरे पड़ोस में रहते थे बिना नर्क में पड़े देखे मुझे कोई आनंद उपलब्ध नहीं हो सकता। उन सबको डालो नर्क में।

जर्मन कवि था ह्यूम। उसने एक कविता लिखी है। उस कविता में लिखा है कि एक र ात भगवान ने मुझसे पूछा कि तुम चाहते क्या हो? जिससे तुम खुश हो जाओ। तो मैं ने कहा मैं बहुत बड़ा मकान चाहता हूं। जैसा गांव में दूसरा मकान न हो। भगवान ने कहा ठीक है यह हो जाएगा। और क्या चाहते हो? एक बहुत शानदार बगीचा चाह ता हूं जैसा पृथ्वी पर न हो। भगवान ने कहा ठीक, यह भी हो जाएगा। और क्या चा हते हो? मैं जो भी जिस क्षण चाहूं उसी वक्त मुझे मिल जाए। भगवान ने कहा यह भी हो जाएगा। और क्या चाहते हो? ह्यूम ने कहा अगर आप मानते ही नहीं और मे रे दिल की आखिरी मुराद पूरी ही करना चाहते हैं तो एक काम और कर दें। मेरे ब गीचे के दरख्त जो हों, मेरे पड़ोसी उन दरख्तों से लटके रहें तो मुझे पूरा आनंद उपल ब्ध हो जाएगा। नींद खुल गई ह्यूम की और उसने बाद में लिखा कि वह बहुत घबरा या कि मेरे भीतर भी कैसी कैसी कामनाएं हैं। लेकिन अगर आप धार्मिक आदमियों के मन में खोजेंगे तो सबके मन में यह कामना है कि पड़ोसी नर्क में चले जाए और ह

म स्वर्ग में चले जाए। उस स्वर्ग में जाने के लिए सारा आयोजन करते हैं। मंदिर में बै ठने वाले अहंकार से मुक्त नहीं होते। स्वर्ग में जाने की कामना रखने वाले अहंकारी ह ी हैं। मुझे परमात्मा मिल जाए, मैं परमात्मा को भी अपने अधिकार में कर लूं वह भ ी मेरी संपत्ति बन जाए, यह अहंकार की ही दौड़ है।

फिर क्या करें? चौबीस घंटे जागरूक होना पड़ता है और देखना पड़ता है कि जीवन की किन किन क्रियाओं में अहंकार खड़ा होता है। क्या वस्त्रों के पहनने से खड़ा होता है? आंख के देखने के ढंग में खड़ा होता है? पैर के उठने में खड़ा होता है, बोलने में खड़ा रहता है कि चुप रह जाने में खड़ा होता है? कहां कहां अहंकार खड़ा होता है? किन किन जगहों से सिर उठाता है? चौबीस घंटे एक होश (ंःतमदमे) चाहिए कि कहां खड़ा हो रहा है? चौबीस घंटे खोजबीन चाहिए दिया लेकर कि अहंकार कहां खड़ा होता है? कैसे खड़ा होता है? क्या है उसकी कोशिश? उसके खड़े होने की प्रक्रिया क्या है? कैसे निर्मित होता है भीतर? कैसे संगठित होता है? क्या मार्ग है उसके बन जाने का? और अगर चौबीस घंटे कोई देखता रहे, देखता रहे, खोजता रहे, खोजता रहे तो बहुत हैरानी, बहुत आश्चर्य, बहुत चमत्कार अनुभव करेगा। जिन जिन जगहों पर यह खोज लेंगे कि यहां अहंकार खड़ा होता है वहीं वहीं से अहंकार विदा ह ो जाएगा। और जिस दिन जीवन के सभी पहलुओं में, और चित्त के सभी हिस्सों में अ हंकार की खोज पूरी हो जाएगी और मन का कोई अनजान अपरिचित कोना बाकी न हीं रहेगा, उसी दिन आप अहंकार के बाहर हो जाते हैं।

एक सम्राट था। एक फकीर ने उस सम्राट को कहा तू अगर चाहता है कि परमात्मा को पा ले तो एक ही रास्ता है। मेरे झोपड़े पर आ जा और कुछ दिन मेरे पास रह जा। उस सम्राट की बड़ी तीव्र प्यास और आकांक्षा थी। वह उस फकीर के झोपड़े पर चला गया। उस फकीर ने कहा, कल सुबह तेरी शिक्षा शुरू होगी और शिक्षा बड़ी अ जीब है। शिक्षा यह है कि कल सुबह तू कुछ भी कर रहा होगा और मैं लकड़ी की त लवार लेकर तेरे पीछे से हमला कर दूंगा। तू खाना खा रहा होगा, तू झोपड़े में बुहार ी लगा रहा होगा, तू कपड़े धो रहा होगा, तू स्नान करता होगा और मैं तेरे ऊपर त लवार से हमला कर दूंगा। लकड़ी की तलवार के होगी। हमेशा सावधान रहना कि मैं कब हमला करता हूं।क्योंकि मेरा कोई ठिकाना नहीं। मैं कोई खोज खबर नहीं दूंगा। पहले से रेडियो में कोई खबर नहीं निकालूंगा। अखबार में स्थानीय कार्यक्रम में खबर नहीं होगी कि आज मैं यह करने वाला हूं। यह कोई खबर नहीं होगी। किसी भाषा में कोई सिलसिला नहीं होगा। किसी भी क्षण में हमला कर दूंगा। तैयार रहना।

उस सम्राट ने कहा, लेकिन इससे मतलब क्या है? वह फकीर बोला अहंकार इसी भ ांति चौबीस घंटे न मालूम कहां कहां से हमले कर दे। तो मैं हमला करूंगा। मेरी तल वार का खयाल रखना। सात दिन में सम्राट की हड्डी पसलियां टूट गई। क्योंकि चौबीस घंटे तक वह बूढ़ा फकीर हर कभी हमला करने लगा। लेकिन सात दिन में सम्राट क ो यह भी खयाल में आ गया कि सावधानी जैसी भी कोई चीज थी। पहली दफा जिंद गी में उसे पता चला कि मैं अभी तक सोया जीता रहा। अभी तक मैं होश से नहीं

जीया। कभी मैंने होश का खयाल ही नहीं किया। लेकिन सात दिन बराबर चुनौती मि ली, चोट पड़ी और भीतर कोई चीज जागने लगी और खयाल रखने लगी कि हमला होने को है। पंद्रह दिन पूरे हो गए थे; हमले की खबर उसे मिलने लगी। गुरु के पैर की धीमी सी आहट भी उसे सुनाई पड़ जाती थी। वह अपनी ढाल संभाल लेता और हमले से बच जाता।

तीन महीने पूरे हो गए। अब हमला करना मुश्किल हो गया। किसी भी हालत में हम ला किया जाए, वह हमेशा सावधान होता और रोक लेता। उसके गुरु ने कहा एक पा ठ तेरा पूरा हो गया। कल से दूसरा पाठ शुरू होगा। उसने पूछा कि इन तीन महीनों में तुझे क्या हुआ? तो सम्राट ने कहा दो बातें हुई। मैं हैरान हो गया। पहले तो मैं ड र गया था कि इस लकड़ी की तलवार से चोट पहुंचाने का और परमात्मा से मिलने का क्या रास्ता है, क्या संबंध है! यह पागल तो नहीं है फकीर। मैं किसी पागल के च क्कर में तो नहीं पड़ गया हूं? लेकिन तीन महीने में मुझे पता चला कि जितना मैं स ावधान रहने लगा उतना ही मैं निरहंकारी हो गया। जितना मैं सावधान रहने लगा उ तना ही निर्विचार हो गया। जितना ही मैं होश से जीने लगा उतनी ही मन के विचार ों की धारा क्षीण हो गई। मन एक ही साथ दो काम नहीं कर सकता। या तो विचार कर सकता है या जागरूक हो सकता है। दो चीजें एक साथ नहीं हो सकती। इसको थोड़ा देखना। जब विचार होंगे, सावधानी क्षीण हो जाएगी। जब सावधानी होगी, विच ार क्षीण हो जाएंगे। अगर मैं एक छुरी लेकर आपकी छाती पर आ जाऊं तो विचार एकदम बंद हो जाएंगे। क्योंकि खतरे में चित्त पूरी तरह सावधान हो जाएगा कि पता नहीं क्या होगा? इस समय विचार करने की सुविधा नहीं है, इस समय तो होश बना ए रखने की जरूरत है कि पता नहीं क्या होगा? एक क्षण में कुछ भी हो सकता है तो आप जाग जाएंगे।

तो उस सम्राट ने कहा कि मैं एकदम जागा हुआ हो गया हूं। विचार शांत होंगे, अहंक ार का कोई पता नहीं चलता। दूसरा पाठ क्या है?

उस वृद्ध फकीर ने कहा—कल से रात में भी हमला शुरू होगा। कल तू रात में सोया रहेगा तक भी दो चार दफा सामने आऊंगा। अब रात को भी सावधान रहना। उस स म्राट ने कहा, जागने तक भी गनीमत थी। अब यह बात जरा ज्यादा हो जाती है। नीं द में मैं क्या करूंगा? मेरा क्या बस है नींद में? वृद्ध ने कहा, नींद में भी बास है, तु झे पता नहीं। नींद मग भी तेरे भीतर कोई जागा हुआ है और होश में है। चादर सर क जाती है और किसी को नींद में पता चल जाता है कि चादर सरक गयी है। एक छोटा सा मच्छर कान लगता और नींद में कोई जान लेता है कि मच्छर आ गया है। एक मां रात में सोती है उसका बच्चा बीमार है। आकाश में बादल गरजते रहें उसे कोई खबर नहीं मिलती लेकिन बच्चा बीमार है, वह जरा सी आवाज करता है और मां जाग जाती है और हाथ फेरने लगती है और पुचकारने लगती है कि सो जा कोई भीतर होश से भरा हुआ है कि बच्चा बीमार है।

बहुत लोग इकट्ठे सो जाएं और फिर आधी रात में आकर कोई बुलाने लगे राम! राम ! सारे लोग सो रहे हैं, किसी को सुनायी नहीं पड़ेगा लेकिन जिसका नाम राम है वह आंख खोलकर कहेगा, कौन बुलाता है? आधी रात को कौन परेशान करता है? आधी रात की निद्रा में भी किसी को पता है कि मेरा नाम राम है। इस नींद में भी कोई होश, कोई चेतना (बवदेबपवनेदमे) बनी रहती है। कोई चेतना है, कोई अंतर्धारा (न्नदकमत(बनततमदज) है। उस बूढ़े ने कहा फिकर मत कर। हम तो चुनौती खड़ी करेंगे, भीतर जो सोया है वह जागना शुरू हो जाएगा। जागने का एक ही सूत्र है चुनौती (ीिंससमदहम)। जितनी बड़ी चुनौती भीतर है, उतना बड़ा जागरण होता है। कितने धन्यभागी हैं वे लोग जिनके जीवन में बड़ी चुनौतियां होती है।

दूसरे दिन से हमला शुरू हो गया। रात सम्राट सोता और हमले होते। आठ दस दिन में फिर वही हालत हो गई। फिर हड्डी हड्डी दुखने लगी लेकिन एक महीना पूरा होते होते सम्राट को पता चला कि बूढ़ा ठीक कहता है। बूढ़े अक्सर ठीक कहते हैं। लेकिन जवान सुनते ही नहीं। और जब तक उन्हें समझ आती है तब तक वे भी बूढ़े हो जाते हैं। फिर दूसरी जवानी उन्हें लौट नहीं सकती। तो समझा और उठने कहा कि ठीक कहते थे शायद आप। अब नींद में भी मेरे साथ संभलने लगे। रात नींद में गुरु आता दबे पांव, नींद में से जाग आता वह युवक, बैठ जाता और कहता ठीक है माफ करिए मैं जाग गया हूं। अब कष्ट मत उठाइए मारने का। नींद में भी हाथ रात भर उसकी ढाल पर ही बना रहता था। नींद मग भी ढाल उठती है।

तीन महीने पूरे हुए और तब नींद में भी हमला करना मुश्किल हो गया। गुरु ने कहा कि क्या हुआ इन तीन महीनों में। दूसरा पाठ पूरा होता है। उस सम्राट ने कहा बड़ा हैरान हूं। पहले तीन महीने में विचार खो गया, दूसरे तीन महीने में सपने खो गए, नींद खो गई, रात भर सपने नहीं। मैं तो सोचता था कि बिना सपने के नींद ही नहीं हो सकती। अब मैं जानता हूं कि सपने वालों की भी कोई नींद होती है? अदभुत शांति छा गई है भीतर, एक शून्यता, एक मौन पैदा हो गया है। मैं बड़े आनंद में हूं। तो उसके गुरु ने कहा जल्दी मत कर। बड़ा आनंद अभी थोड़ी दूर है। यह तो केवल आनंद की शुरुआत की झलक है। जैसे कोई आदमी बगीचे के पास पहुंचने लगे तो ठंडी हवाएं आने लगती हैं, खुशबू हवा में आ जाती है। अभी बगीचा आया नहीं लेकिन बगीचे की खबर आनी शुरू हो गई है। अभी आनंद मिला नहीं। केवल बाहरी खबर मिलनी शुरू हुई है। कल से तेरा तीसरा पाठ शुरू होगा।

तीसरा पाठ क्या है? तो उस बूढ़े ने कहा, कल से असली तलवार से हमला होगा। अब तक नकली तलवार से हमला किया है। वह युवक बोला यह भी गनीमत थी कि अपनी लकड़ी की तलवार से हमला करते थे। यह तो जरा ज्यादा हो जाएगी बात। असली तलवार से हमला! अगर मैं एक भी बार चूक गया तो जान गई। तो उस बूढ़े ने कहा, जब यह पक्का पता हो कि एक भी बार चूका कि जान गई तब कोई भी नहीं चूकता है। चूकता आदमी तभी तक है जब तक उसे पता चलता है कि चूक भी

जाऊं तो कुछ जाएगा नहीं। एक बार पता चला कि चूका कि जान गई तब प्राण इत
नी ऊर्जा से चलते हैं कि फिर चूकने का कोई मौका नहीं रहता।
उस बूढ़े ने कहा, मेरा गुरु था। जिसके पास मैं सीखता था, उसने मुझे एक दिन सौ
फूट ऊंचे दरख्त पर चढ़ा दिया। वह मुझे दरख्त पर चढ़ना सिखाता, पहाड़ों पर चढ़ना
सिखाता, नदियों में तैरना सिखाता, झीलों में डूबना सिखाता। वह बड़ा अजीब गुरु
था। वह कहता था जो पहाड़ पर चढ़ना नहीं जानता है वह जीवन में चढ़ना क्या जा
नेगा? जो झीलों की गहराइयों में डूबना नहीं जानता वह प्राणों की गहराइयों में डूबन
ा क्या जानेगा? वह बड़ा अजीब गुरु था। उसने मुझे एक दरख्त पर चढ़ा दिया। मैं न
या-नया चढ़ा था। जब मैं सौ फूट ऊपर पहुंच गया और मेरे प्राण कंपते थे कि हवा
का एक झोंका भी कहीं जान लेने वाला न बन जाए, पैर का जरा सार सकर जाना
भी मौत न बन जाते तब वह गुरु चुपचाप आंख बंद किए झाड़ के पास बैठा था। फि
र मैं धीरे धीरे उतरने लगा। जब मैं जमीन के बिलकुल करीब आ गया कोई आठ द
स फूट दूर रह गया तक वह बूढ़ा जैसे नींद से उठ गया और खड़ा हो गया और कह
ने लगा—सावधान! बेटे संभलकर उतरना! होश संभालकर उतरना। मैंने कहा, पागल
हो गए हैं आप! जब जरूरत थी सावधानी की, तब आंख बंद किए सपने देख रहे थे
और अब जब कि मैं नीचे आ गया हूं, अगर गिर भी जाऊं तो कोई खतरा नहीं है त
ब आपको होशियार की याद दिलाने का खयाल आया? वह बूढ़ा कहने लगा मैं अपने
अनुभव से जानता हूं जब तू सौ फूट पर था तब किसी के सावधान करने की कोई
जरूरत नहीं थी। तब तू खुद ही सावधान था। और अभी अभी मैंने देखा है कि जैसे
जैसे जमीन करीब आने लगी है, तुम गैर सावधान होना शुरू हो गए। नींद पकड़ गई
है तुझे। मैं चिल्लाया कि सावधान। क्योंकि मैंने जीवन में देखा है कि लोग ऊंचाई से
कभी नहीं गिरते, नीचे आने से गिर जाते हैं और मर जाते हैं। मैंने आज तक जिंदगी
में देखा नहीं कि कोई आदमी ऊंचाई से गिरा हो। लोग नीचाई से गिरते हैं और मर
जाते हैं इसलिए तुम सावधान कर दिया।
उस बूढ़े ने सम्राट से कहा कि कल से असली तलवार आती है। और दूसरे दिन से अ
सली तलवार आ गई। लेकिन बड़ा हैरान हुआ वह सम्राट। लकड़ी की तलवार की तो
बहुत चोटें उसके शरीर पर लगी थी लेकिन असली तलवार की तीन महीने में एक
भी चोट नहीं मारी जा सकी। तीन महीने पूरे होने को आ गए। उसका मन एक शांि
त का सरोवर हो गया। उसका अहंकार कहीं दूर हट गया किसी रास्ते पर। पता नहीं
कहां रह गया। जैसे जीर्ण शीर्ण वस्त्र छूट जाते हैं या सांप अपने केंचुल को छोड़कर
जैसे आगे बढ़ जाते हैं ऐसे ही वह अपने अहंकार को कहीं पीछे दौड़ आया। याद भी
नहीं रहा कि कभी मैं भी था। इतनी शांति हो गई है कि वहां कोई लहर भी नहीं उ
ठती है उस झील में।
तीन महीने पूरे होने को आ गए। हैं। आज आखिरी दिन है। कल वह बिदा हो जा
एगा। सुबह सुबह सूरज निकलता है। वह बैठा है झोपड़े के बाहर। उसका गुरु काफी
दूर पर एक दरख्त के नीचे बैठा है और कोई किताब पढ़ रहा है, वह अस्सी साल का

वृद्ध। उसके मन में खयाल आया कि इस बूढ़े ने नौ महीने तक मुझे एक क्षण भी अ ालस्य में नहीं जाने दिया। एक क्षण भी प्रसाद नहीं करने दिया। हमेशा जगाए रखा, सावधान रखा। कल तो मैं बिदा हो जाऊंगा। यह गुरु भी उतना सावधान है या हनीं यह भी तो मैं दुख लूं। तो उसने सोचा कि उठाऊं तलवार और आज उस बूढ़े पर पी छे से चुपचाप हमला कर दूं। मुझे भी तो पता चल जाए कि हमें ही सावधान किया जाता है या ये सज्जन खुद भी सावधान हैं?

उसने इतना सोचा ही था, सिर्फ सोचा ही था। अभी कुछ किया नहीं था, बस सोचा ह ी था कि वह गुरु चिल्लाया उस झाड़ के नीचे से कि बेटा ऐसा मत करना, मैं बूढ़ा अ ादमी हूं। वह सम्राट तो बहुत हैरान हुआ। उसने कहा मैंने कुछ किया नहीं। मैंने केवल सोचा है। तो उस बूढ़े ने कहा, तुम थोड़े दिन और ठहर जाओ जब चित्त बिलकुल शांत हो जाता है और मौन हो जाता है, जब अहंकार बिलकुल बिदा हो जाता है औ र जब विचार शून्य और शांत हो जाते हैं, तब दूसरे के पैरों की ध्वनि ही नहीं सुनाई पड़ती, दूसरों के चित्त की पद ध्वनियां भी सुनाई पड़ने लग जाती हैं। तब दूसरों के विचारों की पगध्वनियां भी सुनाई पड़ने लग जाती हैं। विचार भी सुनाई पड़ने लगते हैं दूसरों के। लेकिन हम तो ऐसे अंधे हैं कि हमें दूसरों के कृत्य ही दिखाई नहीं पड़ते। विचार सुनाई पड़ना तो बहुत दूर की बात है।

उस बूढ़े ने कहा था जिस दिन इतना शांत हो जाता है चित्त, इतना जागरूक हो जात ा है, तो उस दिन ही वह जो अदृश्य है उसकी झलक मिलती है। उस परमात्मा के पै र सुनाई पडने लगते हैं जिसके कोई पैर नहीं हैं। उस परमात्मा की वाणी आने लगती है जिसकी कोई वाणी नहीं है। उस परमात्मा का स्पर्श मिलने लगता है जिसकी कोई देह नहीं है। सब तरफ से वह मौजूद हो जाता है। जिस दिन हमारे भीतर शांति की वह ग्राहकता उत्पन्न होती है उसी दिन वह सब तरफ मौजूद हो जाता है। फिर वृक्ष की पत्तियों में वही है, राह के पत्थरों में वही है, सागर की लहरों में भी, आकाश के बादलों में भी, आदमियों की आंखों में भी, पशु पक्षियों के प्राणों में भी, फिर सब में वही है। जिस दिन भीतर जीवन की प्रतिध्वनि सुनने की ग्राहकता (त्तमबमचजपअप जल) उपलब्ध हो जाती है, पात्रता उपलब्ध हो जाती है उसी दिन उसके दर्शन मिलने शुरू हो जाते हैं।

पता नहीं उस सम्राट का फिर क्या हुआ। पहा नहीं उस बूढ़े फकीर का फिर क्या हुआ लेकिन मुझे और आपको उससे प्रयोजन ही क्या है। जहां उनकी कहानी खतम होती है अगर वहीं आपकी कहानी शुरू हो जाए तो बात पूरी हो जाएगी।

क्या आप भी अपने भीतर इतने जागने का सतत श्रम करने को तत्पर हैं? अगर हां तो जीवन की संपदा आपकी है। अगर हां तो परमात्मा खुद आपके द्वार चला आएगा। आपको उसके द्वार जाने की जरूरत नहीं। यह बात कठिन मालूम पड़ सकती है क्योंि क जो लोग चलने के आदी नहीं होते, यात्राएं उन्हें बहुत बड़ी और जटिल दिखाई देत ी हैं। उन्हें डर लगता है कि छोटे से पैर हैं अपने पास। हजारों मील की यात्रा हम कै से पूरी कर सकेंगे? लेकिन अगर एक कदम भी उठाने के लिए वे तैयार हो गए तो

हर उठाया गया कदम आने वाले कदम के लिए भूमि बन जाता है, बल बन जाता है, शक्ति बन जाता है और छोटे से कदमों से आदमी पूरी पृथ्वी की परिक्रमा कर सकता है और छोटे से मन की सामर्थ्य, छोटे से कामों की सावधानी, थोड़े से हृदय की शांति से मनुष्य परमात्मा की परिक्रमा भी कर सकता है।

क्या मनुष्य एक यंत्र है?
मनुष्य एक यंत्र है लेकिन इसका हमें कोई स्मरण नहीं है। मनुष्य का जीवन जागृति नहीं है बल्कि सोया हुआ जीवन है। इसका भी हमें कोई बोध नहीं है।
मैं मनुष्य को यंत्र क्यों कह रहा हूं?
एक छोटी सी कहानी से मैं आपको यह समझाना चाहूंगा।
एक सुबह एक गांव में बुद्ध का आगमन हुआ था। उन्होंने उस गांव के लोगों को समझाना शुरू किया। सामने ही बैठकर एक व्यक्ति अपने पैर का अंगूठा हिलाए जा रहा था। बुद्ध ने बोलना बंद करके उस व्यक्ति को कहा: मेरे मित्र! तुम्हारे पैर का अंगूठा क्यों हिलता है? जैसे ही बुद्ध ने यह कहा कि तुम्हारा पैर क्यों हिलता है कि उसके पैर का हिलना बंद हो गया। उस व्यक्ति ने कहा कि जहां तक मेरा सवाल है, मुझे इसका स्मरण भी नहीं था कि मेरा पैर हिल रहा है। आपने कहा तब ही मुझे स्मरण आया और मेरा पैर रुक गया। मुझे खयाल भी नहीं था, बोध भी नहीं था कि मेरा पैर हिल रहा है। बुद्ध ने कहा: तुम्हारा पैर हिलता है और तुम्हें पता भी नहीं? तो तुम आदमी हो या यंत्र?
यंत्र हम उसे कहते हैं जिसे अपनी गति का कोई बोध नहीं है। उसमें गति हो रही है लेकिन उसे पता नहीं है। उसे कोई होश नहीं है, उस गति का मनुष्य को मैंने इसलिए यंत्र कहा कि जो कुछ हममें हो रहा है, न तो हमें इसका पता है कि वह हो रहा है, न पता है कि क्या हो रहा है या क्यों हो रहा है। और न ही हम उसके मालिक हैं कि हम चाहे तो वह हो और न चाहे तो वह न हो। कोई भी यंत्र अपना मालिक नहीं होता। आदमी भी अपना मालिक नहीं है। इसलिए मैंने उसे यंत्र कहा। आपके भीतर जब भय (मिंत) पैदा हो जाता है तब आप उसे पैदा करते हैं? क्या आप उसके मालिक होते हैं? या कि आप चाहें तो उसे पैदा न होने देंगे? या जब आप चाहें तो उसे पैदा कर लेंगे? कुछ भी आपके हाथ में नहीं है। कितनी बार हमें ऐसा मौका आता है जब हम कहते हैं: मेरे बावजूद (टद`चपजम व`िउम) यह हो गया। कितनी बार हम कहते हैं कि मैं तो नहीं चाहता था फिर भी यह हो गया। अगर आप ही नहीं चाहते थे और आपके भीतर कुछ हो जाता है तो इसका क्या अर्थ हुआ? आप अपने मालिक नहीं हैं। कोई यंत्र अपना मालिक नहीं है। लेकिन मनुष्य तो अपना मालिक होगा। उसके जीवन में, उसके विचार में, उसके भाव में, वह अपना स्वामी होगा उसका स्वयं पर स्वयं का अधिकार होगा। और यह स्वामित्व, यह मालकियत, तभी उपलब्ध हो सकती है जब उसे अपने जीवन की सारी क्रियाओं का बोध हो, उनके प्रति जागरू

कता (ृतमदमे) हो। वह उन्हें जानता हो, पहचानता हो लेकिन न तो हम उन्हें पहचा नते हैं, न तो हम उनके मालिक हैं।

एक महिला ने एक फकीर के पास अपने बच्चे को ले जोकर कहा कि मेरा यह बच्च ा रोज रोज बिगड़ता जाता है। इसने सारी शिष्टता छोड़ दी है और इसने परिवार के सारे नियम तोड़ दिए हैं। इसे आप थोड़ा भयभीत कर दें, डरा दें। शायद यह ठीक हो जाए। उस फकीर ने इतनी बात सुनी और जोर से आंखें निकाली, हाथ पैर हिलाए और वह कूदकर उस बच्चे के सामने खड़ा हो गया जैसे उसकी जान ही ले लेगा। वह बच्चा तो इतना घबरा गया कि भागा। लेकिन फकीर तो कूदता ही गया और इतनी जोर से चिल्लाया कि बच्चा तो भाग गया लेकिन उसकी मां बेहोश होकर गिर पड़ी। जब वह स्त्री बेहोश होकर गिर पड़ी तो वह फकीर भी वहां से भाग निकला। थोड़ी देर बाद जब स्त्री को होश आया तो वह बैठकर फकीर की प्रतीक्षा करने लगी। थोड़ी देर के बाद वह फकीर भीतर लौटा। उस स्त्री ने कहा : आपने तो हद कर दी। मैंने तो बच्चे को डराने को कहा था, मुझे डराने को तो नहीं। वह फकीर बोला कि तूने बच्चे को डराने को कहा था लेकिन बच्चे को मैंने डराया तब तुझे खयाल भी न था ि क तू भी डर जाएगी। तू क्यों डर गई? और जब तू डर गई और बेहोश हो गई तो मुझे पता भी हनीं था कि मैं भी डर जाऊंगा। तुझे बेहोश देखकर मैं भी डर गया और भाग गया। जब भय ने पकड़ा तो उसने बच्चे को ही नहीं पकड़ा, तुझे भी पकड़ लि या और मुझे भी। उस फकीर ने कहा, सचाई यह है कि मुझ में भी चीजें घटित होती हैं, मैं भी उनका मालिक नहीं हूं, तू भी उनकी मालिक नहीं है, बच्चा भी उनका म ालिक नहीं है। भय ने पकड़ लिया तो उस पर हमारी कोई मालकियत न रही। तू भी भयभीत हो गई तो मुझे भी खयाल न रहा कि यह क्या हो रहा है। मैं भी घबड़ा ग या और भयभीत होकर भाग गया। मैं बेबस था, लेकिन फिर भी क्षमा मांगता हूं।

जीवन में हमारे भय, क्रोध, घृणा, हिंसा, प्रेम ये सब घटित हो रहे हैं। उन पर हमारा कोई काबू हनीं। उनके ऊपर काबू होना तो दूर हमें उनका कोई होश भी नहीं है कि क्या हो रहा है। इसलिए मैंने कहा कि मनुष्य एक यंत्र है। लेकिन यह इसलिए नहीं कहा कि मनुष्य एक यंत्र है तो बात समाप्त हो जाए। जहां बात समाप्त नहीं होती। यहां बात शुरू होती है। मनुष्य यंत्र है यह इसलिए तो कह रहा हूं आपसे कि आपके भीतर यंत्र से ऊपर उठने की भी संभावना है। किसी यंत्र से जाकर तो नहीं कहता हूं कि तुम यंत्र हो। मनुष्य यदि सत्य को समझ ले तो वह यंत्र होने के ऊपर भी उठ सकता है। मनुष्य के लिए भीतर यह संभावना है, कि वह एक सचेतन आत्मा और व यक्तित्व बन जाए। लेकिन यह एक संभावना है, एक सच्चाई नहीं। यह हो सकता है लेकिन ऐसा है नहीं। एक बीज की भांति ही यह संभावना मात्र है। उससे वृक्ष हो भी सकता है, और नहीं भी। बीज को जानना चाहिए कि मैं बीज हूं और वृक्ष नहीं हूं। इ स बात को जानने के साथ ही उस संभावना के क्षार भी खुल सकते हैं कि वह वृक्ष ह ो जाए।

मनुष्य एक बीज है चेतना के लिए, परंतु अभी वह चेतना नहीं है। अभी तो यंत्र है। और अगर वह इस यांत्रिक स्थित को ठीक से समझ ले, यह जड़ परिस्थिति उसे पूरी पूरी स्पष्ट हो जाए तो स्पष्ट होने के साथ साथ उसके भीतर कोई शक्ति जागने लगेगी , जो उसे मनुष्य बना सकती है। मनुष्य मनुष्य की भांति पैदा नहीं होता, एक बीज की भांति ही पैदा होता है। उसके भीतर मनुष्य का जन्म हो सकता है, लेकिन कोई भी मनुष्य, मनुष्य की भांति जन्मता नहीं है। और अधिक लोग इस भूल में पड़ जाते हैं कि वे मनुष्य हैं। यही भूल उनके जीवन को नष्ट कर देती है। जन्म के साथ हम ए क संभावना (ढवजमदजपंसपजल), एक बीज की तरह पैदा होते हैं। लेकिन हम उसे समझ लेते हैं कि हमारा होना समाप्त हो गया। हम वहीं ठहर जाते हैं। बहुत कम लो ग हैं, जो जन्म के ऊपर उठते हों और जन्म का अतिक्रमण करते हों। हम जन्म पर ही रुक जाते हैं। जन्म के बाद फिर कोई विकास नहीं होता। हां यंत्र की कुशलता बढ़ जाती है, लेकिन यांत्रिकता के ऊपर उठने का कोई चरण, कोई कदम नहीं उठाया जाता और वह कदम उठायी भी नहीं जा सकती, जब तक हमें यह खयाल ही न पैदा हो कि हम क्या है? मनुष्य यदि यह अनुमान कर ले कि वह यंत्र है तो वह मार्ग स्प ष्ट हो सकता है, जिसकी यात्रा करने के बाद वह यंत्र न रह जाए। लेकिन हमारे अहं कार को इस बात से बड़ी चोट पहुंचती है कि हमसे कोई कहे कि हम एक यंत्र हैं! मनुष्य के अहंकार को इससे बड़ी चोट लगती है कि उससे कोई कहे कि तुम एक मश ीन हो और उसे इस बात के सुनने में बड़ा मजा आता है कि तुम परमात्मा हो! अरे, तुम तो ब्रह्म हो, शरीर नहीं, तुम तो आत्मा हो! तुम्हारे भीतर भगवान वास कर र हा है। इसलिए वह मंदिरों में और मस्जिदों में इकट्ठा होता है और उन लोगों के पैर पड़ता है जो उसे समझाते हैं कि तुम तो स्वयं भगवान हो। उसे यह बात सुनकर बड़ा आनंद मालूम होता है। उसे कौन कहे कि तुम एक मशीन हो, क्योंकि ऐसा कहने से बड़ी चोट लगती है। लेकिन उससे कहें कि तुम तो स्वयं भगवान हो तो उसे बहुत आनंद मिलता है। ऐसे उसके अहंकार की तृप्ति होती है, उनके अहंकार (म्हव) को बड़ा सहारा मिलता है कि मैं भगवान हूं। लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं और इस सत्य को बहुत ठीक से समझ लेना जरूरी है कि जैसे हम हैं वैसे भगवान होना तो बहुत दूर, हम मनुष्य भी नहीं है।

हम बिलकुल मशीनों की भांति हैं। हमारा सारा जीवन इस बात की कथा है, हमारे पू रे पांच छह हजार वर्ष का इतिहास इस बात की कथा है कि हम मशीन की भांति ज ी रहे हैं। जो भूल मैंने कल की थी वही भूल मैं आज भी कर रहा हूं। जो भूल मैंने द स साल पहले की थी वही भूल मैं दस साल बाद भी करूंगा। अगर एक आदमी आप के दरवाजे से निकलता हो और रोज एक ही गड्ढे में आकर गिर जाता हो तो एक दि न आप क्षमा कर देंगे कि भूल हो गई। दूसरे दिन वह आदमी फिर आए और उसी ग ड्ढे में गिर जाए तो शायद आपको भी संकोच होगा यह कहने में कि भूल हो रही है। लेकिन यदि तीसरे दिन भी उसी गड्ढे में जाए, चौथे दिन भी और वर्ष वर्ष बीतते जा ए और रोज उसी गड्ढे में आकर गिरता जाए तो आप क्या कहेंगे? आप कहेंगे कि य

ह आदमी नहीं, मालूम होता है यह तो कोई मशीन मालूम होती है जो ठीक उसी ग ड्ढे में रोज गिर जाती है और उसी गड्ढे में, उसी भूल से रोज गुजरती है, और फिर भी उसके जीवन में कोई क्रांति नहीं होती, कोई परिवर्तन नहीं होता? यह यांत्रिकता (ऊमबींदपबंसदमे) तो हो सकता है, लेकिन मनुष्यता कैसे हो सकती है।
जिस क्रोध को हमने हजार बार दिया है और हजार बार दुखी है और पछताए हैं वह आज भी हम कर रहे हैं। भूल वही है और हम रोज उसे दोहरा रहे हैं। जिस घृणा से हम पीड़ित हैं उसे बार बार दिया है और अब भी कर रहे हैं। जिस अहंकार ने ह में जलाया, हैं जिसने हमें चोट पहुंचाई है उसको हम आज भी पकड़े हुए हैं। आदमी नयी नयी भूलें थोड़ी ही सरता है। और न ही आदमी रोज नई भूल ईजाद करता है। बस थोड़ी सी वे ही भूलें हैं जिन्हें राज दुहराता है। रोज पछताता है, रोज निर्णय कर ता है कि नहीं अब यह नहीं करूंगा। लेकिन अगर उसके हाथ में होता करना या न करना तो बहुत पहले उन्हें करना बंद कर दिया होता! फिर उसे ही करता है, फिर पछताता है। कोई फर्क उसके जीवन में होता नहीं। क्या बताती है यह बात? बताती है कि मनुष्य एक यंत्र है। अहंकार को इससे चोट लगती है। चोट लगेगी, भी क्योंकि जिसका अहंकार नहीं टूटता वह कभी यंत्र होने के ऊपर नहीं उठ सकता! अहंकार को टूटने दें। उसका टूटना और मिटना बहुत शुभ है। यांत्रिकता की मृत्यु में वह एक अनिवार्य चरण है। और यदि अगर आप सोचेंगे, खोजेंगे, निरीक्षण करेंगे और थोड़ा अ पने जीवन पर विचार करेंगे तो आपको कठिनाई नहीं होगी इस बात को तय करने में कि आपने जो व्यवहार किया है, वह एक मशीन का व्यवहार है, एक मनुष्य का न हीं। और अगर यह स्पष्ट हो जाए कि मैं एक मशीन की भांति जी रहा हूं, तो जिसे यह बात स्पष्ट हो जाएगी कि मैं एक मशीन हूं, उसके जीवन में क्रांति की शुरुआत ह ो जाएगी। किसी बीमारी को ठीक से पहचान लेना उससे आधा मुक्त हो जाना है। कि सी बीमारी का ठीक-ठीक निदान आधा इलाज है। अगर यह समझ में आ जाए कि मैं एक यंत्र हूं तो हमारे बहुत से भ्रम टूट जाएंगे। हमारा बहुत सा अभिमान टूट जाएगा । और शायद इस एहसास के बाद हमारे भीतर किसी क्रांति की शुरुआत हो सके।
मनुष्य परमात्मा हो सकता है लेकिन है तो मशीन। बीज वृक्ष हो सकता है लेकिन अ भी वह वृक्ष नहीं है। और जो बीज रहते ही समझ लेगा कि मैं वृक्ष हो गया, उसकी वृक्ष तक की यात्रा असंभव हो जाएगी क्योंकि फिर वह उसी भ्रांति में जीने लगेगा। ि जसे तोड़ना था उसे, जिस भ्रम को उसे मिटाना था, वह उस भ्रम को ही और स्थायी करने लगा। इसलिए मैंने कहा कि मनुष्य एक मशीन है। लेकिन मनुष्य मशीन होने को पैदा नहीं हुआ है। मशीन होने से ही वह दुखी, परेशान और चिंतित है। मशीन ह ोने के कारण ही उसके जीवन में अंधकार है; जीवन में पीड़ा, चिंता और अशांति है। वह मशीन न रह जाए तो शांति, सत्य और सौंदर्य का जन्म हो सकता है। वह मशी न न रह जाए तभी उसे स्वरूप का बोध हो सकता है और अनुभव हो सकता है कि मैं कौन हूं? और अभी तो वह कितना ही खोजे, और कितने ही शास्त्र पढ़े और कित ने ही सिद्धांत सीख ले कि मैं कौन हूं और दोहराने लगे कि मैं आत्मा हूं, मैं परमात्म

ा हूं, तो भी कुछ नहीं हो सकता। उसका यह दोहराना भी बिलकुल झूठा और यांत्रिक होगा।

ऐसे लोग को हम सब जानते हैं जो कि सुबह से बैठकर दोहराते हैं कि मैं आत्मा हूं, मैं परमात्मा हूं, मैं ब्रह्म हूं, अहं ब्रह्मास्मि...और वे दोहराते चले जाते है, वर्षों तक। लेकिन उनके जीवन में कोई परिवर्तन पैदा नहीं होता है। हो भी नहीं सकता। क्योंकि यदि यह पता चल जाए कि मैं ईश्वर हूं तो दोहराने की कोई जरूरत नहीं है। जिसे प ता नहीं है कि मैं ईश्वर हूं वही दोहराता है। अगर आप पुरुष हैं तो रोज सुबह उठक र दोहराते नहीं हैं कि मैं पुरुष हूं, पुरुष हूं। अगर आप स्त्री हैं तो रोज सुबह उठकर आप दोहराती नहीं कि मैं स्त्री हूं, स्त्री हूं। लेकिन अगर कोई पुरुष सुबह उठकर दोहर ाने लगे कि मैं पुरुष हूं, मैं पुरुष हूं तो आपको शक हो जाएगा कि वह पुरुष है या न हीं?

उसको दोहराना इस बात की सूचना होगी कि जो भी वह दुहरा रहा है उस संबंध में वह स्वयं ही संदिग्ध है और दोहरा दोहरा कर अपने मन को वह असंदिग्ध बना लेना चाहता है। जो आदमी यह दोहराता है कि मैं आत्मा हूं, मैं ईश्वर हूं, परमात्मा हूं व ह ऐसी निपट झूठी बातें दोहरा रहा है जिसका कि उसे कोई भी पता हनीं है। अगर उसे पता हो जाए तो दोहराने की कोई जरूरत नहीं रह जाती। और इस दोहराने से हमारी यांत्रिकता टूटती नहीं बल्कि और अधिक मजबूत होती है और गहरी होती है, क्योंकि हमें यह खयाल ही मिट जाता है कि वस्तुतः हम क्या है?

एक जादूगर ने भोजन के लिए बहुत सी भेड़ें पाल रखी थी। उस जादूगर ने उन भेड़ों को बेहोश करके, समाहित करके, जिप्नोटाईज करके यह कह दिया था कि तुम भेड़ें नहीं हो। इससे पहले, भेड़ें हमेशा भयभीत रहा करती थीं कि उनको खिलाया पिलाय ा जाएगा और फिर अंततः काट दिया जाएगा। उस जादूगर ने उन्हें बेहोश करके कह दिया कि तुम भेड़ हो ही नहीं। तुम तो सिंह (डपवद) हो, भेड़ नहीं। उनके चित्त में यह बात बैठ गई। उस दिन से वे अकड़कर जीने लग गई। उस दिन से उन्होंने यह बा त भुला दी कि उन्हें काटने के लिए पाला जा रहा है। जब उनमें से एक भेड़ काट दी जाती थी तब बाकी रह गई भेड़ें सोचती थी वह तो भेड़ी थी हम तो सिंह हैं। सब सोचती कि मैं नहीं काटी जाने वाली हूं। रोज भेड़ें, कम होती जाती थीं लेकिन हर भे. ड यही सोचती थी कि दूसरी तो भेड़ थी, इसलिए काटी गई और मैं? मैं तो सिंह हूं, मैं काटी जाने वाली नहीं हूं। उस जादूगर के घर उसका एक मित्र मेहमान हुआ तो उसने पूछा कि हम भी भेड़ें पालते हैं, हम भी उनको काटते हैं और उनके मांस को बेचते हैं। लेकिन हमारी भेड़ें तो बड़ी भयभीत और परेशान रहती हैं। तुम्हारी भेड़े तो बड़ी शान से घूमती हैं। आखिर बात क्या है? उस जादूगर ने कहा मैंने एक तरकीब काम में लाई है। उनको बेहोश करके मैंने कह दिया है कि तुम भेड़ नहीं हो। इसलि ए वे मौज से घूमती रहती हैं। उनको भागने का, भयभीत होने का अब मुझे कोई डर नहीं है और जब एक भेड़ कटती है तो बाकी भेड़ें सोचती हैं कि वह भेड़ थी, मैं तो भेड़ नहीं हूं।

मनुष्य जाति के साथ भीतर मामला कुछ ऐसा ही है। हर आदमी को यह खयाल है ि
क मैं तो कुछ और हूं। तो जब मैं आपसे यह कह रहा हूं कि मनुष्य एक यंत्र है तो
मैं भलीभांति जानता हूं कि आप अपने पड़ोसी का विचार करके सोच रहे हों कि बात
तो इस आदमी के बाबत बिलकुल ठीक है। रही मेरी बात, मैं तो मशीन कहां हूं?
मैं तो अपवाद (म्गबमचजपवद) हूं। बाकी लोगों के संबंध मग यह बात बिलकुल ठी
क है। जगह जगह लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं कि आप बात तो बिलकुल ठी
क ही कह रहे हैं। लोग बिलकुल ही यंत्र हैं। लेकिन मैं उनसे पूछता हूं सब आदमियों
के बार में सवाल नहीं हैं, सवाल हैं कि यह आपके बार में सही है या नहीं? और त
ब मैं पाता हूं कि वे पसोपेश में पड़ जाते हैं। उनकी यह कहने की हिम्मत ही नहीं हो
ती कि यह बात मेरे संबंध में भी सही है। तो जो बात मैं कह रहा हूं वह आपके पड़
ोसियों के लिए नहीं कह रहा हूं। वह आपके ही संबंध में कह रहा हूं। आप के पास
जो बैठे हैं उनकी तरफ देखने की कोई जरूरत नहीं है। अगर आपने उनकी तरफ देख
ा तो मेरी बात फिजूल चली जाएगी। उसका कोई मतलब नहीं होगा। आप अपनी तर
फ देखें और सोचें, अगर आपको यह दिखाई पड़ जाए कि यह बात आपके संबंध में
भी सही है, तो आप दूसरे आदमी हो जाएंगे। इस बात के एहसास के साथ ही आप
में परिवर्तन होना शुरू हो जाएगा। क्योंकि यह एहसास ही इस बात की घोषणा है कि
अब आप मशीन नहीं रहे। कौन दे रहा है इस बात की स्वीकृति? कौन इस बात का
एहसास कर रहा है? जो चेतना इस बात का एहसास कर रही है कि मेरा जीवन ए
क यंत्र है, वह स्वयं यंत्र नहीं हो सकती। इस बात की स्वीकृति से ही कहीं आपके भ
ीतर चेतना (ंिवदेबपवनेमे) का जन्म शुरू होता है। इसलिए मैंने यह जोर दिया कि ह
में जानना, खोजना और पहचानना चाहिए कि हम यंत्र हैं। और उस आदमी को मैं ध
ार्मिक कहूंगा जिसने यह अनुभव किया कि उसका जीवन एक यंत्र है। उस आदमी को
मैं धार्मिक नहीं कहता जो रोज सुबह उठकर माला फेर लेता है, जो रोज सुबह मंदि
र हो आता है। वह तो यंत्र की भांति ही काम करता है। उसमें और यंत्र में कोई फ
र्क नहीं है। रोज माला फेरता है, वर्षों तक फेरता रहता है। ठीक मशीन की भांति ही
वह रोज एक काम पूरा कर लेता। है रोज मंदिर में हो आता है, रोज किताब भी
पढ़ लेता है। एक ही किताब को वह वर्षों तक पढ़ता रहता है और दोहराता रहता है
, बिलकुल मशीन की भांति। उससे जीवन में कोई अंतर नहीं आता, कोई क्रांति नहीं
होती, कोई परिवर्तन नहीं आता, कोई बदलाहट नहीं होती। हो भी नहीं सकती। क्रांि
त हो सकती थी यदि वह अनुभव करता कि अभी वह आदमी नहीं है। आदमी के बहु
त नीचे के तल पर जी रहा है, मशीन के तल पर जी रहा है। ऐसा बोध, ऐसी प्रतीि
त स्वयं की यांत्रिकता के अतिक्रमण का पहला सूत्र है।

एक मित्र ने पूछा कि अगर हममें यह खयाल हो जाए कि हम बिलकुल एक मशीन हैं
तब तो हमारे जीवन में निराशा छा जाएगी। फिर तो हम निराश हो जाएंगे कि अब
तो कुछ भी हनीं हो सकता।

अभी आप मात्र बौद्धिक रूप से विचार कर रहे हैं। अगर आपको यह अहसास हो जा
ए कि मैं एक मशीन हूं तो इतना कुछ हो सकता है जिसका कुछ हिसाब नहीं है। यह
बात कि फिर कुछ नहीं हो सकता एकदम ही गलत है। सच तो यह है कि जब तक
इस बात का अहसास न हो कि मैं एक मशीन हूं, तब तक कुछ भी नहीं हो सकता।
तब तक आप जो कुछ भी करेंगे वह सब व्यर्थ होगा। वह नींद में किया होगा, जाग
कर नहीं। जिस चेतना को यह अनुभव होता है, यह बोध होता है कि मैं एक मशीन
हूं वह चेतना मशीन से बाहर हो जाती है, अलग हो जाती है, भिन हो जाती है।
किसी भी चीज को जानते ही हम उससे दूर हो जाते हैं। अगर मैं आपको देख रहा हूं
कि आप वहां हैं तो मैं आपसे अलग हो गया। क्योंकि देखनेवाला उससे अलग हो जा
ता है जिसे वह देखता है। दोनों के बीच फासला हो जाता है। अगर मैं अपने इस हा
थ को देख रहा हूं तो मैं इस हाथ से अलग हो गया। वह देखने वाला, देखे गए हाथ
से अलग हो जाता है।
मेरे एक मित्र बीमार पड़े थे। वे सीढ़ियां पर से गिर गए थे और उनके पैरों में बड़ी
चोट आ गई थी। बहुत असह्य पीड़ा थी उन्हें। मैं उन्हें देखने गया। उन्होंने मुझ से कह
ा कि इस पीड़ा से तो बेहतर होता कि मैं मर ही जाता। असह्य पीड़ा है। बहुत दुख
होता है और डाक्टर का कहना है कि कोई तीन महीने इस बिस्तर पर ही बंधे रहना
होगा। यह तो और भी दुखद है। क्या मेरे मरने की कोई तरकीब नहीं खोजी जा स
कती? क्या मैं मर नहीं सकता? मैंने उनसे कहा इसके पहले कि आप मरें, क्या आप
को भरोसा है कि आप जिंदा हैं? क्योंकि मर वही सकता है जो जिंदा हो। मुझे तो श
क है कि आप जिंदा भी हैं? शक है क्योंकि क्या आपको उस जीवन का पता है जो
आपके भीतर है? अगर आपको उस जीवन का पता ही नहीं तो मैं आपको जिंदा कैसे
कहूं? मैंने कहा कि अभी मरने की योजना छोड़िए, अभी आपको यह भी पता नहीं ि
क आप जिंदा हैं। जिंदा आदमी मर सकता है, लेकिन आप जिंदा कहां हैं? और मैंने
उनसे कहा कि आप घबड़ाए मत इतने, एक छोटा सा प्रयोग कीजिए। मैं यहां बैठा हूं
आपके पास, आप आंखें बंद कर लीजिए। मैं यहां बैठा हूं आपके पास, आप आंखें बं
द कर लीजिए। और उस दर्द, उस पीड़ा को देखने की कोशिश कीजिए कि वह कहां
है और क्या है जो आपको अहसास हो रही है। आपको किस जगह शरीर में पीड़ा मा
लूम हो रही है। वे मुझसे बोले कि मेरे पैर में तकलीफ है। मैंने कहा आंख बंद करिए
और ठीक से खोजिए, उस बिंदु पर ध्यान ले जाइए जहां आपको तकलीफ हो रही है
। उन्होंने आंखें बंद कीं और कोई पंद्रह मिनिट बाद आंखें खोलीं और मुझसे बोले कि
यह तो हैरानी की बात है । जैसे जैसे मैं खोजने लगा, पीड़ा सिकुड़ती गई, छोटी होत
ी गई। पहले मुझे लग रहा था कि पूरे पैर में दर्द है लेकिन जैसे मैंने खोज की तो मैं
ने पाया कि पूरे पैर में दर्द नहीं है। दर्द तो शायद छोटी सी जगह पर है और पूरे पैर
में ध्यान के अभाव के कारण ही मुझे उसका अनुभव हो रहा है। और जैसे जैसे मैंने
खोजने की कोशिश की मुझे दो अदभुत बातें खयाल में आईं जिनको मुझे पता भी नह
ीं था।

एक तो यह कि दर्द उतना नहीं था जितना मुझे मालूम पड़ रहा था। जब मैंने खोजने की कोशिश की तो दर्द उतना बिलकुल नहीं था जितना मैं अहसास कर रहा था। जितना मैं भोग रहा था उतना दर्द था ही नहीं। और दूसरी बात जैसे ही दर्द मुझे एक जगह मालूम पड़ा कि पैर की फलां जगह दर्द हो रहा है, वैसे मुझे एक और बात पता चली जो और भी हैरानी की है वह यह कि दर्द वहां हो रहा था और मैं दूर खड़ा उसे देख रहा था। मैं अलग था और दर्द अलग था। दर्द कहीं हो रहा था और मैं उसे जान रहा था तो मुझे एक क्षण ऐसा लगा कि मैं अलग हूं। जान रहा हूं और दर्द अलग हैं, कहीं हो रहा है।

अगर हमारे जीवन की यांत्रिकता का हमें पता चल जाए तो हमें यह भी पता चल जाएगा कि यांत्रिकता का घेरा कहीं है और मैं कहीं और हूं। मैं यांत्रिकता के बीच में हूं, मैं खुद यंत्र हूं। और अगर यह अहसास हो जाए कि सारी यांत्रिकता के बीच में मेरी चेतना। (बवदेपवनेदमे) अलग ही है, तो फिर कुछ हो सकता है। मैं इस यंत्र का मालिक बन सकता हूं। फिर इस यंत्र के साथ मैं कुछ कर सकता हूं क्योंकि मैं इससे अलग हूं और इसके बाहर हूं। लेकिन जो आदमी यंत्र के साथ एक हो जाता है वह कुछ भी नहीं कर सकता। और से भर जाने का कारण है। लेकिन यह केवल बौद्धिक विचारणा नहीं है। इसे तो जीवन में खोजेंगे तो ही इसके क्रांतिकारी परिणाम परिलक्षित हो सकते हैं। इसलिए यह मत सोचें कि क्या होगा कि मैंने समझ लिया कि मैं एक यंत्र हूं। समझने की जरूरत नहीं है। जानने की जरूरत है कि आप यंत्र हैं। यह एक तथ्य (थंबज) है। यह कोई सिद्धांत नहीं है। आपको समझाने की जरूरत नहीं है, समझने की जरूरत तो वहां है जहां कोई आपको समझाता है कि आप भगवान हैं। यह तो एक तथ्य है कि आप यंत्र हैं, इसे मानने की या विश्वास करने की भी जरूरत नहीं है बल्कि खोज लेने की जरूरत है। और जैसे ही इसे खोजेंगे वैसे ही वह दूसरी चीज जो आपके भीतर यंत्र नहीं है, अनुभव में आनी शुरू हो जाएगी। धीरे-धीरे आप जानेंगे, आपके चारों तरफ यांत्रिकता है लेकिन आप यंत्र हनीं हैं। आप एक चेतना हैं। आप एक आत्मा हैं। लेकिन आप एक आत्मा हैं यह सिद्धांत दोहराने से नहीं पता चलेगा, यह तो जानने से पता चलेगा, यांत्रिकता खोजने से।

क्यों मैं इस बात पर जोर दे रहा हूं कि आत्मा को जानने के लिए यांत्रिकता खोजना जरूरी है? कोई वजह है? अगर आप काले तख्ते पर सफेद लकीर खींचें तो सफेद लकीर पड़ेगी, और अगर आप सफेद तख्ते पर सफेद ही लकीर खींचें तो वह दिखाई नहीं पड़ेगी। अगर आपको पूरी तरह यह अहसास हो जाए कि आपका जीवन यांत्रिकता है तो उसी के बीच में इसी काले बोर्ड पर चेतना की सफेद लकीर आपको दिखाई पड़नी शुरू होगी। नहीं तो वह नहीं दिखाई पड़ेगी। यांत्रिकता के विरोध में ही आपको चेतना का अनुभव होगा, नहीं तो अनुभव होगा ही नहीं। जीवन में हमारे सारे अनुभव विरोध के कारण होते हैं, नहीं तो नहीं होते हैं। अभी आकाश काले बादलों से छा जाए, और एक बिजली चमके, तो बिजली दिखाई पडेगी। अभी यह बल्ब जल रहा है, यहां थोड़ी देर पहले भी हल रहा था लेकिन तब इसकी रोशनी पता नहीं चल रह

ी थी, क्योंकि चारों तरफ रोशनी थी। अब रात उतरने को शुरू हो गई है, तो आपके चेहरों पर बल्ब की रोशनी आनी शुरू हो गई है। रात गहरी होती जाएगी और बल्ब , प्रगाढ़ होकर दिखाई पड़ने लगेंगे। रात जब पूरी हो जाएगी तो बल्ब अपनी पूरी रोशनी में दिखाई पड़ेगा। मैं जो जोर दे रहा हूं इस बात वह इसीलिए कि यदि यांत्रिक जीवन (ऊमबींदपबंस) सपमि) का पूरा अनुभव हो जाए तो उसके विरोध में आपको चेतना की वह लकीर भी बिजली की भांति दिखाई पड़नी शुरू हो जाएगी जिसका नाम आत्मा है। लेकिन वह दिखाई पड़ सके इसके लिए जरूरी है कि यांत्रिकता का बोध जितना गहरा हो उतना ही शुभ है। क्योंकि उसी की पृष्ठिभूमि में आपको आत्मा का अनुभव होगा। इसलिए निराश होने की बात नहीं है बल्कि आशा से भर जाने की बात है। उसे खोजें, देखें और पहचानें। आत्मा को मत खोजें। उसको आप नहीं खोज सकते हैं। लेकिन अभी आप अपनी यांत्रिकता को खोजें। उसी यांत्रिकता की खोज से आत्मा की लकीर आपको स्पष्ट होनी शुरू होगी। उसी के बीच आपको उस बिजली की चमक दिखाई पड़नी शुरू हो जाएगी। उस चमक की पूर्णता में ही परमात्मा उपलब्ध होता है। लेकिन इसके पहले परमात्मा के संबंध में कुछ भी कहना, कुछ भी सोचना, एकदम नासमझी है, गलत है। और गलत ही नहीं, वह खतरनाक बात भी है। क्योंकि वैसा ज्ञान वास्तविक ज्ञान से आगमन पथ पर अवरोध के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं बनता है।

एक मित्र ने पूछा है कि भगवान की धारणा का जन्म कैसे हो गया?

भगवान की धारणा का जन्म भय (थमंत) के कारण हो गया। परमात्मा के अनुभव का जन्म भय के कारण नहीं होता। वह तो ज्ञान के कारण होता है। लेकिन भगवान की धारणा (बवदबमचज), भगवान के सिद्धांत का जन्म भय के कारण होता है।

एक गांव मग से एक फकीर गुजर रहा था। उस गांव के राजा ने उसे पकड़वाकर बुलवा लिया। दरबार में उसे बुलाकर कहा कि मैंने सुना है कि तुम बहुत बड़े रहस्यवादी संत हो, और मैंने सुना है कि तुम्हें परमात्मा के दर्शन होते हैं। मेरे सामने तुम रहस्यवादी संत हो, ऐसा सिद्ध करो। अगर सिद्ध न कर सके तो गरदन अलग करवा दूंगा। उस फकीर ने यह सुना। वह बादशाह पागल था, जैसे कि अक्सर बादशाह पागल होते हैं, और खतरा था कि कहीं वह गरदन अलग न करवा देग। उसने एकदम आंखें बंद की और कहा कि देखो, वे मुझे दिखाई पड़ रहे हैं। आकाश में भगवान अपने सिंहासन पर विराजमान हैं और देवता उनकी स्तुति कर रहे हैं। वह नीचे देखो, जमीन में वहां से राक्षस और नर्क यह सब दिखाई पड़ रहा है। उस राजा ने कहा बड़ी हैरानी की बात है क्या तुम्हें दीवारों के पार भी दिखाई पड़ता है? कौन सी तरकीब है जिसके कारण तुम्हें आकाश में बादलों के पार भगवान दिखाई पड़ रहे हैं? और जमीन के नीचे नर्क दिखाई पड़ जाता है? तो उसने कहा कोई तरकीब नहीं है महानुभाव! बहुत ज्यादा चीज की जरूरत नहीं है। भय भर होना चाहिए और फिर सब दिखाई पड़ने लग जाता है। जब आपने कहा कि गरदन कटवा देंगे मैंने आंखें बंद कर लीं और

मुझे भगवान दिखाई पड़ने लगे और नर्क भी दिखाई पड़ने लगा। सिर्फ भय की जरूरत है और फिर सब दिखाई पड़ने लगता है, किसी और चीज की कोई जरूरत नहीं है। आपको भय हो तो आपको सब कुछ दिखाई पड़ने लगेगा, भूत भी और भगवान भी। लेकिन ऐसे दिखाई पड़ने वाले न तो भूत सच हैं और भगवान सच हैं। आपके भय पर जो भी अनुभव खड़ा होता है, वह व्यर्थ है और झूठा है।

भगवान की धारणा मनुष्य के भय से पैदा हो जाती है। जीवन में सब दुखी हैं, पीड़ित और भयभीत हैं। जीवन में कहीं भी कोई सहरा नहीं है। जीवन में कहीं कोई आसरा नहीं है, जीवन में सुरक्षा (मबनतपजल) का कोई पता नहीं है। सब घबड़ाहट में मर नेवाले हैं। इसलिए आदमी डरता है और इस डर से आकाश में सहारे खोजता है। हे भगवान! शायद तुम्हीं सहारा हो। शायद तुम्हारे पैर पकडूं और मुझे सहारा मिल जाए, सुरक्षा मिल जाए। इस जगत में तो कुछ सहारा मिलता नहीं है, कोई किनारा नहीं है। तुम्हीं मेरे किनारे हो। वह घबड़ाहट में भय की कल्पना करता है और उसके पैर पकड़ कर प्रार्थनाएं करता है और हाथ जोड़ता है और स्तुतियां करता है। शायद तुम प्रसन्न हो जाओ और मुझ पर कृपा करो और मेरे जीवन के सहारे और आधार बन जाओ। यह भगवान एकदम झूठा है। क्योंकि इसका जन्म हमारे भय से हुआ है और भय हमारा बिलकुल यांत्रिक है। इसलिए तो धार्मिक आदमी को ईश्वर भीरु (फवक(ि मंतपदह), भगवान से डरा हुआ कहते हैं। भगवान के प्रति भीरु! बड़ी अजीब बात है। कोई आदमी ईश्वर भीरु होकर भी धार्मिक हो सकता है? जिस आदमी के भीतर भगवान का भय है, वह तो कभी धार्मिक नहीं हो सकता। धार्मिक होने के लिए तो अभय (थमंतसमेदमे) चाहिए। अभय चित्त ही उस जीवन को पाता है जो कि सत्य है जो कि परमात्मा है। जो भयभीत है वह अपने भय के अतिरिक्त कुछ भी नहीं जानता। भय से सुरक्षा के लिए उसने जो कल्पनाएं की हैं, वह उनको ही जानता है। और भय से निकली हुई सारी कल्पनाएं झूठी हैं।

भगवान की धारणा भय से निकलती है किंतु भगवान का अनुभव जागृत चेतना से उपलब्ध होता है। और चूंकि हम सोए हुए हैं, यांत्रिक हैं हमारे सारे भगवान हमारे जैसे ही झूठे हैं। हमारे सब भगवान हमारे जैसे ही यांत्रिक हैं क्योंकि उनको बनाने वाले हम हैं। उनको हमने निर्मित किया है। मंदिरों में जो मूर्तियां खड़ी हैं, वे हमने खड़ी की हैं। मस्जिदें और शिवालय बनाए हैं तो हमने। धर्म खड़े किए हैं तो हमने। शास्त्र रचे हैं तो हमने। और स्वभावतः जैसे हम होंगे, वैसे ही हमारे शास्त्र होंगे, वैसे ही हमारे भगवान होंगे और इसलिए जैसे आदमी बदलता जाता है वैसे ही उसकी भगवान की धारणा भी बदलती जाती है।

पिछली सदी का भगवान और तरह का था। ज्यादा राजतांत्रिक (ःनजवबतंज) था क्योंकि आदमी का दिमाग राजतंत्र में था और इसलिए भगवान की शक्ल राजा की तरह ही थी। आजकल का भगवान थोड़ा ज्यादा लोकतांत्रिक (ंिमउचबतंजपब) है क्योंकि आदमी लोकतांत्रिक हो गया है। जैसा मनुष्य वैसा भगवान, यही नियम है।

अगर आप तीन हजार वर्ष पहले की किताबें पढ़ें तो घबड़ा जाएंगे। हमारी कल्पना में भी नहीं आएगा कि भगवान ऐसा भी कैसे हो सकता है? अगर आप भगवान के खिलाफ एक शब्द भी बोल दें तो वह आपकी हत्या कर देगा। ऐसा था तीन हजार साल पुराना भगवान। वह आपके ऊपर बिजली भी गिरा देगा, आपको तबाह कर देगा। आज हम ऐसे सोच भी नहीं सकते। हम तो भले आदमी के बारे में भी ऐसा नहीं सोच सकते कि उसको हम बुरा कहें तो वह हमारे घर में आग लगा देगा। भले आदमी की धारणा बदल गई है हमारी। लेकिन पुराना भगवान बिजली गिराता था, आग लगा देता था, नर्क में डाल देता था। हमारे दिमाग जैसे थे, वैसा हमने भगवान बना लिया था। अब हमारे दिमाग बदले तो हमने थोड़ा लोकतांत्रिक बनाया भगवान को। वह क्षमा भी करता है, दया भी और प्रेम भी करता है। आगे शायद हमारे दिमाग जाएंगे, हम दूसरी तरह का भगवान बना लेंगे। भगवान की धारणा हमारी दृष्टि है, भगवान की कल्पनाएं हमारे द्वारा ही निर्मित हैं। वह सब हमारी ही मनःसृष्टि (उपदक बतमंज पवदे) हैं। ये धारणाएं हमारी हैं और इनसे भगवान का कोई भी संबंध नहीं है। ये हमारे मन के खेल हैं, उससे ज्यादा नहीं। चूंकि स्त्रियों ने अब तक भगवान नहीं बनाए, इसलिए उनकी शक्ल पुरुष जैसी ही है। अगर स्त्रियां उन्हें बनाएं तो उनकी शक्ल स्त्रैण हो तो कोई आश्चर्य न होगा। और अगर पशु पक्षी अपने भगवान बनाए तो वे अपनी शक्ल में ही बनाएंगे। क्या आप सोच कसते हैं कि घोड़े और गधे अगर भगवान की कल्पना करें तो क्या आदमी की शक्लों में करेंगे? कोई घोड़ा और गधा आदमी को इस योग्य नहीं समझेगा। कि वह उसकी शक्ल में भगवान को बनाए। वह अपनी शकल में बनाएगा। नीग्रो अपनी शक्ल में बनाता है, चीनी अपनी शक्ल में, भारतीय अपनी शक्ल में और तिब्बती अपनी शक्ल में।

नीग्रो का जो भगवान है, वह कभी सफेद रंग का नहीं हो सकता आपको पता है : वह काले रंग का ही होगा। हां, शैतान सफेद रंग का हो भी सकता है : या तो अंग्रेज का भगवान कभी काले रंग का हो सकता है? हिंदुओं से पूछिए कि काले रंग के कौन होते हैं? वे कहेंगे : राक्षस। लेकिन नीग्रो से पूछिए तो वह कहेगा काले रंग के राक्षस होते हैं कभी? काले रंग के तो भगवान होते हैं और जितना शुद्ध उनका काला रंग होता है, उतना किसी का भी नहीं होता। शुद्धतम जो काला रंग होता है, वही है भगवान का रंग, और सफेद रंग तो शैतान का ही हो सकता है।

हमारी अपनी धारणाएं अपनी ही शक्ल में निर्मित होती हैं। ये सारी हमारी ही कल्पनाएं हैं। उनको कोई भी मूल्य नहीं है। लेकिन हां, सत्य का एक अनुभव भी है जहां हम मिट जाते हैं और हम उसे जानते हैं, जो वस्तुतः है। वहां हम रह जाते हैं न पुरुष, न स्त्री, न भारतीय, न हिंदू, न मुसलमान वहां चेतना रह जाती है। चेतना जिसका कोई रंग नहीं है, चेतना जिसका कोई आकार नहीं है, चेतना जो हिंदू नहीं है, मुसलमान नहीं है, हिंदुस्तानी नहीं है, पाकिस्तानी नहीं है। ईसाई आर यहूदी भी नहीं, पारसी भी नहीं। चेतना मात्र रह जाती है जहां, वहां वह जाना जाता है जो है। वही जो चेतना का प्राण है और केंद्र है उसका नाम है परमात्मा। लेकिन वह धारणा (िवदब

मचज) नहीं है बल्कि अनुभव (म्गचमतपमदबम) है। वह शब्द नहीं, शब्दातीत साक्षा त है। वह विचार नहीं निर्विचार अनुभूति (त्तमंसप्रुजपवद) है।
भगवान की धारणा भय से पैदा होती है लेकिन भगवान का अनुभव जागृत चित्त से पैदा होता है और भय को कोई स्थान जागृत में कभी नहीं है। जिसे हम धर्म मानकर चलते हैं वह धम नहीं है। और जिसे भगवान मानकर चलते हैं वह भगवान नहीं है। अभी तो हमें इसका ही पता हनीं है कि हम कौन हैं और क्या है? और हम भगवान की खोज की यात्रा कर निकल जाते हैं। आह, आदमी का अहंकार अदभुत है। जब उसे अहसास होता है कि भगवान नहीं मिल रहा है तो फिर वह कल्पनाएं करना शुरू कर देता है। और उसकी कल्पना इतनी शक्तिशाली है, उसकी स्वप्न देखने की क्षमता इतनी प्रगाढ़ है कि वह जिस कल्पना को चाहे उसका सहज ही अनुभव कर सकता है। धर्म की सरिता कल्पना के मरुस्थल में ही आज तक खोई रही है। और स्वप्न देखने के सुख में मनुष्य सत्य से वंचित ही रहा आया है। क्या आपको अपनी कल्पना शक्ति का पता नहीं है? हमारी कल्पनाएं इतनी तीव्र हैं और हमारे स्वप्न देखने की शक्त इतनी बड़ी है कि हम जिसका चाहें उसका अनुभव कर सकते हैं। सोया हुआ आदमी कुछ भी देख सकता है। हम अभी सोए हुए हैं। यांत्रिक आदमी सोचा हुआ आदमी है। यांत्रिकता और सोए हुए मन में कोई फर्क नहीं है। हमें पता हनीं है कि हम क्या कर रहे हैं? इसलिए पहली बात जागरण है, कल्पना नहीं। सत्य में जाना है, स्वप्न में नहीं। और सत्य की कोई भी धारणा नहीं हो सकती है। सब धारणाएं स्वप्न निर्मात्री होती हैं। सत्य में प्रवेश के लिए तो धारणाएं मात्र छोड़ देना आवश्यक है। परमात्मा की धारणा छोड़कर जो अज्ञात और अज्ञेय जीवन के प्रति जागता है, वही और केवल वही परमात्मा की अमृतानुभूति को उपलब्ध होता है।

मित्र! निद्रा से जागो

मनुष्य एक यंत्र है। मनुष्य की चेतना जागी हुई नहीं है। मनुष्य एक सोती हुए आत्मा है। उसका सारा जीवन ही सोया हुआ जीवन है। लेकिन बात यहीं समाप्त नहीं हो जाती। बात यहां शुरू होती है। मनुष्य यंत्र है, तो यंत्र से ऊपर उठने की भी उसकी संभावना है। अगर अपनी यांत्रिक स्थिति उसे पूरी तरह स्पष्ट हो जाए तो स्पष्ट होने के हाथ ही भीतर कोई शक्ति जगने लगेगी जो उसे मनुष्य बना सकती है।
इस बात को ठीक से समझ लें कि मनुष्य के सोए हुए होने से मेरा क्या अर्थ है?
मनुष्य यंत्र है--इस बात को कहने से मेरा क्या प्रयोजन है?
इस बात का एक ही अर्थ है कि अभी हम जिसे जागरण समझते हैं वह जागरण नहीं है। वह स्वप्न देखने की एक दशा है।
रात आकाश में तारे भरे होते हैं। सुबह सूरज निकलता है, और हम सोचते होंगे कि सूरज निकलने के साथ तारे समाप्त हो गए, या कि तारे कहीं चले गए। लेकिन तारे न तो समाप्त होते हैं न कहीं जाते हैं। वे सूरज की रोशनी में केवल छिप जाते हैं। अगर कोई बहुत गहरे कुएं के भीतर चला जाए, तो वहां उस अंधेरे में से आकाश के

तारे दिन में भी दिखाई पड़ सकते हैं क्योंकि तारे तो दिन में भी वही मौजूद होते हैं जहां रात थे, लेकिन सूरज की रोशनी में छिप जाते हैं और दिखाई नहीं पड़ते।
रात हम स्वप्न देखते हैं। सुबह उठकर सोचते हैं। स्वप्न समाप्त हो गए। लेकिन नहीं, स्वन हमारे भीतर चलते हैं। अगर थोड़ी देर कसी भी क्षण अपनी आंख बंद करके भीतर जाए, भीतर देखे तो आप पाएंगे सपने वहां मौजूद हैं। वहां स्वप्न (क्तमैं) चल रहे हैं। हो सकता है आप राष्ट्रपति बन गए हों। अपने सपने में। हो कसता है आपने कोई बहुत बड़ा महल खड़ा कर लिया हो, या अपने दुश्मन की हत्या कर दी हो। लेकिन आंख बंद करके भीतर देखेंगे तो पाएंगे कि दिन में जागते हुए भी वहां कोई न कोई स्वप्न मौजूद है।
और ऐसे ही चित्त को, जिसमें स्वप्न मौजूद हैं, मैं सोचा हुआ चित्त कहता हूं। रात हम सपने देखते हैं और दिन में जाग कर भी सपने देखते हैं एक ही फर्क पड़ता है। रात में आंखें बंद होती हैं, इसलिए सपना स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ता है क्योंकि बाहर की दुनिया हमारी आंखों में नहीं होती। दिन में सपना तो भीतर मौजूद होता है पर बाहर की दुनिया के कोलाहल में दब जाता है। वह मौजूद रहता है, मिटता नहीं है, सांझ होते ही, सूरज के बिदा होते ही, तारे चमकना शुरू हो जाते हैं, ऐसे ही दिन की रोशनी में बाहर की दुनिया के चित्र सामने खड़े हो जाते हैं और भीतर के सपने दब जाते हैं। वे मिटते नहीं है। आंख बंद करें और भीतर देखें। सपना वहां मौजूद होगा। सांझ होगी, बाहर की दुनिया से चित्त थक जाएगा। बाहर की दुनिया के चित्र हल्के पड़ने लगेंगे, और अपने स्पष्ट होने लगेंगे। वे तो चौबीस घंटे चल ही रहे हैं। उनकी एक अविच्छिन्न धारा है। उनका एक लगातार क्रम है। वह टूटता नहीं है। इसीलिए मैंने कहा कि मनुष्य सोया हुआ है। जो सपने देखता है वह सोया हुआ ही है। वह नींद में ही है।
जिस दिन चित्त सारे सपनों से मुक्त हो जाता है, भीतर कोई स्वप्न नहीं रह जात, उसी दिन उस गहरी शांति में, उस शांति चित्त में सत्य का प्रतिबिंब बनना शुरू होता है। जैसे किसी झील में लहरें लय हो जाए, और झील बिलकुल शांत हो जाए, तो उसमें चांद और तारों के प्रतिबिंब बनने लगते हैं। ऐसे ही स्वप्न रहित शांत चित्त में परमात्मा की छवि उतरना शुरू होती है। उसका आलोक उतरना शुरू होता है। स्वप्न रहित, जागृत चित्त सत्य की और स्वयं की खोज का द्वार है। लेकिन हम सोए हुए हैं। और सोए हुए हम जो भी करेंगे, उससे सत्य के, स्वयं के या आनंद के निकट कभी नहीं पहुंच सकते हैं।
सोया हुआ आदमी चाहे कितना ही सोचे कि वह कहीं पहुंच गया है, लेकिन कहीं पहुंचता नहीं है। आपने हजारों बार रात सपने में देखा होगा कि आप काश्मीर पहुंच गए, हिमालय पहुंच गए या कहीं और पहुंच गए। और सुबह जागकर आपने पाया कि आप वहीं हैं, जहां आप सोए थे, कहीं पहुंचें नहीं हैं। सोया हुआ आदमी कहीं पहुंचता है? पहुंचने के सपने जरूर देखता है। और जिस दिन भी जागता है, जिस क्षण भी जागता है, पाता है कि वहां खड़ा है जहां पर था। इसलिए सोया हुआ आदमी केवल

यात्रा के सपने देखता है लेकिन यात्रा कभी भी नहीं कर पाता। सोचता है यह बन जाऊं, वह बन जाऊं लेकिन यह सब उसका सपना है। जिस दिन भी जागेगा तो वह पाएगा कि वह कुछ भी नहीं बना, वहीं का वहीं खड़ा है।

सोया हुआ आदमी विचार करता है न मालूम क्या क्या हो जाने के, लेकिन कुछ हो नहीं पाता। मौत उसके सारे सपनों को तोड़ देती है। और वह पाता है कि मैं तो वहीं खड़ा हुआ, जहां मैं था। जीवन की यही विफलता, दुख और विषाद बन जाती है। कहां, कहां पहुंचने का सोचते हैं और कहीं पहुंच नहीं पाते। पहुंचते भी हैं तो वहां, जहां कभी सोचा भी न था। सारी यात्रा मृत्यु में समाप्त हो जाती है। जहां कोई कभी नहीं पहुंचना चाहता, अंततः हम वहीं पहुंच जाते हैं। जिंदगी भर चलकर मौत में पहुंच जाते हैं। जिंदगी भर दौड़कर मृत्यु में पहुंच जाते हैं। और मैं आपको निवेदन कर दूं, जो सोया हुआ है, वह सिवाय मृत्यु के और कहीं पहुंचेगा भी नहीं। सोये हुए होने और मौत में कोई गहरा संबंध है। मौत असल में और गहरे रूप से सो जाने के सिवाय क्या है? जो जिंदगी भरी सोया रहा है वह मृत्यु की गहरी निद्रा में पहुंच ही जाएगा। लेकिन जो अपने भीतर जागना शुरू हो जाता है, उसके लिए मृत्यु मिट जाती है। सोया हुआ चित्त (एसममचपदह उपदक) मौत में पहुंचता है। जागा हुआ चित्त (ंतम उपदक) वहां पहुंच जाता है, जहां अमृत है, जहां कोई मृत्यु नहीं है।

हम सब लोग सारी यात्रा करके कहां पहुंचते हैं? यह पूछ लेना जरूरी है, क्योंकि मंजिल बता देगी कि हम सोए हुए हैं या जागे हुए?

एक फकीर से किसी ने जाकर पूछा कि हमें मृत्यु और जीवन के संबंध में कुछ समझाएं? उस फकीर ने कहा: कहीं और जाओ! अगर केवल जीवन के संबंध में ही समझना हो तो समझाऊं लेकिन मौत के संबंध में समझना हो तो कहीं और जाओ। क्योंकि मौत को तो हम जानते ही नहीं कि कहां है। हम तो केवल जीवन को जानते हैं। जो जागता है वह केवल जीवन को जानता है। उसके लिए मौत जैसी कोई चीज रह ही हनीं जाती। और सोता है वह केवल मौत को ही जानता है। वह जीवन को कभी नहीं जान पाता।

सोया हुआ आदमी इन अर्थों में मरा हुआ आदमी है। उसे जीवन का केवल आभास है, कोई अनुभव नहीं। वह सोया हुआ है इसलिए वह एक जड़ यंत्र है, सचेत आत्मा नहीं। और इस सोए हुए होने में वह जो भी करेगा, वह मृत्यु के अलावा उसे कहीं नहीं ले जा सकते है, चाहे वह धन इकट्ठा करे, चाहे वह धर्म इकट्ठा करे; चाहे वह दुकान चलाए, और चाहे वह मंदिर जाए; चाहे वह यश कमाए और चाहे वह त्याग करे। उसका कुछ भी करना उसे मृत्यु के बाहर नहीं ले जा सकता है। एक कहानी मुझे बहुत प्रीतिकर है। वह में आपसे कहूं।

एक राजा ने रात सपना देखा। वह घबड़ा गया और उसकी नींद टूट गई। फिर तो उतनी रात उसने सारे महल को जगा दिया और सारी राजधानी में खबर पहुंचा दी कि मैंने एक सपना देखा है। जो लोग मेरे सपने का अर्थ कर सकें, उसकी व्याख्या कर सकें, वे शीघ्र चले आए।

गांव में जो भी पंडित थे, विचारशील लोग थे, ज्ञानी थे, भागे हुए राज महल जाए। और उन्होंने राजा से पूछा कि कौन सा सपना आपने देखा है कि आधी रात को आप को हमारी जरूरत पड़ गई उस राजा ने कहा, मैंने सपने में देखा है कि मौत मेरे कंधे पर हाथ रखकर खड़ी है और मुझसे कह रही है कि सांझ ठीक जगह पर और ठीक समय पर मुझे मिल जाना। मुझे तो कुछ समझ में नहीं आता कि इस अपने का क्या अर्थ है? तुम्हीं मुझे समझाओ।

ये लोग विचार में पड़ गए और सपने का अर्थ करने लगे—क्या होगा इसकी सूचना क या है? इसके लक्षण क्या है? और तभी महल के एक बूढ़े नौकर ने राजा को कहा: इनके अर्थ और इनकी व्याख्याएं और इनके शास्त्र बहुत बड़े हैं। और सांझ जल्दी हो जाएगी। मौत ने कहा है, सांझ होते होते सूरज ढलते ढलते मुझे ठीक जगह पर मि ल जाना। मैं तुम्हें लेने आ रही हूं। उचित तो यह होगा कि आपके पास जो तेज से तेज घोड़ा हो, उसको लेकर इस महल से सांझ तक जितनी दूर हो सके निकल जाए। इस महल में अब एक क्षण भी रुकना खतरनाक है। जितनी दूर जा सकें चले जाए। मौत से बचने का इसके सिवाय कोई रास्ता नहीं है। और अगर इन पंडितों की व्याख्य ा के लिए रुके रहे कि ये क्या अर्थ करेंगे तो मैं आपसे कह देता हूं कि ये पंडित तो आज तक किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंच है, कोई निष्पत्ति और कोई समाधान पर नहीं पहुंचे हैं हालांकि हजारों साल से विचार कर रहे हैं। जब ये अभी तक जीवन का ही कोई अर्थ नहीं निकाल पाए तो मौत का क्या अर्थ निकाल पाएंगे? सांझ बहुत जल्दी हो जाएगी इनका अर्थ न निकल पाएगा। आप भागे यही ठीक है। इस महल को जल द से जल्द छोड़ दें यही उचित है। राजा को बात समझ में आई। उसने अपना तेज से तेज घोड़ा बुलवाया और उस पर बैठ कर भागा।

दिन भर वे भागता रहा। न उसने धूप देखी न छांव। न उस दिन उसे प्यास लगी, न भूख। जितने दूर निकल सके उतने दूर निकल जाना था। मौत पीछ पड़ी थी। महल से जितना दूर हो जाए उतना ही अच्छा था। जितना मौत के पंजे से बाहर हो जाए उ तना ही अच्छा था।

सांझ होते होते, वह सैकड़ों मील दूर निकल गया। सूरज ढल रहा था। उसने एक बग ीचे में जाकर घोड़ा ठहराया। वह प्रसन्न था कि वह काफी दूर आ गया है। जब घोड़ा बांध ही रहा था तभी उसे अनुभव हुआ कि पीछे से किसी ने कंधे पर हाथ रख दिया है। उसने लौटकर देख—वह घबड़ा गया! उसके सारे प्राण कंप गए! जो काली छाया रात सपने में उसे दिखाई पड़ी थी। वही खड़ी थी। घबड़ा कर राजा ने पूछा: तुम! तु म कौन हो? उसने कहा, मैं हूं तुम्हारी मृत्यु। क्या भूल गए आज की रात ही मैंने तुम् हें स्मरण दिलाया था कि सांझ होने के पहले, सूरज ढलने के पहले, ठीक समय, ठीक समय, ठीक जगह पर मुझे मिल जाना। मैं तो बहुत घबड़ाई हुई थी क्योंकि जहां तु म थे, वहां से हम वृक्ष के नीचे तक, ठीक समय पर आने में बहुत कठिनाई थी। लेि कन तुम्हारा घोड़ा बहुत तेज था और उसने तुम्हें ठीक समय, ठीक जगह पर पहुंचा ि

दया। मैं तुम्हारे घोड़े को धन्यवाद देती हूं। इस जगत तुम्हें मरना था और मैं चिंतित थी कि सूरज ढलने तक तुम इस जगत तक आ भी पाओगे या नहीं।

दिन भर की दौड़ सांझ को मौत में ले गई। सोचा था बचने के लिए भाग रहा है। और उसे पता भी न था कि बचने के लिए नहीं भाग रहा था बल्कि जिससे बचना च ाह रहा था प्रतिक्षण उसके ही निकट होता जाता था। उसे पता भी न था कि उसका उठाया हुआ प्रत्येक कदम उसे मौत के मुंह में ले जा रहा था।

हम सब भी अपने अपने घोड़े पर सवार हैं। आर हम सब भीतर मौत के मुंह में चले जा रहे हैं। हम जो भी करेंगे, वह शायद हमें उस ठीक जगह पहुंचा देगा जहां मौत हमारी प्रतीक्षा कर रही है। और हम जिस रास्ते पर भी चलेंगे वह हमें मौत के अतिरिक्त कहीं नहीं ले जाएगा। आज तक यही होता रहा है।

सोया हुआ आदमी जो कुछ भी करेगा वह मृत्यु में ले जाता है। सोने का अंतिम परिणाम मौत ही हो सकती है। लेकिन सोना आदमी की नियति नहीं है। यह जरूरी नहीं है कि कोई सोया ही रहे। जागा भी जा सकता है। जो सोया है, वह जाग भी सकता है। पीछे लोग जागे हैं। आज भी जाग सकते हैं। जागने का भी मार्ग है, रास्ता है, द्व ार है। अभी तो हम नींद में जो भी करेंगे उससे कुछ भी होने को नहीं है। हमारी पूज ा और हमारी प्रार्थना कुछ भी न करेगी। नींद बुनियादी रूप से पहले चरण की तरह टूट जानी चाहिए तभी कुछ हो सकता है। वह नींद कैसे टूटे, कैसे भीतर चेतना बेहोश और जागरण से भर जाए, कैसे भीतर बोध कर दिया जल जाए, उसके सूत्रों पर बात करूंगा। लेकिन उसके पहले बुनियादी रूप से यह समझ लें कि सोए हुए कुछ भी नहीं हो सकता।

एक घटना मुझे स्मरण आती है। एक फलों की दुकान के पास एक भिखारी खड़ा हुआ था। दोपहर हो गई थी और दुकान का मालिक घर भोजन करने को जाना चाहता था। उसने एक लोमड़ी पाल रखी थी। जब वह भोजन के लिए जाता तो वह लोमड़ी उसकी दुकान के बाहर बैठकर पहरा दिया करती थी। मालिक ने लोमड़ी को कहा कि तू बाहर आ और द्वार पर बैठ। आसपास कोई भी आदमी आए तो खयाल रखना ि क कोई ऐसा काम तो नहीं कर रहा है जिससे दुकान को नुकसान पहुंचने की संभावन ा हो। अगर वह ऐसा कुछ काम करता हुआ दिखाई पड़े तो सचेत हो जाना और आव ाज देना। देख लोमड़ियां कुत्तों से भी ज्यादा होशियार होती हैं। इसीलिए मैंने तुझे पाल ा है और तेर ऊपर जिम्मा छोड़ा है।

उस लोमड़ी से जब यह कहा गया तो वह बाहर आकर बैठ गई। मालिक भोजन करने चला गया। वह भिखारी जो पास में ही खड़ा हुआ था, उनकी बातें सुन रहा था वहीं लेट गया। उसने आंख भी बंद कर लीं। लोमड़ी ने सोचा : सो जाना तो कोई क्रिया नहीं है! यह तो सो रहा है। यह कुछ कर तो नहीं रहा है। इसके सोने से तो दुकान को खतरा नहीं है। क्योंकि वह कुछ करता तो खतरा भी हो सकता था। लेकिन यह तो कुछ भी नहीं कर रहा है, सो रहा है। और सोना कुछ करना नहीं है।

उसका यह तर्क बड़ा ही उचित था क्योंकि सोना तो कोई क्रिया नहीं है। भिखारी कु
छ कर तो नहीं रहा था जिससे दुकान को खतरा होता। वह तो सिर्फ सो रहा था।
लेकिन उसे सोते देखकर लोमड़ी को भी नींद आने लगी। नींद बड़ी संक्रामक बीमारी
है। अगर आपके पास दो चार लोग सोने लगें तो आपका जागना बहुत मुश्किल हो जा
एगा। आप भी सो जाएंगे। लोमड़ी को भी नींद आने लगी। और फिर कोई खतरा भी
न था। वह निश्चित होकर सो सकती थी। एक आदमी था जिससे कोई खतरा हो स
कता था लेकिन वह सो गया था। तो लोमड़ी भी सो गई।
लोमड़ी के सोते ही वह आदमी उठा। दुकान के भीतर गया और जो उसे चुराना था
चुरा लिया। लोमड़ी को क्या पता था कि सोते हुए लोग भी कुछ करते हैं। वह भोल
ी भाली थी। उसे आदमियों का कोई अंदाज न था कि आदमी बहुत खतरनाक है। औ
र सोते हुए आदमी से डर है और खतरा है। बल्कि सच तो यह है कि सोते हुए आद
मी से ही असली डर है। सोया हुआ आदमी ही चोरी कर सता है। सोया आदमी ही
असत्य बोल सकता है। सोया हुआ आदमी ही बेईमानी कर सकता है और हिंसा कर
सकता है। सोचा हुआ आदमी ही यह सब कर सकता है। यह उस लोमड़ी को पता न
था। उसने तो समझा कि सोना कोई काम थोड़े ही है। जो सो गया सो, सो गया उस
से क्या डर? बेचारी भोली भाली थी। उसे जानवरों की आदत का पता होगा पर आ
दमियों की आदत का कोई पता न था। आदमी तो वैसे ही बड़ा खतरनाक है। और ि
फर सोता हुआ आदमी तो बहुत खतरनाक है। क्योंकि सोया हुआ आदमी कुछ न कुछ
करेगा आर नींद में वह जो भी करेगा वह खतरनाक ही होगा। वह चोरी होगी, हिंस
ा होगी, झूठ होगा।
तो वह भिखारी चोरी करके भाग गया। जब मालिक वापस आया तो उसने देखा कि
चोरी हो गई है। लोमड़ी घबड़ाई हुई बैठी है। उसने लोमड़ी से पूछा कि क्या हुआ? ले
किन वह क्या बताती? वह खुद ही सो गई थी।
मालिक बाहर भागा। और थोड़ी ही दूर पर उसने भिखारी को छिपे हुए, एक वृक्ष के
पीछे, फल खाते हुए देखा। वह उसके पास गया और उसने पूछा मेरे मित्र! तुमने चो
री की वह तो ठीक, लेकिन क्या मैं पूछ सकता हूं कि तुमने चोरी कैसे की? उस भि
खारी ने कहा, बहुत आसान था चोरी करना। लोमड़ी को मैंने सोने का धोखा दिया।
मैं आंख बंद करके लेट गया और लोमड़ी धोखे में आ गई। उसने शायद सोचा होगा ि
क सोया हुआ आदमी क्या कर सकता है? लेकिन मैं तुम्हें बता दूं, आज तक दुनिया
में जो कुछ भी किया है वह सोए हुए आदमी ने ही किया है इसलिए दुनिया इतनी ब
दतर है। तुम्हारी लोमड़ी धोखे में आ गई थी लेकिन तुम धोखे में मत आना। अगर
लोमड़ी मेरे सोने के धोखे में न आती तो मैं चोरी न कर पाता।
मैंने यह कहानी सुनी और यह मुझे बड़ी हैरान की लगी और बड़ी सचाई से भरी हुई
भी। अभी हम जो भी कर रहे हैं उससे जीवन में दुख फलित होता है। उससे जीवन
में हिंसा, चोरी और अनाचार फलित होता है। शायद हमें इस बात का पता भी ही
है। और शायद इस बात का हमें कोई खयाल भी नहीं है कि ये सारी बातें हमारे सो

ने से पैदा होती हैं। हम नींद में हैं। हमारी चेतना सोई हुई है। और सोई हुई स्थिति में अगर हम चाहें कि इन सारी क्रियाओं को बदल दें तो यह असंभव है। यह बिलकुल ही असंभव है। इसे बहुत स्पष्ट रूप से समझ लें कि सोई हुई स्थिति में कोई परिवर्तन मनुष्य के जीवन में संभव नहीं है। और अगर कोई परिवर्तन को अपने ऊपर थोप भी लेगा तो वह झूठ होगा और पाखंड होगा। उसके प्राणों में कोई क्रांति नहीं होगी। भीतर वह वही का वही आदमी रहेगा।

सोई हुई चेतना ऊपर उठने में असमर्थ है। सोई हुई चेतना सत्य को जानने में और जीवन को जानने में असमर्थ है। तब कैसे इसे जगाए? क्या करें? लोग कहते हैं कि अगर आत्मा को जानना है तो आत्मा को मानना पड़ेगा। मैं यह नहीं कहता। सोया हुआ आदमी क्या मान सकता है? उसके मानने का मूल्य कितना है? उसके मानने का अर्थ कितना है? उसके विश्वास का कितना मतलब है? इसीलिए मैं नहीं कहता कि आत्मा को मानना पड़ेगा। मैं कहता हूं कि स्वयं को जागना पड़ेगा। और जो जागता है वह पाता है कि आत्मा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। लेकिन यह जागरण कहां से शुरू हो?

लोग आपसे कहेंगे कि भीतर झांके। लेकिन मैं आपसे कहता हूं—जो बाहर झांकने में भी समर्थ नहीं है वह भीतर कैसे झांक सकेगा? इसलिए जागरण का पहला चरण है—बाहर जो जगत फैला हुआ है उसके प्रति जागरण। वहीं से शुरुआत हो सकती है। जो बाहर के प्रति जागता है, वह धीरे धीरे भीतर के प्रति भी जागना शुरू हो जाता है। क्यों? क्योंकि बाहर और भीतर दो चीजें नहीं हैं—वे एक ही चीज के दो छोर हैं। जो बाहर के प्रति जागना शुरू करेगा, धीरे धीरे उसका जागरण भीतर गहरे में भी प्रवेश करता चला जाएगा। इसलिए जागरण का पहला सूत्र है—जो हमारे चारों तरफ फैला जगत है, उसके प्रति जागरण।

आप कहेंगे उसके प्रति तो हम जागे हुए ही हैं। लेकिन मैं आपको कहूं उसके प्रति भी हम जागे हुए नहीं है। जो वृक्ष आपके द्वार पार लगा है उसको कभी आपने सजग होकर देखा है? उसको कभी आपने आंख भरकर देखा हैं? कभी आप उसके पास दो क्षण रुके हैं? जो पत्नी आपके घर में इतने वर्षों से आपकी सेवा करती आई है, कभी उसकी आंखों में झांका है? कभी देखा है? कभी दो क्षण उसके प्रति होश से भरे हैं? बच्चा जो आपके घर में पैदा हुआ है, कभी उसके पास दो क्षण बैठकर आपने उसका निरीक्षण किया है? नहीं, बिलकुल नहीं। चारों तरफ हमारे जो जिंदगी फैली हुई है, उसके प्रति हम बिलकुल सोए हुए से चलते हैं।

लेकिन यह पता कैसे लगेगा? यह तो तभी चल सकता है, जब कभी आपकी जिंदगी में कोई खतरे आए हों, कभी रास्ते अचानक किसी आदमी ने आपके ऊपर छुरा उठा लिया हो। या कभी आप किसी गड्ढे के ऊपर से गुजरे हों जहां गिरने और मर जाने का भय हो। अगर अभी कोई आपकी छाती पर छुरा लेकर खड़ा हो जाए तो आपको पहली दफा पता चलेगा कि आप अब तक सोए हुए हैं। उस खतरे में शायद एक क्षण को जाग जाएं और देखें कि क्या होता है? लेकिन साधारणतः तो हम सोए सोए ह

ी चलते हैं। जिंदगी में दो चार मौके आते हैं जब जीवन खतरे में होता है। और तब एक जागरण एक क्षण को भीतर पैदा होता है। पश्चात हम फिर तो सो जाते हैं। ऐसा आदमी खोजना कठिन है जिसे जीवन में ऐसे मौके न आए हों कि जब कुछ क्षणों के लिए उसने जागरण का अनुभव न किया हो।

कभी आपने अपने घर के बाहर चलती हुई सड़क को गौर से देखा है? अगर आप गौर से देखें तो आप पाएंगे कि लोग सोए हुए चले जा रहे हैं। वे सड़क पर चल रहे हैं। लेकिन उनका मन कहीं और चल रहा है। आप लोगों की आंखें, चेहरे और कदम देख कर समझ सकेंगे। कि जैसे वे नींद में चले जा रहे हों। उन्हें चारों तरफ का कोई पता नहीं है। चारों तरफ की एक हल्की सी झलक है, जिसकी वजह से वे कामचलाऊ रूप में चल लेते हैं। रास्तों पर से निकल जाते हैं, और लोगों से टकराते नहीं। लेकिन चारों तरफ क्या हो रहा है इसको कोई स्पष्ट बोध नहीं है।

आप कहीं बैठे हैं और कोई आपको खबर दे कि आपके मकान मैं आग लग गई है तो आप वहां से उठेंगे और अपने घर की तरफ भागेंगे? तब क्या आपको रास्ते में चलते हुए लोग दिखाई पड़ेंगे? क्या आपको कोई नमस्कार करेगा तो सुनाई पड़ेगा? सुनाई तो जरूर पड़ेगा क्योंकि कान हैं तो सुनेंगे और दिखाई भी पड़ेगा क्योंकि आंखें हैं तो दिखाई भी देगा। लेकिन मैं आपको पूछूं कि रास्ते में किन लोगों ने नमस्कार किया था? कौन लोग दिखाई पड़े थे? तो आप कहेंगे मुझे कोई होश न था। मेरे मकान में आग लगी थी। कान सुनते थे, आंख देखती थी लेकिन भीतर कोई होश न था। रास्ते से आप गुजर भी गए बिना टकराए, बिना किसी से उलझे। आप अपने घर भी पहुंच गए लेकिन आपको कुछ भी पता नहीं है कि रास्ते में क्या हुआ? तो मैं कहूंगा कि रास्त पर आप सोए हुए निकले। वैसे तो अभी भी हम रोज सोए हुए ही निकल रहे हैं, नींद की मात्रा भर का भेद है। हमें कुछ पता नहीं है कि चारों तरफ क्या फैला है। जिंदगी एक यंत्र की भांति चलती जाती है।

जीवन जो चारों तरफ फैला है, वह तो बहुत दूर की बात है। जो हमारे बहुत निकट खड़ा हुआ जीवन है, उसके प्रति भी हम होश से भरे हुए नहीं है। और जब तक हम इस बाहर की रेखा पर होश में भरे हुए न हों, तब तक होश भीतर भी नहीं ले जाया जा सकता।

अंधी हेलन केलर को किसी ने पूछा कि तुम्हें जिंदगी में सब से बड़े चमत्कार की, सब से बड़े रहस्य की बात क्या अनुभव हुई? हेलन केलर ने कहा एक बड़ी अदभुत बात मैंने अनुभव की कि लोगों के पास आंखें हैं लेकिन शायद ही कोई उनसे देखता हो! लोगों के पास कान हैं लेकिन शायद ही कोई उनसे सुनता हो और लोगों के पास हृदय है लेकिन शायद ही कोई उससे अनुभव करता हो।

और निश्चित ही हमने अपने जीवन के वे सारे द्वार, जिनसे बाहर का जीवन संस्पर्शित होता है और अनुभव होता है, बंद कर रखे हैं। जीवन की कोई खबर हमारे भीतर नहीं आ पाती। अगर ये द्वार खुले हों और जीवन की खबर भीतर आना शुरू हो जाए तो हम एक दूसरे ही मनुष्य के रूप में परिवर्तित होने लगेंगे। अगर कोई व्यक्ति अप

ने घर के द्वार पर खड़े हुए वृक्षों को भी संपूर्ण सजग दृष्टि से देख ले तो उसके जीव न में कुछ और ही बात शुरू हो जाएगी। लेकिन नहीं, यह में कुछ भी दिखाई नहीं प. डता। हमारी आंखों पर जैसे नींद का एक परदा है। और उस परदे के पार कुछ भी ि दखाई नहीं पड़ता।

हम जहां है, वस्तुतः वहां हमारा मन मौजूद ही नहीं है। हमारा मन हर क्षण कहीं औ र है। इसीलिए हम हर जगह सोए हुए हैं। जब हम भोजन कर रहे हैं तब दफ्तर में है। और जब हम दफ्तर में हैं तो मन भोजन करता है। जहां हम हैं वहां हमारा मन नहीं है। और नींद का यही लक्षण है कि हम जहां हैं वहां मन न हो।

बाहर के प्रति हमारी ग्राहकता और संवेदनशीलता भी न के बराबर है। हमें बाहर की घटनाएं छूती ही नहीं हैं। न बाहर का सौंदर्य हमें छूता है, न बाहर की कुरूपता हमें छूती है, न बाहर का आनंद हमें छूता है, न बाहर का दुख हमें छूता है। न आकाश , न नदिया, न तारे, न पहाड़ हमें कुछ भी नहीं छूता। हम उन सबके पास से अंधे अ ौर बहरे की तरह गुजर जाते हैं। हमें कुछ दिखाई ही नहीं पड़ता कि यह क्या हो रहा है। काश! हमें दिखाई पड़ सके! तो शायद हमारा जीवन दूसरा हो जाए।

बाहर के प्रति जागने के लिए जरूरी है कि अचानक, आकस्मिक रूप से कभी भी दो क्षण के लिए ठहर जाए, और बाहर की दुनिया को देखें कि यह क्या है? तो शायद आपको भीतर एक लहर दौड़ती हुई मालूम पड़ और लगे कि कोई चीज जो सोई थी वह उठ गई है। रास्ते पर चलते चलते अचानक रुक जाए और दो क्षण खाली आंख घुमाकर देखें। इस अचानक रुकने से भीतर चलते हुए सपने एक क्षण को ठहर जाएंगे। और तब आप देख सकेंगे कि यह क्या हो रहा है?

कभी किसी वृक्ष के पास से निकलते हुए एकदम से रुक जाए। आंखें उठाए और वृक्ष को देखें! कभी रात छत पर निकल आए। आंखें उठाए और आकाश को देखें! सिर्फ देखें और कुछ भी न करें! इस अचानक रुकने से, इस झटका लगने से, भीतर फर्क प. डना शुरू होगा।

जो मैं कह रहा हूं, सैकड़ों प्रयोगों के आधार पर कह रहा हूं। उसे करके देखें; कभी भोजन करते वक्त एक क्षण को रुक जाए और खयाल करें कि मैं देखूं कि क्या हो र हा है? तो आप पाएंगे कि भीतर जैसे कोई चीज जागी है। एक क्षण को झलक आए गी और चली जाएगी लेकिन यह झलक दो बातें साफ कर देगी। एक तो यह कि हम साए हुए हैं। और दूसरी बात यह कि वह जागरण क्या है; उसका बोध भी हो जाए गा।

एक छोटे से गांव में मैं बहुत दिन तक। उस गांव की नदी के पास छोटी सी पहाड़ी थी। उस पहाड़ी पर इतनी खड़ी और संकरी कगार थी कि उस पर अगर किसी को चलाया जाए तो गिरने के और मर जाने के बहुत मौके थे। जब भी कोई मुझसे पूछत ा यह जागरूकता क्या है, जिसकी आप बातें करते हैं तो मैं उससे कहता कि आओ मेरे साथ नदी पर चलो! और मैं उसे उस पहाड़ी की कगार पर ले जाता। खुद आगे

चलता और उससे कहता, मेरे पीछे आओ! वह कगार इतनी संकरी थी कि एक पैर भी चूक जाए तो नीचे कोई २०० फूट गहरे गड्ढे में गिरना पड़े।
जब दूसरा व्यक्ति आता तो उसे एक एक कदम संभाल कर रखना पड़ता। एक एक श्वास भाग कर लेनी पड़ती। वहां सोए हुए नहीं चला जा सकता था। कगार पर करने के बाद मैं पूछता क्या कोई फर्क अनुभव हुआ? क्या तुम्हें यह अनुभव हुआ कि जब तक तुम उस कगार को पार कर रहे थे, तब तक तुम्हारे भीतर न तो कोई विचार उठा, न कोई सपना चला। क्या तुम्हें पता चला कि तुम जागे हुए थे और सावधान थे। और वह मुझ से कहता कि इसका मुझसे स्पष्ट पता चला। अनुभव हुआ कि जैसे मैं बिलकुल और ही तरह से चल रहा हूं, जैसा कि पहले कभी नहीं चला। एक एक कदम होश से भरा हुआ था। हृदय की धड़कन और श्वास भी मुझे सुनाई पड़ती थी।। सब तरफ से मैं जागा हुआ था क्योंकि एक पैर का चूकना भी मौत में ले जाता। मौत सामने थी।
तो कभी क्षण भर को एकदम रुक जाए अचानक। रास्ते पर चलते हुए, भोजन करते हुए, बिस्तर पर लेटते हुए, सीढ़ियां चढ़ते हुए, दिन में दो चार बाद अचानक रुक जाए। एक सेकेंड को रुक जाए और चारों तरफ देखें कि क्या है? आपको भीतर एक फर्क मालूम पड़ेगा जैसे नींद क्षण भर को टूटी हो। एक अंतराल पैदा होगा। और उस अंतराल में आनंद की अनुभूति होगी। क्योंकि उस जागे हुए क्षण में न दुख है, न अशांति। अगर यह क्षण निरंतर अनुभव में आता चला जाए तो आपके जाने की क्षमता बढ़ती चली जाएगी। दो ही बातें जरूरी हैं। एक तो कभी कभी ठहर कर जाग लेना और दूसरी बात जीवन के प्रति निरंतर निरीक्षण (द्धइेमतअंजपवद) का भाव करना। एक वृद्ध वैज्ञानिक अपने बच्चों को समझा रहा था कि निरीक्षण क्या है। उसके बच्चों ने पूछा कि विज्ञान की खोज में सबसे बड़ी बात क्या है? उस वृद्ध वैज्ञानिक ने कहा दो ही बातें जरूरी हैं। एक तो साहस (िंवनतंहम) और दूसरा निरीक्षण (ठइेमतअंजपवद)। उन बच्चों ने कहा कि हमें ठीक से समझा दें। तो उस वृद्ध वैज्ञानिक ने एक प्याली में नमक का बहु कडुआ, बहुत बेस्वाद घोल बनाया। और बच्चों से कहा, यह नमक का घोल है। बहुत कडुआ और बहुत बेस्वाद है। इसे जीभ पर रखो तो सारा मुंह तिक्त और कडुआ हो जाएगा। हो सकता है उल्टी हो जाए लेकिन इसकी जांच करना है इसे पहचानना है। तो मैं अपनी अंगुली इसमें डुबोऊंगा और उसे जीभ पर रखकर चखूंगा। तुम ठीक निरीक्षण करते रहना कि किस भांति मैं यह कर रहा हूं। भी फिर अपनी अंगुली डुबोनी होगी और जीभ पर रखनी होगी। ठीक से निरीक्षण करना ताकि तुम भी वैसा ही कर सको जैसा मैंने किया है।
उन बचें ने गौर से देखा। वे टकटकी लगाए देखते रहे। निरीक्षण करना जरूरी था! कयोंकि उनको भी वैसा करना था। उन्होंने देखा कि बूढ़े ने घोल में अपनी अंगुली डुबोई और फिर अंगुली को जीभ पर रखा। लेकिन जैसी अपेक्षा थी वैसा कुछ भी नहीं हुआ। न उसके चेहरे पर परेशानी के कोई भाव आए, न उसे उल्टी हुई। इसके बाद वह पयाली सब बच्चों के बीच घुमाई गई। हर बच्चे ने उसमें अपी अंगुली डुबोई और जीभ

पर रखी। लेकिन रखते ही जैसे जहर मुंह में पहुंच गया हो। वे सारे बच्चे थूकने लगे और कुछ को तो उल्टी भी हो गई। वे सब घबरा गए और उनकी आंखों में आंसू भर आए।

जब वे सारे बच्चे प्रयोग कर चुके तो वृद्ध वैज्ञानिक ने कहा, मेरे बच्चो! जहां तक साहस का सवाल है, तुम सब पूरे अंक पाने में सफल हो गए। तुम सब साहसी हो। लेकिन जहां। तक निरीक्षण का सवाल है, तुम सब असफल हो गए। मैंने जो अंगुली घोल में डुबोई थी, वही जीभ पर नहीं रखी, यह तुम में से किसी ने भी नहीं देखा। तुमने साहस तो दिखाया लेकिन निरीक्षण तुम नहीं कर पाए।

जो उस वृद्ध वैज्ञानिक ने उन बच्चों के विज्ञान के संबंध मग समझाया था, वही मैं आपको जीवन के संबंध में कहना चाहता हूं। हम से बहुत से लोग साहस तो कर पाते हैं, लेकिन निरीक्षण नहीं कर पाते। और बिना निरीक्षण के साहस खतरनाक है। सोया हुआ आदमी साहसी हो जाए तो बहुत खतरा है। उससे दुनिया में सिवाय बुराई के और कुछ भी नहीं को सकता। हम सब ने दुनिया में साहस तो बहुत किया है, किंतु निरीक्षण बिलकुल भी नहीं किया।

निरीक्षण से ही हमें अपनी यांत्रिकता का पता चल सकता है। और यह पता चल जाए तो यांत्रिकता का घेरा टूटना शुरू हो जाता है। क्योंकि साथ ही यह भी बोध में आना शुरू होता है कि मैं यांत्रिकता के बीच हूं, लेकिन स्वयं यंत्र नहीं हूं और अगर यह अहसास हो जाए कि सारी यांत्रिकता के बीच मेरी चेतना (ंविदेबपवनेदमे) अलग ही है, तो फिर कुछ हो सकता है। तभी मैं इस यंत्र के साथ कुछ कर सकता हूं। क्योंकि तब मैं इससे अलग हूं और इससे बाहर हूं। किसी चीज को जानते ही हम उससे अलग हो जाते हैं। देखने वाले देखे गए से अलग हो जाता है।

तो इस निरीक्षण से आपको अपनी ही ऊपर स्वामित्व प्राप्त होगा। और चारों तरफ फैले हुए और उसकी क्रियाओं का बोध होना शुरू होगा। यह हो सके तभी आप ठीक अर्थों में एक जागे हुए मनुष्य हो सकते हैं, उसके पहले नहीं। और यह हो जाए तो जीवन से सारी चिंता, अशांति और पीड़ा विलीन हो जाएगी, क्योंकि वह सोए हुए होने के कारण ही है। यंत्र से ऊपर उठते ही जीवन में परमात्मा, शांति, सत्य और सौंदर्य का जन्म हो जाता है।

प्रेम है द्वार प्रभु का

मनुष्य की आत्मा, मनुष्य के प्राण निरंतर ही परमात्मा को पाने के लिए आतुर हैं। लेकिन किस परमात्मा को, कैसे परमात्मा को? उसका कोई अनुभव, उसका कोई आकार, उसकी कोई दिशा मनुष्य को ज्ञात नहीं है। सिर्फ एक छोटा सा अनुभव है जो मनुष्य को ज्ञात है और जो परमात्मा की झलक दे सकता है। वह अनुभव प्रेम का अनुभव है। और जिसके जीवन में प्रेम की कोई झलक नहीं है उसके जीवन में परमात्मा के आने की संभावना नहीं है। न तो प्रार्थनाएं परमात्मा तक पहुंचा सकती हैं, न धर्मशास्त्र पहुंचा सकते हैं, न मंदिर, मस्जिद पहुंचा सकते हैं, न कोई संगठन हिंदू और मुसलमानों के, ईसाइयों के, पारसियों के पहुंचा सकते हैं।

प्रेम है द्वार प्रभु का

एक ही बात परमात्मा तक पहुंचा सकती है और वह यह है कि प्राणों में प्रेम की ज योति का जन्म हो जाए। मंदिर और मस्जिद तो प्रेम की ज्योति को बुझाने का काम करते हैं। जिन्हें हम धर्मगुरु कहते हैं, वे मनुष्य को मनुष्य से तोड़ने के लिए जहर फै लाते रहे हैं। जिन्हें हम धर्मशास्त्र कहते हैं, वे घृणा और हिंसा के आधार और माध्य म बन गए हैं। और जो परमात्मा तक पहुंचा सकता था वह प्रेम अत्यंत उपेक्षित होक र जीवन के रास्ते के किनारे अंधेरे में कहीं पड़ा रह गया है। इसलिए पांच हजार वष ों से आदमी प्रार्थनाएं कर रहा है, पांच हजार वर्षों से आदमी भजन पूजन कर रहा है , पांच हजार वर्षों से मस्जिदों और मंदिरों की मूर्तियों के सामने सिर टेक रहा है, लेि कन परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी, परमात्मा की कोई झलक मनुष्यता को उपलब्ध नहीं हो सकी, परमात्मा की कोई किरण मनुष्य के भीत र अवतरित नहीं हो सकी। कोरी प्रार्थनाएं हाथ में रह गई हैं और आदमी रोज रोज नीचे गिरता गया है, और रोज रोज अंधेरे में भटकता गया है। आनंद के केवल सपने हाथ मग रह गए हैं, सच्चाइयां अत्यंत दुखपूर्ण होती चली गयी हैं।

और आज तो आदमी करीब करीब ऐसी जगह खड़ा हो गया है जहां उसे यह खयाल भी लाना असंभव होता जा रहा है कि परमात्मा भी हो सकता है। क्या आपने कभी सोचा है कि यह घटना कैसे घट गई है? क्या नास्तिक इसके लिए जिम्मेदार हैं? या ि क लोगों की आकांक्षाएं और अभीप्साएं ही परमात्मा की दिशा की तरफ जाना बंद हो गई है? या कि वैज्ञानिक और भौतिकवादी लोगों ने परमात्मा के द्वार बंद कर दिए हैं? नहीं, परमात्मा के द्वार इसलिए बंद हो गए हैं कि परमात्मा का एक ही द्वार था प्रेम, और उस प्रेम की तरफ हमारा कोई ध्यान नहीं रहा है। और भी अजीब, कठिन और आश्चर्य की बात यह हो गई है कि तथाकथित धार्मिक लोगों ने मिल जुलकर प्रे म की हत्या कर दी और मनुष्य को जीवन में इस भांति सुव्यवस्थित करने की कोशि श की कि उसमें प्रेम की किरण के जन्म की कोई संभावना ही न रह जाए।

प्रेम के अतिरिक्त मुझे कोई रास्ता नहीं दिखाई पड़ता है जो प्रभु तक पहुंच सकता ह ो। और इतने लोग जो वंचित हो गए है प्रभु तक पहुंचने से, वह इसीलिए कि वे प्रेम तक पहुंचने से ही वंचित रह गए हैं। समाज की पूरी व्यवस्था अप्रेम की व्यवस्था है। परिवार का पूरा का पूरा केंद्र अप्रेम का केंद्र है। बच्चे के गर्भाधान (िंवदबमचजपवद) से लेकर उसकी मृत्यु तक की सारी यात्रा अप्रेम की यात्रा है। और हम इसी समाज को, इसी परिवार को, इसी गृहस्थी को सम्मान दिए जाते हैं, अदब दिए जाते हैं, श ोरगुल मचाए चले जाते हैं कि बड़ा पवित्र परिवार है, बड़ा पवित्र समाज है, बड़ा पि वत्र जीवन है। और यही परिवार, यही समाज और यही सभ्यता जिसके गुणगान कर ते हम थकते नहीं हैं मनुष्य को प्रेम से रोकने का कारण बन रही है। इस बात को थ ोड़ा समझ लेना जरूरी होगा।

मनुष्यता के विकास में कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई है। यह सवाल नहीं है कि ए काध आदमी ईश्वर को पा ले, कोई कृष्ण, कोई राम, कोई बुद्ध, कोई क्राइस्ट ईश्वर को उपलब्ध हो जाए, यह कोई सवाल नहीं है। अरबों खरबों लोगों में अगर एक आद

मी में ज्योति उतर भी आती हो तो यह कोई विचार करने की बात नहीं है। इसमें त ो कोई हिसाब रखने की जरूरत भी नहीं है। एक माली एक बगीचा लगाता है। उसने दस करोड़ पौधे उसे बगीचे में लगाए हैं और एक पौधे में एक अच्छा सा फूल आ ज ाए तो माली की प्रशंसा करने कौन आएगा? कौन कहेगा कि माली तू बहुत कुशल है कि तूने जो बगीचा लगाया है, वह बहुत अदभुत है? देख, दस करोड़ वृक्षों में एक फूल खिल गया है! नहीं, हम कहेंगे यह माली की कुशलता का सबूत नहीं है। माली की भूल चूक से कोई खिल गया होगा, अन्यथा बाकी सारे पेड़ खबर दे रहे हैं कि मा ली कितना कुशल है! यह माली के बावजूद खिल गया होगा। माली ने कोशिश की ह ोगी कि न खिल पाए क्योंकि सारे पौधे तो खबर दे रहे हैं कि माली के फूल कैसे खि ले हुए हैं।

खरबों लोगों के बीच कोई एकाध आदमी के जीवन में ज्योति जल जाती है और हम उसी का शोरगुल मचाते रहते हैं हजारों सालों तक! पूजा करते रहते हैं, उसी के मंि दर बनाते रहते हज, उसी का गुणगान करते रहते हैं। अब तक हम रामलीला कर र हे हैं, अब तक हम बुद्ध की जयंती मना रहे हैं। अब तक महावीर की पूजा कर रहे हज, अब तक क्राइस्ट के सामने घुटने टेके बैठे हुए हैं। यह किस बात का सबूत है? यह बात का सबूत है कि पांच हजार साल में पांच छह आदमियों के अतिरिक्त आदि मयत के जीवन में परमात्मा का कोई संपर्क नहीं हो सकता। नहीं तो कभी का हम भूल गए होते राम को, कभी के भूल गए होते बुद्ध को, कभी का हम भूल गए होते महावीर को महावीर को हुए ढाई हजार साल हो गए। ढाई हजार साल में कोई आद मी हनीं हुआ कि महावीर को हम भूल सकते। महावीर को अभी तक याद रखना पड़ ा है। वह एक फूल खिला था, वह अब तक हमें याद रखना पड़ता है।

यह कोई गौरव की बात नहीं है कि हमें अब तक स्मृति है बुद्ध की, महावीर की, रा म की, मोहम्मद की, क्राइस्ट की या जरथुष्ट्र की। यह इस बात का सबूत है कि और आदमी होते ही नहीं कि उनको हम भूला सकें। बस दो चार इने गिने नाम अटके र ह गए हैं मनुष्य जाति की स्मृति में। और उन नामों के साथ भी हमने क्या किया है ि सवाय उपद्रव के, हिंसा के। और उनकी पूजा करने वाले लोगों ने क्या किया है सिवा य आदमी के जीवन को नर्क बनाने के। मंदिरों और मस्जिदों के पुजारियों और पूजा को ने जमीन पर जितनी हत्याएं की हैं, और जितना खून बहाया है और जीवन का ि जतना अहित किया है उतना किसी ने भी नहीं किया है। जरूर कहीं कोई बुनियादी भूल हो गई; नहीं तो इतने पौधे लगें और फूल न आए, यह बड़े आश्चर्य की बात है। कहीं जरूर भूल हो गई।

मेरी दृष्टि में प्रेम अब तक मनुष्य के जीवन का केंद्र नहीं बनाया जा सका, इसीलिए भूल हो गई है। और प्रेम केंद्र बनेगा भी नहीं क्योंकि जिन चीजों के कारण प्रेम जीवन का केंद्र नहीं बन रहा है, हम उन्हीं चीजों का शोर गुल मचा रहे हैं, आदर कर रहे हैं, सम्मान कर रहे हैं और उन्हीं चीजों को बढ़ावा दे रहे हैं। मनुष्य की जन्म से ले कर मृत्यु तक की यात्रा ही गलत हो गयी है। इस पर पुनर्विचार करना जरूरी है, अन

यथा सिर्फ हम कामनाएं कर सकते हैं और कुछ भी उपलब्ध नहीं हो सकता है। क्या आपको कभी यह बात खयाल में आयी है कि आपका परिवार प्रेम का शत्रु है? क्या आपको यह बात कभी खयाल में आयी है कि मनु से लेकर आज तक के सभी नीति कार प्रेम के विरोधी हैं? जीवन का केंद्र है परिवार और परिवार विवाह पर खड़ा कि या गया है जब कि परिवार प्रेम पर खड़ा होना चाहिए था। भूल हो गयी है, आदमी के सारे पारिवारिक विकास की भूल हो गयी है। परिवार निर्मित होना चाहिए प्रेम के केंद्र पर और परिवार निर्मित किया जा सकता है विवाह के केंद्र पर। इससे ज्यादा झूठी और गलत बात नहीं हो सकती। है।

प्रेम और विवाह का क्या संबंध है? प्रेम से तो विवाह निकल सकता है। लेकिन विवा ह से प्रेम नहीं निकलता और न ही निकल सकता है। इस बात को थोड़ा समझ लें त ो हम आगे बढ़ सकें। प्रेम परमात्मा की व्यवस्था है और विवाह आदमी की व्यवस्था है । विवाह सामाजिक संस्था है, प्रेम प्रकृति का दान है? विवाह, समाज, कानून नियमि त करता है, बनाता है। विवाह आदमी की ईजाद है, और प्रेम? प्रेम परमात्मा का दा न है। हमने सारे परिवार को विवाह के केंद्र पर खड़ाकर दिया है, प्रेम के केंद्र पर न हीं। हमने यह मान रखा है कि विवाह कर देने से दो व्यक्ति प्रेम की दुनिया में उतर जाएंगे। अदभुत झूठी बात है यह, और पांच हजार वर्षों में भी हमको इसका खयाल नहीं आ सका है। हम अदभुत अंधे हैं। दो आदमियों के हाथ बांध देने से प्रेम के पैदा हो जाने की कोई जरूरत नहीं है, कोई अनिवार्यता नहीं है। बल्कि सच्चाई यह है कि जो लोग बंधा हुआ अनुभव करते हैं, वे आपस में प्रेम कभी भी नहीं कर सकते।

प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता में। प्रेम का जन्म होता है स्वतंत्रता की भूमि में जहां कोई बंधन नहीं, जहां कोई जबरदस्ती हनीं, जहां कोई कानून नहीं। प्रेम तो व्यक्ति क ा अपना आत्मदान है, बंधन नहीं, जबरदस्ती नहीं। उसके पीछे कोई विवशता, कोई म जबूरी नहीं है। किंतु हम अविवाहित स्त्री या पुरुष के मन में, युवक और युवती के म न में उस प्रेम की पहली किरण का गला घोंटकर हत्या कर देते हैं, फिर हम कहते हैं कि विवाह से प्रेम पैदा होना चाहिए, और फिर जो प्रेम पैदा होता है, वह बिलकुल पैदा किया, (बनसजपअंजमक) होता है, कोशिश से लाया गया होता है। वह प्रेम वास् तविक नहीं होता, वह प्रेम सहजस्फूर्त (एचवदजंदमवने) नहीं होता है। वह प्रेम प्राणों से सहज उठता नहीं है, फैलता नहीं है। और जिसे हम विवाह से उत्पन्न प्रेम कहते हैं वह प्रेम केवल सहवास के कारण पैदा हुआ मोह होता है। प्राणों की झलक और प्राण ों का आकर्षण और प्राणों की विद्युत वहां अनुपस्थित होती है। और इस तरह से परि वार बनता है, और इस विवाह से पैदा हुआ परिवार और परिवार की पवित्रता की कथाओं का कोई हिसाब नहीं है। और परिवार की प्रशंसाओं, स्तुतियों की कोई गुनना नहीं है। और यही परिवार सबसे कुरूप संस्था साबित हुई है।

पूरी मनुष्य जाति को विकृत (ढमतअमतज) करने में, अधार्मिक करने में, हिंसक बना ने में प्रेम से शून्य परिवार सबसे बड़ी संस्था साबित हुई है। प्रेम से शून्य परिवार से ज यादा असुंदर और कुरूप (न्नहसल) कुछ भी नहीं है, वही अधर्म का अड्डा बना हुआ है

। जब हम एक युवक और युवती को विवाह में बांधते हज, बिना प्रेम के, बिना आंत रिक परिचय के, बिना एक दूसरे के प्राणों के संगीत के, तब हम केवल पंडित के मंत्र ों में और वेदी की पूजा में और थोथे उपक्रम में उनको विवाह से बांध देते हैं। फिर आशा करते हैं उनको साथ छोड़ ने के कि उनके जीवन में प्रेम पैदा हो जाएगा! प्रेम तो पैदा नहीं होता है, सिर्फ उनके संबंध कामुम (एमगनंस) होते हैं। क्योंकि प्रेम पैदा नहीं किया जा सकता है। हां, प्रेम पैदा हो जाए तो व्यक्ति साथ जुड़कर परिवार निम ाण जरूर कर सकता है। दो व्यक्तियों को परिवार के निर्माण के लिए जोड़ दिया जाए और फिर आशा की जाए कि प्रेम पैदा हो जाए, यह नहीं हो सकता है। और जब प्रे म पैदा नहीं होता है तो क्या परिणाम होते हैं आपको पता है?

एक परिवार में कलह है। जिसके हम गृहस्थी कहते हैं, वह संघर्ष, कलह, द्वेष ईर्ष्या और चौबीस घंटे उपद्रव का अड्डा बना हुआ है। लेकिन न मालूम हम कैसे अंधे हैं कि इसे देखते भी नहीं हैं। बाहर जब हम निकलते हैं मुस्कराते हुए निकलते हैं। सब घर के आंसू पोंछकर बाहर जाते हैं, पत्नी भी हंसती हुई मालूम पड़ती है, पति भी हंसत ा हुआ मालूम पड़ता है। लेकिन ये चेहरे झूठे हैं। दूसरों को दिखाई पड़ने वाले चेहरे हैं । घर भीतर के चेहरे बहुत आंसुओं से भरे हुए हैं। चौबीस घंटे कलह और संघर्ष में जीवन बीत रहा है। फिर इस कलह और संघर्ष के स्वाभाविक परिणाम भी होंगे ही। प्रेम के बिना किसी व्यक्ति के जीवन में आत्मतृप्ति उपलब्ध नहीं होती। प्रेम जो है, व ह व्यक्तित्व की तृप्ति का चरम बिंदु है। और जब प्रेम नहीं मिलता है तो व्यक्तित्व हमेशा अतृप्त, हमेशा अधूरा, बेचैन, तड़पता हुआ, मांग करता है कि मुझे पूर्ति चाहि ए। हमेशा बेचैन, तड़पता हुआ रह जाता है। यह तड़पता हुआ व्यक्तित्व समाज में अ नाचार पैदा करता है क्योंकि तड़पता हुआ व्यक्तित्व प्रेम को खोजने निकलता है। वि वाह से प्रेम नहीं मिलता तो वह विवाह के अतिरिक्त प्रेम को खोजने की कोशिश कर ता है। वेश्याएं पैदा होती हैं विवाह के कारण। विवाह है मूल, विवाह है जड़, वेश्याअ ों के पैदा करने की। और अब तक तो स्त्री वेश्याएं थीं और अब तो सभ्य मुल्कों में पुरुष वेश्याएं (ऊंसम चतवेजपजनजम) भी उपलब्ध हैं।

वेश्याएं पैदा होंगी क्योंकि परिवार में जो प्रेम उपलब्ध होना चाहिए था वह उपलब्ध हो रहा है। आदमी दूसरे घरों में झांक रहा है उस प्रेम के लिए। वेश्याएं होंगी, और अगर वेश्याएं रोक दी जाएगी तो दूसरे परिवार में पीछे के द्वारों से प्रेम के रास्ते निर्ि मत होंगे। इसीलिए तो सारे समाज ने यह तय कर लिया है कि कुछ वेश्याएं निश्चित कर दो ताकि परिवारों का आचरण सुरक्षित रहे। कुछ स्त्रियों को पीड़ा में डाल दो ताकि बाकी स्त्रियां पतिव्रता बनी रहें और सती सावित्री बनी रहे। लेकिन जो संस्थाएं ईजाद करी पड़ती हैं, जान लेना चाहिए कि वह पूरा समाज बुनियादी रूप से अनैति क होगा। अन्यथा ऐसी अनैतिक ईजाद की आवश्यकता नहीं थी। वेश्या पैदा होती हैं, अनाचार पैदा होता है, व्यभिचार पैदा होता है।, तलाक पैदा होते हैं। यदि तलाक न होता, न व्यभिचार होता, और न अनाचार होता तो घर एक चौबीस घंटे का मानसि क तनाव (:दगपमजल) बन जाता।

सारी दुनिया में पागलों की संख्या बढ़ती गई है। ये पागल परिवार के भीतर पैदा होते हैं। सारी दुनिया में स्त्रियां हिस्टीरिया (भलेजमतपं) और न्यूरोसिस (छमनतवेपे) से प ीड़ित हो रही हैं। विक्षिप्त, उन्माद से भरती चली जा रही है। बेहोश होती हैं, गिरती हैं, चिलाती हैं। पुरुष पागल होते चले जा रहे हैं। एक घंटे में जमीन पर एक हजार आत्महत्याएं हो जाती हैं और हम चिल्लाए जा रहे हैं—समाज हमारा बहुत महान है, ऋषि मुनियों ने निर्मित किया है! और हम चिल्लाए जा रहे हैं कि बहुत सोच समझ कर समाज के आधार रखे गए हैं! कैसे ऋषि मुनि और कैसे ये आधार? अभी एक घंटा मैं बोलूंगा तो इस बीच एक हजार आदमी कहीं छुरा मार लेंगे कहीं ट्रेन के नीचे लेट जाएंगे, कोई लहर पी लेगा। उन एक हजार लोगों की जिंदगी कैसी होगी, जो ह र घंटे मरने को तैयार हो जाते हैं? और यह मत सोचना कि वे जो नहीं मरते हैं बहु त सुखमय हैं। कुल जमा कारण यह है कि वे मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते। सुख का कोई भी सवाल नहीं है, असल मग मरने की हिम्मत नहीं जुटा पाते हैं तो जिए चले जाते हैं, धक्के खाए चले जाते हैं। सोचते हैं आज गलत है, तो कल ठीक हो जा एगा। परसों सब ठीक हो जाएगा। लेकिन मस्तिष्क उनके रुग्ण होते चले जाते हैं।
प्रेम के अतिरिक्त को आदमी कभी स्वस्थ नहीं हो सकता है। प्रेम जीवन में न हो तो मस्तिष्क रुग्ण होगा, चिंता से भरेगा, तनाव से भरेगा। आदमी शराब पीएगा, नशा क रेगा, कहीं जाकर अपने को भूल जाना चाहेगा। दुनिया में पढ़ती हुई शराब शराबियों के कारण नहीं है। परिवार ने उस हालत में ला दिया है लोगों को कि बिना बेहोश हु ए थोड़ी देर के लिए भी रास्ता मिलना मुश्किल हो गया है। तो लोग शराब पीते चले जाएंगे, लोग बेहोश पड़े रहेंगे, लोग हत्या करेंगे, लोग पागल होते जाएंगे। अमरीका में प्रतिदिन बीस लाख आदमी अपना मानसिक इलाज करवा रहे हैं, और ये सरकारी आंकड़े हैं, और आप तो भली भांति जानते हैं कि सरकारी आंकड़े कितने सही होते हैं! बीस लाख सरकार कहती है तो कितने लोग इलाज करा रहे होंगे, यह कहना मु श्कल है। और जो अमरीका की हालत है, वह सारी दुनिया की हालत है।
आधुनिक युग के मनस्तत्वविद यह कहते हैं कि करीब करीब चार आदमियों में से ती न आदमी एबनार्मल हो गए हैं, रुग्ण हो गए हैं, स्वस्थ नहीं हैं। जिस समाज में चार आदमियों में तीन आदमी मानसिक रूप से रुग्ण हो जाते हों उस मसाज के आधारों को उसकी बुनियादों को फिर से सोच लेना जरूरी है, नहीं तो कल चार आदमी भी रुग्ण हो जाएंगे और फिर सोचने वाले भी शेष नहीं रह जाएंगे। फिर बहुत मुश्किल हो जाएगी। लेकिन होता ऐसा है कि जब एक ही बीमारी से सारे लोग ग्रसित हो जाते हैं तो उस बीमारी का पता नहीं चलता। हम सब एक से रुग्ण, बीमार और परेशान हैं, तो हमें पता बिलकुल नहीं चलता है। सभी ऐसे हैं इसीलिए स्वस्थ मालूम पड़ते हैं। जब जब सभी ऐसे हैं तो ठीक है। ऐसे दुनिया चलती है, यही जीवन है। जब ऐसी प ीड़ा दिखायी देती है तो हम ऋषि मुनियों के वचन दोहराते हैं कि वह तो ऋषि मुनि यों ने पहले ही कह दिया कि जीवन दुख है।

जीवन दुख नहीं है, यह दुख हम बनाए हुए हैं। वह तो पहले ही ऋषि मुनियों ने कह दिया है कि जीवन तो असार है, इससे छुटकारा पाना चाहिए! जीवन असार नहीं है, यह असार हमने बनाया हुआ है और जीवन से छुटकारा पाने की बातें दो कौड़ी ही हैं। क्योंकि जो आदमी जीवन से छुटकारा पाने की कोशिश करता है वह प्रभु को कभ ी उपलब्ध नहीं हो सकता है। क्योंकि जीवन प्रभु है, जीवन परमात्मा है, जीवन में पर मात्मा ही तो प्रकट हो रहा है। उससे जो दूर भागेगा वह परमात्मा से ही दूर चला जाएगा।

जब एक सी बीमारी पकड़ती है तो किसी को पता नहीं चलता है। पूरी आदमियत ज. ड से रुग्ण है इसलिए पता नहीं चलता तो दूसरी तरकीबें खोजते हैं इलाज की। मूल कारण (िंसपजल) जो है, बुनियादी कारण जो है उसको सोचते नहीं, ऊपर इलाज स ोचते हैं। ऊपरी इलाज भी क्या सोचते हैं? एक आदमी शराब पीने लगता है जीवन से घबरा कर। एक आदमी जाकर नृत्य देखने लगता है, वह वेश्या के घर बैठ जाता है जीवन से घबराकर। दूसरा सिनेमा में बैठ जाता है। तीसरा आदमी चुनाव लड़ने लग ता है ताकि भूल जाए सबको। चौथा आदमी मंदिरों में जाकर भजन कीर्तन करने लग ता है। यह भजन कीर्तन करने वाला भी खुद के जीवन को भूलने की कोशिश कर र हा है। यह कोई परमात्मा को पाने का रास्ता नहीं है। परमात्मा तो जीवन में प्रवेश से उपलब्ध होता है, जीवन से भागने से नहीं। यह सब पलायन (ऋेबंचम) हैं। एक आ दमी मंदिर में भजन कीर्तन कर रहा है, हिल डुल रहा है, हम कहते हैं कि भक्त जी बहुत आनंदित हो रहे हैं। भक्त जी आनंदित नहीं हो रहे हैं भक्त जी किसी दुख से भागे हुए हैं, वहां भुलाने की कोशिश कर रहे हैं। शराब का ही यह दूसरा रूप है। यह आध्यात्मिक नशा (चपतपजनंस पदजवगपबंजपवद) है। यह अध्यात्म के नाम से नयी शराबें हैं जो सारी दुनिया में चलती हैं।

इन लोगों ने जीवन से भाग कर जिंदगी को बदलने नहीं दिया आज तक। जिंदगी वहीं की वहीं, दुख से भरी हुई है। और जब भी कोई दुखी हो जाता है वह भी इनके पी छे चला जाता है कि हमको भी गुरुमंत्र दे दें, हमारा भी कान फूंक दें, कि हम भी इ सी तरह सुखी हो जाए, जैसे आप हो गए हैं। लेकिन यह जिंदगी क्यों दुख पैदा कर र ही है इसको देखने के लिए, इसके विज्ञान के खोजने के लिए कोई भी नहीं जाता है।

मेरी दृष्टि में जहां जीवन की शुरुआत होती है वहीं कुछ गड़बड़ हो गयी है। और वह गड़बड़ यह हो गयी है कि हमने मनुष्य जाति पर प्रेम की जगह विवाह को थोप दिय ा है। फिर विवाह होगा और ये सारे रूप पैदा होंगे। जब दो व्यक्ति एक दूसरे से बंध जाते हैं और उनके जीवन में कोई शांति और तृप्ति नहीं मिलती तो वे दोनों एक दूस रे पर क्रुद्ध हो जाते हैं। वे कहते हैं, तेरे कारण मुझे शांति नहीं मिल पा रही है। औ र वे एक दूसरे को सताना शुरू करते हैं, परेशान करना शुरू करते हैं और इसी हैरा नी, इसी परेशानी, इसी कलह के बीच बच्चों का जन्म होता है। ये बच्चे पैदाइश से ही विकृत (ढमतअमतजमक) हो जाते हैं।

प्रेम है द्वार प्रभु का

मेरी समझ में, मेरी दृष्टि में जिस दिन आदमी पूरी तरह आदमी के जन्म विज्ञान को विकसित करेगा तो शायद आपको पता लगे कि दुनिया में बुद्ध, कृष्ण और क्राइस्ट जैसे लोग शायद इसीलिए पैदा हो सके हैं कि उनके मां बाप ने जिस क्षण में संभोग किया था, उस समय वे अपूर्व प्रेम से संयुक्त हुए थे। प्रेम के क्षण में गर्भस्थापन (िंवदबमचजपवद) हुआ था। दुनिया में जो थोड़े से अदभुत लोग हुए—शांति, आनंदित, प्रभु को उपलब्ध, वे वही लोग हैं जिनका पहला अणु प्रेम की दीक्षा से उत्पन्न हुआ था, जिनको पहला जीवन अणु प्रेम में सराबोर पैदा हुआ था।

पति और पत्नी कलह से भरे हुए हैं, क्रोध से, ईर्ष्या से, एक दूसरे के प्रति संघर्ष से अहंकार से एक दूसरे की छाती पर चढ़े हुए हैं, एक दूसरे के मालिक बनना चाहे रहे हैं। इसी बीच उनके बच्चे पैदा हो रहे हैं। ये बच्चे किसी आध्यात्मिक जीवन में कैसे प्रवेश पाएंगे?

मैंने सुना है, एक घर में एक मां ने अपने बेटे और छोटी बेटी को—वे दोनों बेटे और बेटी बाहर मैदान में लड़ रहे थे, एक दूसरे पर घूंसेबाजी कर रहे थे—कहा कि अरे यह क्या करते हो। कितनी बार मैंने समझाया कि आपस में लड़ा मत करो, खेला करो। तो उसे लड़के ने कहा : हम लड़ नहीं रहे हैं, खेल रहे हैं, मम्मी डैडी का खेल कर रहे हैं। जो घर में रोज हो रहा है वह हम दोहरा रहे हैं।

यह खेल जन्म के क्षण से शुरू हो जाता है। इस संबंध में दो चार बातें समझ लेनी बहुत जरूरी हैं।

पहली बातें मेरी दृष्टि में, जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम के आधार पर मिलते हैं, उनका संभोग होता है, उनका मिलन होता है तो उस परिपूर्ण प्रेम के तल पर उनके शरीर ही नहीं मिलते हैं, उनके मनस भी मिलता है, उनकी आत्मा भी मिलती है। वे एक लयपूर्ण संगीत में डूब जाते हैं। वे दोनों विलीन हो जाते हैं और शायद, शायद परमात्मा ही शेष रह जाता है उस क्षण में। और उस क्षण जिस बच्चे का गर्भाधान होता है वह बच्चा परमात्मा को उपलब्ध हो सकता है, क्योंकि प्रेम के क्षण को पहला कदम उसके जीवन में उठा लिया है। लेकिन जो मां बाप, पति पत्नी आपस में द्वेष से भरे हैं, घृणा से भरे हैं, क्रोध से भरे हैं, कलह से भरे हैं वे भी मिलती हैं, लेकिन उनके शरीर ही मिलते हैं, उनकी आत्मा और प्राण नहीं मिलते और उनके शरीर के ऊपरी मिलन से जो बच्चे पैदा होते हैं वे अगर शरीरवादी (उंजमतपंसपेज) पैदा होते हों, बीमार और रुग्ण पैदा होते हों, और उनके जीवन में अगर कोई आत्मा की प्यास पैदा न होती हो, तो दोष उन बच्चों को मत देना।बहुत दिया जा चुका है यह दोष। दोष देना उन मां बाप को जिनकी छवि लेकर वह जन्मते हैं जिनका सब अपराध और जिनकी सब बीमारियां लेकर वे जन्मते हैं और जिनका सब क्रोध और घृणा लेकर वे जन्मते हैं। जन्म साथ ही उनका पौधा विकृत हो जाता है। फिर इनको पिलाओ गीता, इनको समझा ओ कुरान, इनसे कहो कि प्रार्थनाएं करो—सब झूठी हो जाती हैं, क्योंकि प्रेम का बीज ही शुरू नहीं हो सका तो प्रार्थनाएं कैसे शुरू हो सकती हैं?

जब एक स्त्री और पुरुष परिपूर्ण प्रेम और आनंद में मिलते हैं तो वह मिलन एक आध्यात्मिक कृत्य (चपतपजनंस ंबज) हो जाता है। फिर उसका काम (मग) से कोई संबंध नहीं है। वह मिलन फिर कामुक नहीं है, वह मिलन शारीरिक नहीं है, वह मिलन इतना अनूठा है, इतना महत्वपूर्ण, जितना किसी योगी की समाधि। उतना ही महत्वपूर्ण है वह मिलन जब दो आत्माएं परिपूर्ण प्रेम से संयुक्त होती हैं, और उतना ही पवित्र है वह कृत्य, क्योंकि परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्म देता है, और जीवन को गति देता है। लेकिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने, तथाकथित झूठे समाज ने, तथाकथित झूठे परिवार ने यही समझाने की कोशिश की है कि सेक्स, काम, यौन अपवित्र है, घृणित है। यह पागलपन की बातें हैं। अगर यौन घृणित और अपवित्र है तो सारा जीवन अपवित्र हो गया और घृणित हो गया। अगर सेक्स पाप है तो पूरा जीवन पाप हो गया, पूरा जीवन निदिंत (बवदकमउदमक) हो गया। और अगर जीवन ही परा निदिंत हो जाएगा तो कैसे प्रसन्न लोग उत्पन्न होंगे, कैसे सच्चे लोग अउपलब्ध होंगे? जब जीवन ही पूरा का पूरा पाप है तो सारी रात अंधेरी हो गई। अब इसमें प्रकाश की किरण कहीं से लानी पड़ेगी।

मैं आपको कहना चाहता हूं, एक नई मनुष्यता के जन्म के लिए सेक्स की पवित्रता, सेक्स की धार्मिकता स्वीकार करनी अत्यंत आवश्यक है क्योंकि जीवन उससे ही जन्मता है। परमात्मा उसी कृत्य से जीवन को जन्माता है। और परमात्मा ने जिसको जीवन की शुरुआत बनाया है वह कदापि पाप नहीं हो सकता है। लेकिन आदमी ने जरूर उसे पाप कर दिया है क्योंकि जो चीज प्रेम से रहित है वह पाप हो ही जाती है। जो चीज प्रेम से शून्य हो जाती है वह अपवित्र हो जाती है। आदमी की जिंदगी में प्रेम नहीं रहा इसलिए केवल कामुकता (एमगनंसपजल) रह गई है, सिर्फ यौन रह गया है।वह यौन पाप हो गया है। वह यौन का पाप नहीं है वह हमारे प्रेम के अभाव का पाप है और उसी पाप से सारा जीवन शुरू होता है। फिर ये बच्चे पैदा होते हैं, फिर ये बच्चे जन्मते हैं।

और स्मरण रहे, जो पत्नी अपने पति को प्रेम करती है उसके लिए पति परमात्मा हो जाता है। शास्त्रों के समझाने से नहीं होती यह बात। जो पति अपनी पत्नी से प्रेम करता है उसके लिए पत्नी भी परमात्मा हो जाती है, क्योंकि प्रेम किसी को भी परमात्मा बना देता है। जिनकी तरफ उसकी आंखें प्रेम से उठती हैं वही परमात्मा हो जाता है। परमात्मा का कोई और अर्थ नहीं है। प्रेम की आंख सारे जगत को धीरे धीरे परमात्मामय देखने लगती है। लेकिन जो एक को ही प्रेम से भरकर नहीं देख पाता और सारे जगत को ब्रह्ममय देखने की बातें करता है उसकी वे बातें झूठी हैं, उन बातों का कोई आधार और अर्थ नहीं है।

जिसने कभी एक को भी प्रेम नहीं किया उसके जीवन में परमात्मा की कोई शुरुआत नहीं हो सकती, क्योंकि प्रेम के ही क्षण में पहली दफा कोई व्यक्ति परमात्मा हो जाता है। वह पली झलक है प्रभु की। फिर उसी झलक को आदमी बढ़ाता है और एक दिन वही झलक पूरी हो जाती है। सारा जगत उसी रूप में रूपांतरित हो जाता है। लेि

कन जिसने पानी की कभी बूंद नहीं देखी और कहता है मुझे सागर चाहिए, कहता है पानी की बूंद से मुझे कोई मतलब नहीं, पानी की बूंद का मैं क्या करूंगा मुझे तो सागर चाहिए तो उससे हम कहेंगे, तूने पानी की बूंद भी नहीं देखी, पानी की बूंद भी नहीं पा सका और सागर पाने चल पड़ा है, तू पागल है। क्योंकि सागर और क्या है पानी की अनंत बूंदों के जोड़ के सिवाय? परमात्मा भी प्रेम की अनंत बूंदों का जोड़ है। प्रेम की अगर एक बूंद निदिंत है तो पूरा परमात्मा निदिंत हो गया। फिर झूठे परमात्मा खड़े होंगे, मूर्तियां खड़ी होंगी, पूजा पाठ हों, सब बकवास होगी लेकिन हमारे प्राणों का कोई अंत संबंध उससे नहीं हो सकता है।

और यह भी ध्यान में रख लेना जरूरी है कि कोई स्त्री अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेमी को प्रेम करती है तभी प्रेम के कारण, पूर्ण प्रेम के कारण ही वह ठीक अर्थों में मां बन पाती है। बच्चे पैदा कर लेने मात्र से कोई मां नहीं बन जाती। मां तो कोई स्त्री तभी बनती है और पिता तो कोई पुरुष तभी बनता है जब कि उन्होंने एक दूसरे को प्रेम किया हो। जब पत्नी अपने पति को प्रेम करती है, अपने प्रेम को प्रेम करती है तो बच्चे उसे अपने पति का पुनर्जन्म मालूम पड़ते हैं। वह फिर वही शक्ल है, फिर वही रूप हैं, फिर वही निर्दोष आंखें हैं जो उसके पति में छिपी थीं, वह फिर प्रकट हुई हैं। उसने अगर अपने पति को प्रेम किया है तो वह अपने बच्चे को प्रेम कर सकेगी। बच्चे को किया गया प्रेम प्रति को किए गए प्रेम की प्रतिध्वनि है। नहीं तो कोई बच्चे को प्रेम नहीं कर सकता है। मां बच्चे को प्रेम नहीं कर सकती, जब तक उसने अपने पति को न चाहा हो पूरे पूरे प्राणों से। क्योंकि वह बच्चे उसके प्रति की प्रतिकृतियां हैं, वह उसकी ही प्रतिध्वनियां हैं, यह पति ही फिर वापस लौट आया है। यह नया जन्म है उसके पति का। पति फिर पवित्र और नया होकर वापस लौट आया है। लेकिन पति के प्रति अगर प्रेम नहीं है तो बच्चे के प्रति प्रेम कैसे होगा? बच्चे उपेक्षित हो जाएंगे, हो गए हैं।

बाप भी तभी कोई बनता है जब अपनी पत्नी को इतना प्रेम करता है कि पत्नी भी उसे परमात्मा दिखायी देती है, तब बच्चा फिर उसकी पत्नी का ही लौटता हुआ रूप है। पत्नी को जब उसने पहली दहा देखा था तब वह जैसी निर्दोष थी, जब जैसी शांत थी, जब जैसी सुंदर था, तब उसकी आंखें जैसी झील की तरह थीं, इन बच्चों में फिर वहीं आंखें वापस लौट आई हैं। इन बच्चों में फिर वही चेहरा वापस लौट आया है। ये बच्चे फिर उसी छबि में नया होकर आ गए हैं। जैसे पिछले बसंत में फूल खिले थे, पिछले बसंत में पत्ते आए थे। फिर साल बीत गया पुराने पत्ते गिरे गए। फिर नयी कोंपलें निकल आयी हैं, फिर नए पत्तों से वृक्ष भर गया है। फिर लौट और आया बसंत, फिर नया हो गया है। लेकिन जिसने पिछले बसंत को ही प्रेम नहीं किया था वह इस बसंत को कैसे प्रेम कर सकेगा?

जीवन निरंतर लौट रहा है। निरंतर जीवन का पुनर्जन्म चल रहा है। रोज नया होता चला जाता है, पुराने पत्ते गिर जाते हैं, नए आ जाते हैं। जीवन की सृजनात्मक (बतमंजपअपजल) ही तो परमात्मा है, यही तो प्रभु है। जो इसको पहचानेगा वही तो उसे

पहचानेगा। लेकिन न मां बच्चे को प्रेम कर पाती है, न पिता बच्चे को प्रेम कर पात
ा है। और जब मां और बाप बच्चे को प्रेम नहीं कर पाते हैं तो बच्चे जन्म से ही पाग
ल होने के रास्ते पर संलग्न हो जाते हैं। उनको दूध मिलता है, कपड़े मिलते हैं, मका
न मिलते हैं लेकिन प्रेम नहीं मिलता है। प्रेम कि बिना उनको परमात्मा नहीं मिल स
कता है और सब मिल सकता है।
अभी रूस का एक वैज्ञानिक बंदरों के ऊपर कुछ प्रयोग करता था। उसने कुछ नकली
बंदरिया बनायीं। नकली बिजली के यांत्रिक हाथ पैर उनके, बिजली के तारों का ढांचा
। जो बंदर पैदा हुए उनको नकली माताओं के पास कर दिया गया। नकली माताओं
से वे चिपक गए। वे पहले दिन के बच्चे, उनको कुछ पता नहीं कि कौन असली है,
कौन नकली। वे नकली मां के पास ले जाए गए। पैदा होते ही उसकी छाती से जाकर
 चिपके रहते हैं। वह मशीनी बंदरिया है, वह हिलती रहती है, बच्चे समझते हैं कि
मां उनको हिला डुला कर झुला रही है। ऐसे बीस बंदर के बच्चों को नकली मां के प
ास पाला गया और उनको अच्छा दूध दिया गया। मां ने उनको अच्छी तरह हिलाया
डुलाया, मां कूदती फांदती सब करती। बच्चे स्वस्थ दिखाई पड़ते थे। फिर वे बड़े भी
हो गए। लेकिन वे सब बंदर पागल निकले, वे सब असामान्य (:इदवतउं) साबित हुए।
 उनको दूध मिला, उनका शरीर अच्छा हो गया लेकिन उनका व्यवहार विक्षिप्त हो ग
या। वैज्ञानिक बड़े हैरान हुए कि इनको क्या हुआ? इनको सब तो मिला, फिर ये वि
क्षप्त कैसे हो गए?
एक चीज, जो वैज्ञानिक की लेबोरेटरी में नहीं पकड़ी जा सकी थी वह उनको नहीं मि
ली। प्रेम उनको नहीं मिला। जो उन बीस बंदरों की हालत हुई वही साढ़े तीन अरब
मनुष्यों की हो रही है। झूठी मां मिलती है, झूठा बाप मिलता है। नकली मां हिलती
रहती है, नकली बात हिलता रहता है और ये बच्चे विक्षिप्त हो जाते हैं। और हम
कहते हैं कि ये शांत नहीं होते, अशांत होते चले जाते हैं। ये छुरेबाजी करते हैं, ये ल
डकियों पर एसिड फेंकते हैं, ये कालेज में आग लगाते हैं, ये बस पर पत्थर फेंकते हैं,
 ये मास्टर को मारते है। मारेंगे। मारे बिना इनको रास्ता नहीं। अभी थोड़ा थोड़ा मार
ते हैं, कल और ज्यादा मारेंगे। और तुम्हारे कोई शिक्षक,तुम्हारे कोई नेता, तुम्हारे को
ई धर्मगुरु इनको नहीं समझा सकेंगे। क्योंकि सवाल समझाने का नहीं है आत्मा ही रुग
ण पैदा हो रही है। यह रुग्ण आत्मा प्यास पैदा करेगी, यह चीजों को तोड़ेगी, मिटेगी।
 तीन हजार साल से जो बात चलती थी वह अब चरम परिणति (बसपउंग) पर पहुं
च रही है। सौ डिग्री तक हम पानी को गरम करते हैं, पानी भाप बनकर उड़ जाता
है, निन्यानबे डिग्री तक पानी बना रहता है फिर सौ डिग्री पर भाप बनने लगता है।
सौ डिग्री पर पहुंच गया है आदमियत का पागलपन। अब वह भाप बनकर उड़ना शुरू
 हो रहा है। मत चिल्लाइए, मत परेशान होइए! बनने दीजिए भाप और उपदेश देते
रहिए, और आपके साधु संत समझाया करें अच्छी अच्छी बातें, और गीता की टीकाएं
 करते रहें। करते रहो प्रवचन, और टीका गीता पर, और दोहराते रहो पुराने शब्दों
को। यह भाप बननी बंद नहीं होगी। यह भाप बनती तब बंद होगी जब जीवन की पूर

ी प्रक्रिया को हम समझेंगे। समझेंगे कि कहीं कोई भूल हो रही है, कहीं कोई भूल गई है। और वह कोई आज की भूल हनीं है। चार पांच हजार साल की भूल है। शिखर (बसपउंग) पर पहुंच गई है इसलिए मुश्किल खड़ी हुई जा रही है।
ये प्रेम से रिक्त बच्चे जन्मते हैं और फिर प्रेम से रिक्त हवा में ही पाले जाते हैं। फिर वही नाटक ये दोहराएगा और फिर मम्मी और डैडी का पुराना खेल! वे बड़े हो जाएंगे, और फिर वही पुराना नाटक दोहराएंगे—विवाह में बांधे जाएंगे, क्योंकि समाज प्रेम को आज्ञा नहीं देता। न मां पसंद करती है कि मेरी लड़की किसी को प्रेम करे। न बाप पसंद करते हैं कि मेरा बेटा किसी को प्रेम करे। न समाज पसंद करता है कोई किसी को प्रेम करे। प्रेम तो होना ही नहीं चाहिए। प्रेम तो पाप है। वह तो बिलकुल ही योग्य बात नहीं है। विवाह होना चाहिए। फिर प्रेम नहीं होगा। फिर विवाह होगा। और पहिया वैसा का वैसा ही घूमता रहेगा।
आप कहेंगे कि जहां प्रेम होता है वहां भी कोई बहुत अच्छी हालत नहीं मालूम होती। नहीं मालूम होगी। क्योंकि प्रेम को आप जिस भांति मौका देते हैं उसमें प्रेम एक चोरी की तरह होता है, प्रेम एक सीक्रेसी की तरह होता है। प्रेम करने वाला डरते हुए प्रेम करते हैं। घबराएं हुए प्रेम करते हैं। चोरों की तरह प्रेम करते हैं, अपराधी की तरह प्रेम करते हैं। सारा समाज उनके विरोध में है, सारे समाज की आंखें उन पर लगी हुई हैं। सारे समाज के विद्रोह में वे प्रेम करते हैं। यह प्रेम भी स्वस्थ नहीं है, क्योंकि प्रेम के लिए स्वस्थ हवा नहीं है। इसके परिणाम भी अच्छे नहीं हो सकते।
प्रेम के लिए समाज को हवा पैदा करनी चाहिए। मौका पैदा करना चाहिए। अवसर पैदा करना चाहिए। प्रेम की शिक्षा दी जानी चाहिए, दीक्षा दी जानी चाहिए। प्रेम की तरफ बच्चों को विकसित किया जाना चाहिए क्योंकि वही उनके जीवन का आधार बनेगा, वही उनके पूरे जीवन का केंद्र बनेगा। उसी केंद्र से उनका जिन विकसित होगा। लेकिन उसकी कोई बात ही नहीं है, उससे हम दूर खड़े रहते हैं, आंखें बंद किए खड़े रहते हैं। न मां बच्चे से प्रेम की बात करती है, न बाप। न उन्हें कोई सिखाता है कि प्रेम हो तब तक तुम मत विवाह करना, क्योंकि वह विवाह गलत होगा, झूठा होगा, पाप होगा, वह सारी कुरूपता की जड़ होगी और सारी मनुष्यता को पागल करने का कारण होगा।
अगर मनुष्य जाति को परमात्मा के निकट लेना है तो पहला काम परमात्मा की बात मत करिए। मनुष्य जाति को प्रेम के निकट ले आइए। जीवन जोखिम के काम में है। न मालूम कितने खतरे हो सकते हैं। जीवन की बनी बनायी व्यवस्था में, न मालूम कितने परिवर्तन करने पड़ सकते हैं। लेकिन मत करिए परिवर्तन, यह समाज अपने ही हाथ मौत के किनारे पहुंच गया है इसलिए स्वयं मर जाएगा। यह बच नहीं सकता। प्रेम से रिक्त लोग ही युद्धों को पैदा करते हैं प्रेम से रिक्त लोग ही अपराधी बनते हैं। प्रेम से रिक्तता ही अपराध (बतपउपदंसपजल) की जड़ है, और सारी दुनिया में अपराधी फैलते चले जाते हैं।

जैसा मैंने आपसे कहा कि अगर किसी दिन जन्म विज्ञान पूरा विकसित होगा तो हम शायद पता लगा पाए कि कृष्ण का जन्म किन स्थितियों में हुआ। किस समस्वरता (भं तउवदल) में, कृष्ण के मां बाप ने किस प्रेम के क्षण में गर्भस्थापन (बवदबमचजपवद) किया इस बच्चे का, प्रेम के किस क्षण में यह बच्चा अवतरित हुआ, तो शायद हमें दूसरी तरफ यह भी पता चल जाए कि हिटलर किस अप्रेम के क्षण में पैदा हुआ होगा। मुसोलिनी किस क्षण पैदा हुआ होगा। तैमूरलंग, चंगेज खां किस अवसार पर पैदा हुए होंगे। हो सकता है कि यह पता चले कि चंगेज खां संघर्ष, घृणा और क्रोध से भरे मां बाप से पैदा हुआ हो। जिंदगी भर वह क्रोध से भरा हुआ है। वह जो क्रोध का मालिक वेग (वतपहदंस उवउमदजनउ) है वह उसको जिंदगी भर दौड़ाए चला जा रहा है। चंगेज खां जिस गांव में गया लाखों लोगों को कटवा दिया। तैमूरलंग जिस राजधानी में जाता दस दस हजार बच्चों को गर्दनें कटवा देता है। भाले में छिदवा देता। जुलूस निकालता तो दस हजार बच्चों की गर्दनें लटकी हुई होती भालों के ऊपर, पीछे तैमूर चलता, लोग पूछते, यह तुम क्या करते हो? तो वह कहता: ताकि लोग याद रखें कि तैमूर कभी इस नगरी में आया था। इस पागल को याद रखवाने की और कोई बात याद नहीं पड़ती थी! हिटलर ने जर्मनी मग साठ लाख यहूदियों की हत्या की। पांच सौ यहूदी रोज मारता रहा। स्टैलिन ने रूस में सात लाख लोगों की हत्या की। जरूर इनके जन्म के साथ कोई गड़बड़ हो गई। जरूर ये जन्म के साथ ही पागल पैदा हुए। उन्माद (छमनतवेपे) इनके जन्म के साथ इनके खून में आया और फिर वह फैलता चला गया। और पागलों में बड़ी ताकत होती है। पागल कब्जा कर लेते हैं और पागल दौड़कर हावी हो जाते हैं—धन पर, पद पर यश पर। और फिर सारी दुनिया को विकृत करते हैं क्योंकि वे ताकतवर होते हैं।

यह जो पागलों ने दुनिया बनायी है यह दुनिया तीसरे महायुद्ध के करीब आ गयी है। सारी दुनिया मरेगी। पहले महायुद्ध में साढ़े तीन करोड़ लोगों की हत्या की गयी, दूसरे महायुद्ध में साढ़े सात करोड़ लोगों की हत्या की गयी। अब तीसरे में कितनी की जाएगी? मैंने सुना है—जब आइंस्टीन मर कर भगवान के घर पहुंचा तो भगवान के घर पहुंचा तो भगवान ने उससे कहा कि मैं बहुत घबराया हुआ हूं। क्या तुम तुझे तीसरे महायुद्ध के संबंध में कुछ बताओगे? क्या होगा? उसने कहा, तीसरे महायुद्ध के बावत कहना मुश्किल है, चौथे के संबंध में कुछ जरूर बता सकता हूं। भगवान ने कहा: तीसरे के बाबत नहीं बता सकते, चौथे के बाबत कैसे बताओगे? आइंस्टीन ने कहा, एक बात बता सकता हूं चौथे के बाबत, कि चौथा महायुद्ध कभी नहीं होगा क्योंकि तीसरे में सब आदमी समाप्त हो जाएंगे। चौथे के होने की कोई संभावना नहीं है क्योंकि यह करने वाले ही नहीं बचेंगे। तीसरे के बाबत कुछ भी कहना मुश्किल है कि ये साढ़े तीन अरब पागल आदमी क्या करेंगे? कुछ नहीं कहा जा सकता कि क्या स्थिति होगी।

प्रेम से वियुक्त मनुष्यमात्र एक दुर्घटना है, मैं यही निवेदन करना चाहता हूं। वैसे मेरी बातें बड़ी अजीब लगी होंगी लगी होंगी आपको क्योंकि ऋषि मुनि इस तरह की बा

तें करते ही नहीं। मेरी बात बहुत अजीब लगी होगी आपको। शायद यहां आते समय आपने सोचा होगा कि मैं भजन कीर्तन का कोई नुस्खा बताऊंगा। आपने सोचा होगा ि क मैं कोई माला फेरने की तरकीब बताऊंगा। आपने सोचा होगा कि मैं कोई आपको तावीज दे दूंगा जिसको बांधकर आप परमात्मा से मिल जाएंगे, नहीं, ऐसी कोई बात मैं आपको नहीं बता सकता हूं। ऐसे बताने वाले सब बेईमान हैं, धोखेबाज हैं । समा ज को उन्होंने बहुत बर्बाद किया है। समाज की जिंदगी को समझने के लिए मनुष्य के पूरे विज्ञान को समझना जरूरी है। परिवार को, दंपति को, समाज को—उसकी पूरी व यवस्था को समझना जरूरी है कि कहां क्या गड़बड़ हुई है। अगर सारी दुनिया यह त य कर ले कि हम पृथ्वी को एक प्रेम का घर बनाएगे, झूठे विवाह का नहीं। वैसे प्रेम से विवाह निकले वह अलग बात है। जितनी कठिनाइयां होंगी, मुश्किल होंगी, अव्यवस् था होगी उसको सम्हालने का हम कोई उपाय खोजेंगे, उस पर विचार करेंगे लेकिन दु निया से हम यह अप्रेम का जो जाल है उसको तोड़ देंगे और प्रेम की एक दुनिया बन ाएंगे तो शायद पूरी मनुष्य जाति बच सकती है और स्वस्थ हो सकती है।

मैं यह भी कहना चाहता हूं कि अगर सार जगत में प्रेम के केंद्र पर परिवार बन जाए तो जो कल्पना हजारों वर्षों से रही है, आदमी को महामानव (नचमतउंद) बनाने की , वह जो नीत्से कल्पना करता है और अरविंदा कल्पना करते हैं, वह कल्पना पूरी हो सकती है। लेकिन न तो अरविंद की प्रार्थनाओं से और न नीत्से के द्वारा पैदा किए गए फैसिज्म से वह सपना पूरा हो सकता है। अगर पृथ्वी पर हम प्रेम की प्रतिष्ठा को वापस लौट लाए। अगर प्रेम जीवन में वापस लौट आए, सम्मानित हो जाए और प्रेम एक आध्यात्मिक मूल्य ले ले तो नए मनुष्य का निर्माण हो सकता है—नयी संतति क ा, नयी पीढ़ियों का, नए आदमी का। और वह आदमी, वह बच्चा, वह भ्रम जिसका पहला अणु प्रेम से जन्मेगा विश्वास किया जा सकता है, आश्वासन दिया जा सकता है कि उसकी अंतिम श्वास परमात्मा में निकलेगी।

प्रेम है प्रारंभ, परमात्मा है अंत। वह अंतिम सीढ़ी है। जो प्रेम को ही नहीं पता है वह परमात्मा को तो पा ही नहीं सकता, यह असंभावना है। लेकिन जो प्रेम में दीक्षित ह ो जाता है और प्रेम में विकसित हो जाता है, और प्रेम के प्रकाश में चलता है और प्रेम के फूल जिसकी श्वास बन जाते हैं, और प्रेम जिसका अणु-अणु बन जाता है और जो प्रेम में बढ़ता जाता है, एक दिन वह पाता है कि प्रेम की जिस गंगा में वह चल ा था वह गंगा अब किनारे छोड़ रही है और सागर बन रही है। एक दिन वह पाता है, कि गंगा के किनारे मिटते जाते है और अनंत सागर आ गया सामने। छोटी सी गं गा की धारा थी गंगोत्री में, छोटी सी प्रेम की धारा होती है शुरू में। फिर वह बढ़ती है, फिर वह बड़ी होती है, फिर वह पहाड़ों और मैदानों को पार करती है। और एक वक्त आता है कि किनारे छूटने लगते हैं। जिस दिन प्रेम के किनारे छूट जाते हैं उस ी दिन प्रेम परमात्मा बन जाता है। जब तक प्रेम के किनारे होते हैं तब तक वह पर मात्मा नहीं होता। गंगा, नदी रहती है जब तक वह इस जमीन के किनारे से बंधी हो

ती है फिर किनारे छूटते हैं और सागर से मिल जाती है। फिर वह सागर ही हो जात
ी है।

प्रेम की सरिता है और परमात्मा का सागर है। लेकिन हम प्रेम की सरिता ही नहीं हैं
हम प्रेम की नदिया ही नहीं हैं, और हम बैठे हैं हाथ जोड़े और प्रार्थनाएं कर रहे हैं
कि हमको भगवान चाहिए! जो सरिता नहीं है वह सागर को कैसे पाएगा? सारी मनुष
य जाति के लिए पूरा आंदोलन चाहिए। पूरी मनुष्य जाति के आमूल परिवर्तन की ज
रूरत है। पूरा परिवार बदलने की जरूरत है। बहुत कुरूप है हमारा परिवार। वह बहु
त सुंदर हो सकता है लेकिन केवल प्रेम के केंद्र पर ही। पूरे समाज को बदलने की ज
रूरत है और तभी एक धार्मिक मनुष्यता पैदा हो सकती है।

प्रेम प्रथम, परमात्मा अंतिम। क्यों प्रेम परमात्मा पर पहुंच जाता है? क्योंकि प्रेम है ब
ीज और परमात्मा है वृक्ष। प्रेम का बीज ही फिर फूटता है और वृक्ष बन जाता है। स
ारी दुनिया की स्त्रियों से मेरा कहने का यह मन होता है, और खासकर स्त्रियों से, क
योंकि पुरुष के लिए प्रेम और बहुत सी जीवन की दिशाओं में एक दिशा है जब कि स
त्री के लिए प्रेम अकेली दिशा है। पुरुष के लिए प्रेम और बहुत से आयामों में एक आ
याम है। उसके और के लिए प्रेम और बहुत से जीवन आयामों में एक आयाम है उस
के और भी आयाम हैं व्यक्तित्व के, लेकिन स्त्री का एक ही आयाम, एक ही दिशा है
और वह है प्रेम। स्त्री पूरी प्रेम है। पुरुष प्रेम भी है और दूसरी चीज भी है। अगर स
त्री का प्रेम विकसित हो और वह समझे प्रेम की कीमिया, प्रेम की रसायन तो वह ब
च्चों को दीक्षा दे सकती है प्रेम की। और गति दे सकती हैं प्रेम के आकाश में उठने
की। उनके पंखों को वह मजबूत कर सकती है। लेकिन अभी तो हम काट देते हैं पंख
। विवाह की जमीन पर सरको! प्रेम के आकाश में मत उड़ना! जरूर आकाश में उड़
ना जोखिम होता है और जमीन पर चलना आसान है। लेकिन जो जोखिम नहीं उठाते
हैं वे जमीन पर रेंगने वाले कीड़े हो जाते हैं और जो जोखिम उठाते हैं वे दूर अनंत
आकाश में उड़ने वाले बाज पक्षी सिद्ध होते हैं।

आदमी रेंगता हुआ कीड़ा हो गया है क्योंकि हम सिखा रहे हैं, कोई भी जोखिम (त्तप
ो) न उठाना, कोई खतरा (क्ंदहमत) मत उठाना! अपने घर का दरवाजा बंद करो अ
ौर जमीन पर सरको! आकाश मग मत उड़ना! जबकि होना यह चाहिए कि हम प्रेम
की जोखिम सिखाए, प्रेम का खतरा सिखाए, प्रेम का अभय सिखाए और प्रेम के आक
ाश में उड़ने के लिए उनके पंखों को मजबूत करें और चारों तरफ जहां भी प्रेम पर ह
मला होता हो उसके खिलाफ खड़े हो जाए, प्रेम को मजबूत करें, ताकत दें।

प्रेम के जितने दुश्मन खड़े हैं, दुनिया में उनमें नीतिशास्त्री भी हैं, हालांकि थोथे हैं वे
नीतिशास्त्री, क्योंकि प्रेम के विरोध में जो हो वह क्या खाक नीतिशास्त्री होगा! साधु
संन्यासी खड़े हैं प्रेम के विरोध में, क्योंकि वे कहते हैं कि सब पाप है, यह सब बंधन
है, इसको छोड़ो और परमात्मा की तरह चलो। हद हो गई। जो आदमी कहता है कि
प्रेम को छोड़कर परमात्मा की तरफ चलो, वह परमात्मा का शत्रु है, क्योंकि प्रेम के
अतिरिक्त तो परमात्मा की तरफ जाने का कोई रास्ता ही नहीं है। बड़े बूढ़े भी खड़े

हैं प्रेम के विपरीत क्योंकि उनका अनुभव कहता है कि प्रेम खतरा है। लेकिन अनुभव लोगों से जरा सावधान रहना क्योंकि जिंदगी में कभी कोई नया रास्ता वे नहीं बनने देते। वे कहते हैं कि पुराने रास्ते का हमें अनुभव है, हम पुराने रास्ते पर चले हैं, उस ी पर सबको चलना चाहिए। लेकिन जिंदगी को रोज नया रास्ता चाहिए। जिंदगी रेल की पटरियों पर दौड़ती हुई रेलगाड़ी नहीं है कि बनी पटरियां पर दौड़ती रहे। और अ गर दौड़ेगी तो एक मशीन हो जाएगी। जिंदगी तो एक सरिता है जो रोज एक नया र ास्ता बना लेती है—पहाड़ों में, मैदानों में, जंगलों में। अनूठे रास्ते से निकली है, अनजा न जगत में प्रवेश करती है और सागर तक पहुंच जाती है।

नारियों के सामने आज एक ही काम है। वह काम यह नहीं है कि अनाथ बच्चों को पढ़ा रहीं है बैठकर। तुम्हारे बच्चे भी तो सब अनाथ हैं। नाम के लिए वे तुम्हारे बच्चे हैं। न उनकी मां है, न उनका बाप। समाज सेवक स्त्रियां सोचती हैं कि अनाथ बच्चों का अनाथालय खो दिया तो बहुत बड़ा काम कर दिया। उनको पता नहीं कि उनके बच्चे भी अनाथ ही हैं। तुम दूसरों के अनाथ बच्चे को शिक्षा देने जा रही हो तो पाग ल हो। तुम्हारे बच्चे खुद अनाथ (वतचींदस) हैं। कोई नहीं हैं उनका, न तुम हो, न तुम्हारे पति। न उनकी मां है और न उनको कोई है, क्योंकि वह प्रेम ही नहीं है जो उनको सनाथ बनाता। सोचते हैं हम आदिवासी बच्चों को जाकर शिक्षा दे दें। वहां तु म जाकर आदिवासी बच्चों को शिक्षा दो और यहां तुम्हारे बच्चे धीरे-धीरे आदिवासी हुए चले जा रहे हैं! ये जो बीटल हैं, बीटनिक हैं, फलां हैं ढिकां हैं, फिर से आदमी के आदिवासी होने की शकलें हैं। तुम सोचते हो, स्त्रियां सोचती हैं कि जाए और सेवा करें। जिस समाज में प्रेम नहीं है उस समाज में सेवा कैसे हो सकती है? सेवा तो प्रे म की सुगंध है।

बस आज तो यही कहना चाहूंगा। आज तो सिर्फ एक धक्का आपको दे देना चाहूंगा त ाकि आपके भीतर चिंतन शुरू हो जाए। हो सकता है मेरी बातें आपको बुरी लगें। ल गें तो बहुत अच्छा है। हो सकता है मेरी बातों से आपको चोट लगे, तिलमिलाहट पैद ा हो। भगवान करें जितनी ज्यादा हो जाए उतना अच्छा, क्योंकि उससे कुछ सोच वि चार पैदा होगा। हो सकता है मेरी सब बातें गलत हों इसलिए मेरी बात मान लेने क ी कोई भी जरूरत नहीं है, लेकिन मैंने जो कहा है उस पर आप सोचना। मैं फिर दोह रा देता हूं उन दो चार सूत्रों को और अपनी बात पूरी किए देता हूं।

आज तक का मनुष्य का समाज प्रेम के केंद्र पर निर्मित नहीं है इसी लिए विक्षिप्त है, पागलपन है, युद्ध हैं, आत्माएं हैं, अपराध हैं। प्रेम की जगह आदमी के एक झूठा स्थ ानापन्न (ढेमनकव`नइेजपजनजम) विवाद ईजाद कर लिया है। विवाह के कारण वेश्या एं हैं, गुंडे हैं। विवाह के कारण शराब है, विवाह के कारण बेहोशिया है। विवाह के कारण भागे हुए संन्यासी हैं। विवाह के कारण मंदिरों में भजन करने वाले झूठे लोग हैं । जब तक विवाह है तब तक यह रहेगा। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि विवाह मिट जा ए, मैं यह कह रहा हूं कि विवाह प्रेम से निकले। विवाह से प्रेम नहीं निकलता है, प्रेम से विवाह निकले तो शुभ है। विवाह से यदि प्रेम की निकालने की कोशिश भी की

जाए तो वह प्रेम झूठा होगा, क्योंकि जबरदस्ती कभी भी कोई प्रेम नहीं निकाला जा सकता है। प्रेम तो निकलता है या नहीं निकलता है। जबरदस्ती नहीं निकाला जा सक ता है।

तीसरी बात मैंने यह कहीं कि जो मां बाप प्रेम से भरे हुए नहीं हैं उनके बच्चे जन्म से ही विकृत (ढमतअमतजमक) एग्नार्मल, रुग्ण और बीमार पैदा होंगे। मैंने यह भी कहा कि जो मां बाप, जो पति पत्नी, जो प्रेम युगल प्रेम से संभोग में लीन नहीं होते हैं वे केवल उन बच्चों को पैदा करेंगे जो शरीरवादी होंगे, भौतिकवादी होंगे जिनकी जीवन की आंख पदार्थ से ऊपर कभी नहीं उठेगी, जो परमात्मा को देखने के लिए अं धे पैदा होंगे। आध्यात्मिक रूप से अंधे बच्चे हम पैदा कर रहे हैं।

मैंने चौथी बात आपसे यह कही कि मां बाप अगर एक दूसरे को प्रेम करते हैं तो ह ी वे बच्चों की मां बनेंगी, बाप बनेंगे क्योंकि बच्चे उनकी ही प्रतिध्वनियां हैं, वे आया हुआ नया बसंत हैं, वे फिर से जीवन के दरख्त पर लगी हुई कोंपलें हैं। लेकिन जिस ने पुराने बसंत का ही प्रेम नहीं किया वह नए बसंत को कैसे प्रेम करेगा?

और अंतिम बात मैंने यह कि प्रेम शुरुआत है और परमात्मा शिखर। प्रेम में जीवन शु रू हो तो परमात्मा में पूर्ण होता है। प्रेम बीज बने तो परमात्मा अंतिम वृक्ष की छाया बनता है। प्रेम गंगोत्री हो तो परमात्मा का सागर उपलब्ध होता है।

जिसके भी मन की कामना हो कि परमात्मा तक जाए वह अपने जीवन को प्रेम के ग ीत से भर ले। और जिसकी भी आकांक्षा हो कि पूरी मनुष्यता परमात्मा के जीवन से भर जाए, वह मनुष्यता को प्रेम की तरफ ले जाने के मार्ग पर जितनी बाधाएं हों उ नको तोड़े, मिटाए और प्रेम को उन्मुक्त आकाश दे ताकि एक दिन नए मनुष्य का जन म हो सके।

पुराना मनुष्य रुग्ण था, कुरूप था, अशुभ था। पुराने मनुष्य ने अपने आत्मघात का इंत जाम कर लिया है। वह आत्महत्या कर रहा है। सारे जगत में वह एक साथ आत्मघा त कर लेगा। जागतिक आत्मघात। (न्नदपअमतेंस एनपबपकम) का उसने उपाय कर ि लया है। लेकिन अगर मनुष्य को बचाना है तो प्रेम की वर्षा, प्रेम की भूमि और प्रेम के आकाश को निर्मित कर लेना जरूरी है।